मय्यषी नदी के किनारे

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

मय्यषी नदी के किनारे

एम. मुकुन्दन

अनुवाद
सुधांशु चतुर्वेदी

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

भूमिका

पिछले सौ सालों के मलयालम उपन्यासों के इतिहास को तीन कालों में विभाजित करके उसकी चर्चा करना इस साहित्य-विधा के अध्ययन में सहायक सिद्ध होगा। ऐसा कहते समय उनमें भी कुछ उपविभाजन देख पाने में कोई कठिनाई नहीं होगी, यह भी समझना आवश्यक है। सामाजिक उपन्यासों में चन्तुमेनोन और ऐतिहासिक उपन्यासों में सी. वी. रामन पिल्लै का स्थान, अग्रगामी होने के नाते, सर्वोपरि ही है। इनके द्वारा उद्घाटित मार्ग पर कुछ उपन्यासकार उनके बाद चौथाई शताब्दी तक चलते रहे। फिर भी सामान्य कोटि से ऊपर की रचनाएं कुल तीन-चार ही उस समय हो पाई हैं, यही परमार्थ है। दूसरा काल उस समय शुरू होता है, जब कि पांचवें दशक में केशवदेव और तकषी छोटी कहानियों से हटकर बड़े फलक (कैनवास) की कहानियां लिखने लगते हैं। काल्पनिकतावाद के आंतरिक प्रवाह को छोड़े बिना यथार्थवाद के माध्यम से सामान्य जन-जीवन और उनकी समस्याएं एक चुनौती के रूप में अवतरित करने वाली रीति उनके साहित्य में निखर उठी। इस समय मलयालम उपन्यास संख्या और विविधता दोनों दृष्टियों से बहुत विकसित हुए। सातवें दशक में शुरू होने वाला तीसरा काल सही अर्थ में आधुनिकता का एक मोड़ है। एम. टी. वासुदेवन नायर, पारप्पुरम आदि अनेक उपन्यासकारों को इसी समय ख्याति मिली थी। पिछली चौथाई शताब्दी में इस पीढ़ी के एक अविस्मरणीय उपन्यासकार हैं 'मय्यषी नदी के किनारे' नामक उपन्यास के रचयिता एम. मुकुन्दन।

'आविलाई का सूर्योदय', 'दिल्ली', 'यह संसार और उसमें एक आदमी', 'हरिद्वार में घंटियां बजती हैं', 'रात और दिन', 'ईश्वर की करतूतें' आदि उपन्यासों और कुछ कहानी-संग्रहों से उन्होंने मलयालम साहित्य को समृद्ध किया है। हर एक उपन्यास की अपनी प्रासंगिकता और विशेषता होती है, यह सही है। लेकिन मेरी राय में 'मय्यषी नदी के किनारे' नामक उपन्यास का मलयालम के उपन्यासों में ही नहीं, भारतीय उपन्यासों में भी एक विशिष्ट स्थान है। एक संकर-संस्कृति के करुण विस्फोट का इतनी सूक्ष्म सुंदरता और तीव्रता के साथ ही साथ मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रण करने वाले उपन्यास भारतीय भाषाओं में कुल मिलाकर देखने पर

भी बहुत इने-गिने ही होंगे, ऐसा कहना पड़ेगा। अनेक वर्णों और स्वभावों वाली योरोपीय संस्कृतियां पिछले तीन सौ सालों से भारत भूमि को प्रभावित करती आ रही हैं। उनमें ब्रिटेन के माध्यम से हुआ सांकर्य अधिक विस्तृत है। लेकिन पुर्तगाल, डच, फ्रांस आदि राष्ट्रों के माध्यम से हुआ प्रभाव कुछ ही प्रदेशों में सुशक्त और केंद्रित था, यह विचारणीय है। इनमें फ्रांस के प्रभाव से संस्कृति-सांकर्य का शिकार बनने वाले दो उपनिवेश हैं, पाण्डुचेरी और माही (मय्यषी)।

केरल में कोषिक्कोड और कण्णूर जिलों के बीच केवल नौ वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ छोटा-सा भू-भाग है मय्यषी : फ्रांस और केरल के संस्कारों द्वारा दो सदियों से अधिक अवधि तक घोलकर लगाई गई टिकुली। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार मय्यषी की आबादी केवल 28413 ही है। संसार की प्रमुख संस्कृतियों में एक, फ्रांसीसी संस्कृति से परिचित लोगों के लिए उसका स्पर्श केरल में पाने का एकमात्र स्थान मय्यषी है। संस्कृति से अधिक संबंध न रखने वाले पियक्कड़ों के लिए मय्यषी कभी भी न भुलाया जा पाने वाला स्वर्ग था; खासतौर पर चारों ओर के प्रदेशों में जब मद्य-निरोध पर सख्ती बरती जाती थी। अरब सागर में जाकर विलीन होने वाली मय्यषी नदी का यह तट-प्रदेश सन् 1941 में एक फ्रांसीसी उपनिवेश बन गया। सन् 1947 के अगस्त में ब्रिटिश आधिपत्य से भारत के स्वतंत्र हो जाने पर पांडुचेरी, मय्यषी और गोवा—ये प्रदेश उपनिवेश ही बने रहे। लेकिन स्वतंत्रता की हवा वहां भी बहे बिना नहीं रही। मय्यषी में जोर पकड़े आंदोलन के फलस्वरूप सन् 1948 के अक्तूबर में वह प्रदेश अस्थायी रूप में स्वतंत्र हुआ। लेकिन अविलंब ही फ्रांसीसियों ने फिर से इसे अपने अधीन कर लिया। उसके बाद छह वर्षों तक लगातार हुए आंदोलन के फलस्वरूप सन् 1954 में फ्रांसीसी लोग मय्यषी को छोड़कर अपने देश चले गए। मुकुन्दन का यह उपन्यास इसी आंदोलन को केंद्र-बिंदु बनाकर वहां के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की गतिविधियों को चित्रित करते हुए रचा गया कथाशिल्प है। यह रचना एक बस्ती की कहानी होने के साथ ही साथ वहां के एक परिवार की और उस परिवार के एक व्यक्ति-विशेष की कहानी भी है। नदी और समुद्र के संगम वाले केरल के अन्य प्रदेशों की तरह खेती, मछली पकड़ना, कपड़ा बुनना आदि पेशों से जीवन बिताने वाली आम जनता की बस्ती है मय्यषी। भिन्न-भिन्न स्वभाव और जाति के लोग वहां बसते हैं। दो सदियों तक फ्रांस की नागरिकता और उसकी तरह-तरह की मान्यताओं द्वारा शासित एक छोटे से उपनिवेश के रूप में हम मय्यषी को इस उपन्यास में पाते हैं। उच्च स्तर की सुख-सुविधाएं प्रदान करने में समर्थ गोरों को ईश्वर जैसा मानने और स्तुति करने वाले साधारण लोग ही वहां की जनसंख्या में अधिक हैं। शासकों द्वारा की जाने वाली शोषण-प्रक्रिया का रहस्य समझकर उन्हें भगा देने का उपाय खोजने वाले कुछ बुद्धिजीवी भी उनमें हैं।

इस उपन्यास में सबसे अधिक ध्यान आकर्षित करने वाला व्यक्ति दासन नामक युवक है। एक साधारण परिवार में पैदा हुआ यह व्यक्ति पढ़ाई-लिखाई में अत्यंत प्रतिभावान होने के कारण बस्ती वालों और शासकों की आंखों के तारे के रूप में पालित-पोषित होता आया। किसी भी नागरिक को सुलभ न होने वाले उन्नत भविष्य के अधिकारी इस युवक के हाथ आए स्वर्णावसरों को ठुकराकर, एक दुःखांत नायक बनने की कहानी हृदय-विदारक ही है। उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि कैसी है ? दासन के पिता दामू को अधिक शिक्षित न होने पर भी गोरों की सहायता से एक मुंशी का काम मिला। प्रतिभाशाली दासन को पाण्डुचेरी भेजकर पढ़ाने-लिखाने के बाद एक बड़ा अधिकारी बनाने की उसकी और उसके परिवार वालों की अभिलाषा थी। इस उपन्यास का सबसे अनूठा कथापात्र कुरम्बी (अम्मा), मुंशी दामू की मां हैं। शिक्षित न होने पर भी गोरों से दोस्ती करने में उन्होंने जो चातुरी दिखाई है, वह किसी को भी आकर्षित कर लेती है। उनके हाथी-दांत की डिबिया की सुंघनी इस उपन्यास में एक मांत्रिक प्रतीक के रूप में चमचमा रही है। उस सुंघनी से उनके द्वारा वशीभूत करने वालों में सबसे प्रमुख लेस्ली साहब नामक सुंदर गोरा है। अक्सर घोड़ागाड़ी में यात्रा करने वाले उनके लिए कुरम्बी अम्मा के घर के पास आते समय गाड़ी रोककर उनका आतिथ्य स्वीकार करना रोजमर्रे की बात बन गई थी। उसपर कुरम्बी अम्मा बहुत गर्व करती थीं।

शासन की सहायता से पाण्डुचेरी के कॉलेज से शिक्षा पूरी करके सर्वप्रथम स्थान पाने वाला दासन जब मय्यषी आया तो बड़े फ्रांसीसी साहब से उसे ऊंचे दर्जे की नौकरी या पेरिस में जाकर उच्च शिक्षा पाने की सुविधा देने का वायदा करने वाला एक खत मिला। मुंशी दामू, उनकी पत्नी और इकलौती बेटी गिरिजा इससे फूली नहीं समाईं। कुरम्बी अम्मा की बात तो कहनी ही क्या है ? वे तो अपने सहज स्वप्नलोक में प्रविष्ट हो गईं, ऐसा कहा जा सकता है। 'कोट-पतलून पहने और टोप लगाए एक गोरे साहब की तरह उसका आना'—वे तभी देखने लगी थीं। यह बुढ़िया मय्यषी के जीवन-नाटकों की दृक्साक्षी है। इन सबको एक साथ चौंकाते हुए निराश करके दासन ने उन दोनों उदारताओं को त्याग दिया। क्योंकि अपने गुरुदेव कुञ्जनन्तन मास्टर से प्रेरित होकर उसने सोच-विचार कर यह निश्चय किया कि उसे देश की स्वतंत्रता और उन्नति के लिए त्यागपूर्ण ढंग से जीवन बिताना है।

गोरों के बीच में पीकर मदमस्त होकर लंपटों जैसा जीवन बिताने वाले कुछ सज्जन लोग भी मय्यषी में हैं। उसी प्रकार वर्णसंकरों में भी दोनों प्रकार के लोग हैं। बस्ती वालों में बहुत सारे लोग गोरों से मिल पाने वाली सहायताओं और सहयोग के लिए कोई भी चोंगा पहनने में नहीं हिचकते। इस उपन्यास के कथापात्रों में सहज रूप में तुलना करने योग्य कुछ जोड़े हैं—दासन और अच्चू; गिरिजा और

चंद्रिका। दोनों जोड़ों को प्रेम-जीवन में विघ्न और निराशाएं होती हैं। हमेशा नंगी कटारी लिए घूमने-फिरने वाला और कुछ भी कर बैठने में न हिचकने वाला एक गुंडा है अच्चू। दासन की बहन और उससे घृणा करने वाली गिरिजा को अपनाने के लिए दूसरा जन्म लेने की तरह इस निष्ठुर हृदय वाले अच्चू के मन-परिवर्तन की कहानी सरस है। कटारी की जगह दूसरा कौन-सा हथियार काम में लाकर गिरिजा को अपनाता है, गौर कीजिए : "प्यार से मैं तेरे आंसू पोछूंगा, प्यार से मैं अपना भूतकाल भस्मसात कर दूंगा, प्यार से मैं तुझे वश में कर लूंगा..." वैसा ही हुआ भी।

उसी समय हर तरह से योग्य दासन के अपने प्रेम-पात्र चंद्रिका से स्थायी संबंध स्थापित करने में रुकावटें आती हैं। कुछ लोगों की तकदीर में सहना और बरबाद होना ही बदा होता है, यह बड़ा प्रश्न हमारे सामने आता है। इस रिश्ते का सबसे अधिक विरोध करने वाला व्यक्ति चंद्रिका का पिता भरतन है। उनसे मिलकर दासन अंत में प्रार्थना करता है–"जहां तक मुझे याद पड़ता है, मैं एक दिन भी चैन से सो नहीं पाया। मय्यषी की स्वतंत्रता ने और सभी के आंसू तो पोंछ दिए, पर मेरे आंसू ज्यों के त्यों हैं। भरतन दादा, आज मेरी एकमात्र खुशी चंद्री है। वह न हो तो मैं पागल हो जाऊंगा।" और त्यागमूर्ति दासन को भरतन द्वारा इस कारुणिक विनती का दिया गया जवाब किसी का भी हृदय विदीर्ण करने वाला था–"तुझे पागल होने से बचाने के लिए मेरी बेटी को व्यभिचार करना होगा, यह कहना चाहता है तू ?" अंत में काल्पनिक सुंदर सफेद चट्टानों के चारों ओर मंडराने वाली तितलियां बन पाना ही दासन और चंद्रिका के लिए संभव हो पाता है। उसी समय दासन के साथ स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेने वाले बहुतेरे लोग उन्नत पद पाकर लौकिक सुख में निमग्न हो जाते हैं। यही है मय्यषी नदी के तटवर्ती प्रदेशों की जीवन-सरणि की हमारे सामने उपस्थित होने वाली विडंबना।

वर्णसंकर संस्कृति की विशेषताएं प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में आविष्कृत करने योग्य भाव और ललित भाषा-शैली मुकुन्दन के इस उपन्यास में आद्योपांत पाई जाती है। उसकी ग्राम्य शैलियां और फ्रांसीसी मिश्रित प्रयोग प्रतिपादन को यथातथ्य बना देते हैं। कुरम्बी अम्मा के वाचाल शब्दों से बच्चों के लिए सुलभ होने वाली कहानियां (गड़रिए की लड़की और वैश्रवणन चेट्टियार की कहानियां तथा अंधविश्वास) इस पृष्ठभूमि को परिशोभित करती हुई चमचमाती रहती हैं, ऐसा कहना पड़ेगा।

कार्टून की सीमित रेखाओं की तरह थोड़े से शब्दों में अधिक प्रभाव डालने वाले वर्णन और बिंबात्मक भाषा के प्रयोग से वस्तुपरकताओं को रूप देने का कौशल इस रचना की विशेषता है, ऐसा कहा जा सकता है। कुछ उदाहरण दिए जाते हैं–

* मय्यषी के ऊपर अमावस्या का अंधकार सड़कर जमा हुआ था।

* अंधेरे में उसकी (कटारी की) धार मौत के दांतों की तरह चमचमा रही थी।
* गहने और रेशमी वस्त्र पहने उसके चलते समय मय्यष़ी के मर्दों की नींद हराम हो जाती।
* बड़े फ्रांसीसी साहब के टीले के नीचे तूफान को गर्भ में धरे समुद्र निश्चल पड़ा रहा।
* समुद्र और नदी के संभोग के साक्षी के रूप में पड़ा पुल...।
* दूसरे दिन आकाश ने गर्भ धारण किया। धीरे-धीरे गर्भजल की तरह पानी टपक पड़ा।

सभी तरह की विविधताओं, संकलनों और उतार-चढ़ावों से युक्त मय्यष़ी का एक समग्र चित्र हमें इस उपन्यास में मिलता है। योरोपीय संस्कृति के आध्यात्मिक प्रतीक क्रूस और गिरजाघर तथा लौकिक प्रतीक ताड़ी के ठेके और वेश्यालय भी वहां हैं। उसी प्रकार ठेठ देहाती जीवन की अच्छाइयां और बुराइयां चित्रित की गई हैं। दोनों की इस घुली-मिली संकर-संस्कृति की भी अपनी प्रासंगिकता है, यह कहने की जरूरत नहीं है, क्योंकि चेतन संस्कृति निश्चल होकर बंधी पड़ी नहीं रहेगी। वह लेती और देती रहेगी। वैसे आदान-प्रदानों से सांस्कृतिक क्षितिज को विशाल बनाकर छोटी-सी मय्यष़ी को स्पंदित करने वाला एक पृष्ठ है यह विशिष्ट उपन्यास।

—के. एम. जार्ज

एक

पहले, यानी दासन के जन्म से पहले :

उन दिनों विशाल रियूद रसिदाम्स ऊबड़-खाबड़ और तंग सड़क थी। रियूद ला प्रिसोम, रियूद्यु गुवर्णमां आदि दूसरी सड़कें भी ऐसी ही थीं। पातार समुद्र-तट पर समुद्र और नदी को किनारे से अलग करने वाली सफेद दीवार और उसके पास कतार में खड़े समुद्र और नदी को प्रकाशित करने वाले बिजली के खंभे भी उस समय नहीं थे। रियूद लग्लीस, रियूद रसिदाम्स आदि प्रमुख सड़कों पर बहुत फासले पर लगाए गए लकड़ी के खंभों पर तेल की बत्तियां टिमटिमाती थीं। आधी रात के पहले ही तेल के चुक जाने से बत्ती बुझ जाती और मय्यषी को अंधेरे में डुबो देती।

टीले के ऊपर बड़े फिरंगी साहब के बंगले पर ही आधी रात के बाद भी शीशे की लालटेनें जलती रहतीं। बंगले के पीछे, टीले के नीचे समुद्र है। समुद्र के निश्चल पड़े रहने वाली रातों में बंगले की खिड़कियों से फैलने वाला शीशे की लालटेनों का प्रकाश खिड़कियों की शक्ल में पानी पर फैला रहता। सूरज के उगने पर अषीक्कल के समुद्र के किनारे जाकर देखने पर पाइन और यूकीलिप्टस वृक्षों की पृष्ठभूमि में बड़े फिरंगी साहब का मनोहर बंगला समुद्र पर प्रतिबिंबित होता दीख पड़ता था।

उस समय बड़े फिरंगी साहब के अलावा और किसी के पास कार नहीं थी। दावीद साहब, नोत्तेर लेस्ली साहब, मेयर चेक्कु मूप्पर सरषाम आम रेत्रेत कुञ्जिकण्णेन आदि घोड़ागाड़ी पर चला करते थे। उनके पास अपनी घोड़ागाड़ी, घोड़ा और कोचवान होता था। उनमें से सबसे अच्छा घोड़ा वर्णसंकर लेस्ली साहब का था।

"लेस्ली साहब का घोड़ा सचमुच एक घोड़ा ही था।" कुरम्बी अम्मा कहा करतीं, "सिर उचकाकर उसका दौड़ना, सचमुच देखने लायक था।"

गर्दन पर बड़े-बड़े बालों वाला लेस्ली साहब का घोड़ा सफेद और फुर्तीला था।

बड़े फिरंगी साहब की कार जहाज पर लाई गई थी। मय्यषी के लोगों ने

उस समय तक कार देखी नहीं थी। पीछे से आग और धुआं उड़ाती एक बस हर दिन दो बार मय्यषी से होकर गुजरती थी—सवेरे उत्तर में बसे तलश्शेरी की ओर और शाम को लौटकर दक्षिण में बसे वडकरा की ओर। उस बस के अलावा मय्यषी के लोगों को कभी-कभी वडकरा जाने वाली लॉरी ही देखने को मिलती थी।

"कुरम्बी अम्मा, तुम कार देखने नहीं जा रही हो ?"

सज-धजकर कार देखने के लिए बंदरगाह जा रही थी कुञ्ञिचिरुता। वह उस समय की एक मशहूर वेश्या थी। कुञ्ञिचिरुता का नाम पूरब में पाण्डुचेरी और उत्तर में मंगलापुरम तक फैला था।

कुञ्ञिचिरुता के आशिकों में प्रमुख थे न्यायाधीश दावीद साहब।

"कार देखने की इच्छा तो मुझे भी है, कुञ्ञिचिरुता !"

"तो मेरे साथ चलो, कुरम्बी अम्मा !"

कुञ्ञिचिरुता ने न्योता दिया। लेकिन कुरम्बी अम्मा हिचकिचाई : "दामू से जरा पूछना है न ?"

बंदरगाह पर कार के उतरने की बात जानने पर कुरम्बी अम्मा से रहा नहीं गया। दामू सवेरे चला गया था। उसके आने पर पूछकर ही जाना है। दामू के इंतजार में कुरम्बी अम्मा प्यासी आंखें खोले खड़ी रहीं।

"तुम आ नहीं रही हो, कुरम्बी अम्मा?" सड़क पर खड़ी कुञ्ञिचिरुता ने दुबारा पूछा।

"अंदर आकर बैठो। जरा चाय पियो। तब तक दामू भी आ जाएगा।"

"बाप रे...दस बजे दावीद साहब के बंगले पर पहुंचना है, कुरम्बी अम्मा !"

"तो तुम जाओ।"

कुरम्बी अम्मा मन मसोसकर रह गईं। कुञ्ञिचिरुता को हमेशा भागमभाग रहता है।

किसी गोरे द्वारा भेंट किए गए अतर की तीखी खुशबू फैलाती हुई कुञ्ञिचिरुता चली गई। बड़े फिरंगी साहब की कार का ख्वाब देखती दामू के इंतजार में कुरम्बी अम्मा बाहर बैठी रहीं।

दामू के लौटते-लौटते दोपहर हो गई।

"रे दामू, मैं जरा कार देखने चली जाऊं ?"

"सांझ होने दो। समुद्र-तट पर अभी तो पैर रखने की भी गुंजाइश नहीं है।"

बड़े फिरंगी साहब की कार देखने के लिए मय्यषी के सारे के सारे लोग बंदरगाह पर जा पहुंचे थे।

शाम को भीड़ कम होने पर मां को साथ लिए दामू बंदरगाह पर जा पहुंचा। कुरम्बी अम्मा ने आंखें भरकर कार देखी। उसे छूकर देखने की लालसा हुई कुरम्बी अम्मा को। लेकिन कार के चारों ओर हथियारबंद पुलिस पहरा दे रही थी।

"री कौसू..."

कार देखकर वापस आई कुरम्बी अम्मा ने सड़क से ही चिल्लाकर कहा : "आईने की तरह ही चमचमा रही है। मुंह देखकर टिकुली लगाई जा सकती है। तूने तो देखी ही नहीं, मेरी कौसू !"

खंभा पकड़े खड़ी कौसू हंस दी।

कुरम्बी अम्मा बैठक में पैर फैलाकर बैठ गईं। उनका दिमाग कार के ख्वाबों से सराबोर था। तब भी कार देखकर लोग लौट रहे थे। उनमें उण्णि नायर और उसके साथी भी थे।

"तुमने देखी नहीं, कुरम्बी ?"

"देखी, नायर सा'ब ! कैसी चमचमाती है—आईने की तरह !"

"लेकिन फ्रांस में उससे भी उम्दा कार है" उण्णि नायर के पीछे लंगड़ा-लंगड़ाकर चलने वाले कुञ्चक्कन ने कहा। तारकोल पोते हुए लकड़ी के खंभों वाली बत्तियां जलाने का काम कुञ्चक्कन का है। कंधे पर सीढ़ी और हाथ में तेल का पीपा भी था।

कुञ्चक्कन का कहना कुरम्बी अम्मा ने सुना। दूर पर कहीं घोड़े की टापों की आवाज़। कुरम्बी अम्मा ने कान दिए। मोड़ पर लेस्ली साहब की घोड़ागाड़ी दीख पड़ी। चलने वाले पहियों की किरकिराहट। घोड़े की गर्दन की घंटियों की आवाज।

घोड़ागाड़ी धीरे-धीरे कुरम्बी अम्मा के घर के सामने आ खड़ी हुई। टोपी लगा सिर बाहर निकालकर लेस्ली साहब ने कहा, "कुरम्बी, कुरम्बी, जरा-सी सुंघनी दोगी ?"

कुरम्बी अम्मा के पास हाथी-दांत की बनी सुंघनी की डिबिया थी।

"कुरम्बी, कुरम्बी, जरा-सी सुंघनी दोगी ?" लेस्ली साहब रोज की तरह मांग रहे हैं।

"उसमें क्या दिक्कत है सा'ब ? उसमें मांगने की कौन-सी बात है ?"

बिना मांगे ही कुरम्बी अम्मा लेस्ली साहब को सुंघनी दे देगी न! वह बैठक में उठकर खड़ी हो गई। घुटनों तक लटकी धोती ही पहने हैं। कानों में सोने के बड़े-बड़े कनफूल। गर्दन में सोने का हार।

लेस्ली साहब घोड़ागाड़ी से नीचे उतरे। वे कोट-पतलून पहने थे। पैरों में चरमराने वाले जूते। मय्यषी में उन दिनों सबसे ज्यादा फैशन वाले थे नोत्तेर लेस्ली साहब।

"बैठिए सा'ब !"

कुरम्बी अम्मा ने पहनी धोती के छोर से बेंच पोंछकर साफ की। लेस्ली साहब टोपी उतारकर बेंच पर बैठ गए। टोपी गोद में रख ली।

"चुटकी भर काफी है, कुरम्बी !"

कुरम्बी ने हाथी-दांत वाली डिबिया निकालकर साहब की ओर बढ़ाई। साहब ने डिबिया से चुटकी भर सुंघनी हथेली पर डाल ली। खून की तरह लाल-लाल हाथ। मय्यषी में और किस वर्णसंकर को मिला है ऐसा रंग ? लेस्ली साहब देखने में असली गोरे जैसे लगते थे।

लेस्ली साहब ने हथेली से सुंघनी चुटकी में ली और नथुनों में चढ़ा ली। लाल फूल जैसा चेहरा और भी लाल हो गया। सुंघनी के नशे में साहब आंखें मींचे बैठे रहे।

"सा'ब, मेरी एक ख्वाहिश..."

चौखट की धोक लगाए खड़ी कुरम्बी अम्मा ने साहब को देखा।

"तुम्हारी कौन-सी ख्वाहिश है, कुरम्बी ! उसे पूरी करने के लिए मैं हूं न।"

लेस्ली साहब ने आंखें खोली नहीं। सुंघनी का नशा उतरने तक साहब यों ही आंखें बंद करके बैठा करते हैं।

"आप एक कार खरीदिए।"

"कार ?"

"बड़े फिरंगी की जैसी कार। आईने जैसी चमचमाती कार। देखने पर चेहरा दिख सके।"

"कार की क्या जरूरत है, कुरम्बी ? हमारे लिए घोड़ागाड़ी काफी है न।"

"इस बंदे की एक ख्वाहिश है।"

बड़े फिरंगी साहब की कार देखने पर कुरम्बी अम्मा में यह मोह पैदा हुआ है। कोट-पतलून पहनकर टोपी लगाए लेस्ली साहब के आईने जैसी चमचमाती कार में सैर करने का सपना कुरम्बी अम्मा अब तक कितनी ही बार देख चुकी हैं।

"खरीदेंगे नहीं सा'ब ?"

"उसके लिए पैसा चाहिए न, कुरम्बी !"

उस जमाने में एक कार खरीदना, एक जहाज खरीदने से भी मुश्किल काम था। उन दिनों लोगों के पास कारों से ज्यादा जहाज थे न ?

फिर भी कार खरीदने की बात पर सोच-विचार करेंगे। ऐसा लेस्ली साहब ने वचन दिया। कुरम्बी अम्मा खुश हो गईं। साहब के पास सटकर खड़ी होकर उन्हें प्यार से पूछा—"जरा-सी सुंघनी और चढ़ाएंगे ?"

"एक चुटकी और।"

कुरम्बी अम्मा ने डिबिया खोलकर साहब की हथेली पर सुंघनी उड़ेल दी। सुंघनी के नशे में साहब की आंखें फिर मूंद गईं।

"वाष्यिल कोरन की बीमारी ठीक हो जाएगी, सा'ब ?"

"उसके गालों पर बतौरी (कैंसर) है।"

"वह ठीक होने वाला रोग नहीं है क्या, सा'ब ?"

"बतौरी हो जाने पर कभी ठीक हो पाएगा, कुरम्बी ?"

"हाय राम ! उसकी औरत और बच्चे मुहताज हो जाएंगे।"

वाषयिल कोरन मजदूरी करता था। उसकी कोरिन और तीन दुधमुंहे बच्चे हैं। अचानक गालों पर अर्बुद (कैंसर) हो गया।

लेस्ली साहब और कुरम्बी अम्मा गांव के हाल-चाल बतियाते बैठे रहे। साथ-साथ सुंघनी भी सूंघते रहे। सांझ घिर आई थी।

"मैं जाऊं कुरम्बी ?" साहब ने उठकर सिर पर टोपी लगाई।

"जा रहे हैं, सा'ब ?" कुरम्बी अम्मा के स्वर में विदाई का विषाद था।

"कल भी मैं आऊंगा न, कुरम्बी ?" लेस्ली साहब कुरम्बी अम्मा को देखकर जरा हंस दिए।

घोड़ागाड़ी पर बैठकर बड़े फिरंगी साहब के बंगले की ओर चल दिए। वहां हर रात को बड़ा खाना-पीना चलता है। लेस्ली साहब के अलावा दावीद साहब, चेक्कु मूप्पर, सरषाम आम रेत्रेत कुञ्ञिकण्णेन आदि बड़े फिरंगी साहब के रोज के मेहमान थे। बंगले में खाना-पीना चलते समय कतार में खड़ी घोड़ागाड़ियों पर चालक लोग ऊंघते रहते। घोड़े जुगाली करते रहते।

आधी रात के बाद बड़े फिरंगी साहब के नशे में चूर अतिथियों को लेकर घोड़ागाड़ियां कतार में रियूद रसिदाम्स से होकर गुजरती नजर आतीं।

दूसरे दिन भी लेस्ली साहब आए। कुरम्बी अम्मा रोज धूप कम होने पर लेस्ली साहब का इंतजार करती बैठक में बैठी रहतीं—सुंघनी से भरी डिबिया लिए। लेस्ली साहब रोज आया करते। घोड़ागाड़ी सड़क पर खड़ी करके टोपी लगाए सिर को बाहर निकालकर पूछा करते, "कुरम्बी, कुरम्बी ! जरा सुंघनी दोगी ?"

"उसमें क्या हर्ज है ? उसमें मांगने की कौन-सी बात है ?" रोज की तरह कुरम्बी अम्मा कहतीं। जिस दिन लेस्ली साहब न आते, उस दिन कुरम्बी को नींद नहीं आती।

कुरम्बी अम्मा की याद में पड़ने वाले पहले वर्णसंकर लेस्ली साहब के पिता क्लेमां साहब थे। बेहद लंबे थे वे। अलावा इसके सफेद-सफेद ऐंठी खड़ी मूंछें। रियूद लग्लीस पर क्लेमां साहब की शराब की दुकान थी। शराब बेचकर उन्होंने ढेर सारा पैसा कमाया था।

डींग मारने वाले क्लेमां साहब शराब की दुकान पर बैठकर अपने खानदान की महिमा और अपने बच्चों के बारे में लेक्चर देते। क्लेमां साहब की डींगों में सबसे मशहूर है—अठारहवीं सदी में अंग्रेजों से हिंदुस्तान में युद्ध करने वाले लाली लाटसाहब के वारिस हैं वे। उनकी नसों में फ्रांसीसी राजकीय रक्त प्रवाहित हो रहा है।

"देसा दां घू कोंत लाली। (लाली लाटसाहब का वारिस।)" शराब की बोतलें कतार में रखी हुई शीशे की आलमारी के सामने बैठकर छाती फुलाकर, मूंछों पर ताव देते हुए क्लेमां साहब कहते।

शराब की दुकान के रोज के खरीददार अधिकतर पुलिस वाले होते। पैसे वाली पेटी के पीछे बैठकर क्लेमां साहब द्वारा मारी जाने वाली डींगें सुन-सुनकर नशे में चूर पुलिस वाले सिर हिलाते। वे क्लेमां साहब की हां में हां मिलाने वाले श्रोतागण थे। लंबी-लंबी बेंचों पर कतार में बैठे-बैठे वे शराब पीते। सामने की मेज पर लाल-लाल टोपियां रखी रहतीं।

अपनी डींगें सुनकर सिर हिलाने वाले पुलिस वालों को देखकर क्लेमां साहब फूले न समाते। वे नौकरों से कहते, "थोड़ी-थोड़ी शराब दे दो, अपने पुलिस वालों को।"

नौकर पुरस्कार के रूप में उनके गिलासों में थोड़ी-थोड़ी शराब उड़ेल देते। तब पुलिस वाले गिलास उठाकर जोर-जोर से कहते, "अला सांते घू दसादां घू कोंत लाली।"

"लाली लाट के वारिस आपकी तंदुरुस्ती के लिए हम पी रहे हैं।"

यह सुनते हुए क्लेमां साहब अपनी सफेद-सफेद मूंछों पर ताव देते हुए पैसे वाली पेटी के पीछे बैठा करते—अधमुंदी आंखों के साथ आनंद-विभोर।

रात के बहुत ढल जाने पर पुलिस वाले बाहर निकलते। सुनसान पड़ी रियूद लग्लीस से फ्रांसीसी, तमिल और मलयालम में क्लेमां साहब का गुणगान करते हुए डगमगाते पैरों से चलते बनते।

शराब बेचने वाले क्लेमां साहब का बड़ा बेटा है लेस्ली साहब। लेस्ली साहब सुंदर और पढ़ने-लिखने में होशियार थे। क्लेमां साहब ने बचपन में ही फ्रांस भेजकर पढ़ाया-लिखाया। लेस्ली साहब हर एक परीक्षा में पास होते गए।

"पास हुए बिना रहेगा क्या ? लाली लाटसाहब का खून ही तो है उसकी रगों में ?"

क्लेमां साहब अपने पुलिस श्रोताओं से कहते। वे सिर हिलाकर हामी भरते।

कानून पढ़कर डिग्री हासिल करके वापस आए लेस्ली साहब को लिवा लाने के लिए क्लेमां साहब बंदरगाह पर जा पहुंचे। क्लेमां साहब के शराब पीने वाले सारे के सारे पुलिस वाले लेस्ली का स्वागत करने के लिए बंदरगाह पर मौजूद थे।

उस दिन क्लेमां साहब ने मय्यषी में शराब की नदी बहा दी।

उन दिनों मय्यषी के अधिकतर पुलिस वाले पांडुचेरी से आए तमिल वाले थे। तब फिरंगियों के विरुद्ध जनता भड़की नहीं थी। मय्यषी के लोग पीछे-पीछे चलने वाली भेड़-बकरियों जैसे थे। वे मेहनत करने, खाने-पीने और सोने वाले पालतू जानवर थे। पुलिस वालों को खासकर कोई काम नहीं था। वे शराब पीते, व्यभिचार

करते इधर-उधर घूमा करते—गोरों और वर्णसंकरों के गुणगान करते रहते।

लेस्ली साहब मय्यषी की अदालत में नियुक्त किए गए। जवानी में ही ढेर सारा पैसा कमाया। जल्दी ही रियूद रसिदाम्स में समुद्र और नदी के सामने लेस्ली साहब का बंगला खड़ा हो गया।

सुंदर, फैशन वाले और धनवान लेस्ली साहब को छिपे और खुले तौर पर मय्यषी की लड़कियां चाहने लगीं।

"कैसा मजा है ? कैसी धाक है ?"

सफेद घोड़ेवाली गाड़ी पर पले द षयूस्तीस में जाने वाले लेस्ली साहब को कुरम्बी पलक झपकाए बिना खड़ी देखती रहतीं। उस समय कुरम्बी जवान और तंदुरुस्त युवती थीं।

पढ़ाई-लिखाई खत्म हो गई। नौकरी मिल गई। मकान बनवा लिया। अब लेस्ली की शादी भी करानी है। क्लेमां साहब ने चाहा। लेकिन, "मेरे लड़के के लायक कोई लड़की इस मय्यषी में है क्या ?"

क्लेमां साहब ने अपने सामने बैठे शराब पीने वाले पुलिस वालों को देखा, "नों नों, मोस्यें।"

पुलिस वालों ने निषेधात्मक रूप में सिर हिलाया। लेस्ली साहब के अनुरूप लड़कियां वर्णसंकरों में नहीं, ऐसा नहीं। लेकिन क्लेमां साहब की एक बड़ी चाह थी—एक असली गोरे की लड़की होनी चाहिए लेस्ली की पत्नी। उसको देखने के बाद ही उन्हें आंखें मूंदनी हैं।

अरमां साहब किसी तिजारत के लिए मलाबार में आए थे। तिजारत डूब जाने पर साहब, पत्नी वगैरह मय्यषी में आकर बस गए। फौज में एक बेटा था। उसके पैसा भेजने के कारण अरमां साहब और परिवार भूखों मरने से बच गए।

एक दिन सफेद घोड़ों वाली गाड़ी में क्लेमां साहब अरमां साहब के दरवाजे पर जा उतरे। वे बहुत देर तक बातें करते रहे। पैसा न होने पर भी असली गोरे हैं न अरमां साहब। बेटी मिस्सी को देखते ही सूरज को देखने जैसे क्लेमां साहब की आंखें चौंधिया गईं।

क्लेमां साहब रियूद ला प्रिसोम से बहुत जल्दी-जल्दी घोड़ागाड़ी दौड़ाते हुए बेटे के सामने जा खड़े हुए।

"चमचमाती नीली-नीली आंखें। घुंघराले सुनहरे बाल..."

हाथ ऊपर उठाते हुए अपने लंबे-लंबे पैरों पर बूढ़े क्लेमां साहब नाचने लगे।

वैसे अरमां साहब की बेटी मिस्सी को लेस्ली साहब की पत्नी बनने का सौभाग्य मिला। इसी तरह कई पीढ़ियों से अपने आचार विचार खो बैठे लाली लाट साहब की वंश परंपरा की खोज में क्लेमां साहब की यात्रा आरंभ होती है।

"साहब के अनुरूप मदाम। मदाम के अनुरूप साहब।"

"कैसा मेल-जोल है।"

शाम को एक-दूसरे का हाथ पकड़े लेस्ली साहब और मिस्सी को समुद्र-तट पर हवा खाने जाते देखकर मय्यषी के लोग कहा करते।

वह सब देखते-देखते संतोष से शराब की दुकान वाले क्लेमां साहब की आंखें मुंद गईं।

दो

मेयर चेक्कु मूप्पर, सरषाम आम रेत्रेत कुञ्जिकण्णेन आदि वर्णसंकरेतर वर्गों में धनी और प्रतिष्ठित थे। मय्यषी की मिट्टी में पैदा होने पर भी पीढ़ियों पहले फ्रांस का पौरत्व स्वीकार कर चुके थे वे।

चेक्कु मूप्पर ने बचपन में फ्रांस में जाकर उन्नत शिक्षा प्राप्त की। वहीं नौकरी करने लगे। छत्तीस वर्ष वहां जीवन बिताने के बाद अपनी फ्रांसीसी पत्नी के साथ मय्यषी लौट आए और पुनीत कन्यामरियम के गिरजाघर के पास ही एक महल बनवाया। धीरे-धीरे वे बड़े फिरंगी साहब के जिगरी दोस्त बन गए। बाद में मय्यषी के मेयर चुन लिए गए।

चेक्कु मूप्पर रोजवुड की तरह काले हैं। छत्तीस साल की योरोप की सर्दी ने उनकी चमड़ी के रंग में कोई अंतर आने नहीं दिया है। छः फुट लंबे, उसी के अनुरूप मोटापा। रोज सायंकाल अपनी मेम साहिबा का हाथ थामे चेक्कु मूप्पर घूमने निकलते। तब औरतें और बच्चे घरों से बाहर निकलकर देखने के लिए आ खड़े होते।

"कैसा मोटा-तगड़ा है यह !"

"कैसे ठाठ-बाट हैं इसके !"

मय्यषी के लोग चेक्कु मूप्पर और मेमसाहिबा को आंखों से ओझल हो जाने तक खड़े देखते रहते।

"जरा-सा रंग और साफ होता तो..."

कुरम्बी अम्मा के मन में चाह जाग उठती। कोट-पतलून और जूते पहनने वाले मय्यषी के सभी बहादुरों की विनीत आराधिक जो ठहरी कुरम्बी अम्मा।

लेस्ली साहब की तरह चेक्कु मूप्पर अपने से छोटों से मिलते-जुलते नहीं थे। कितनी ही बार वे इस रास्ते से होकर गुजरे हैं। एक बार भी कभी वे न तो कुरम्बी अम्मा को देखकर जरा मुस्कुराए और न ही एक शब्द भी मुंह से निकाला। कुरम्बी अम्मा को उसमें कोई शिकायत भी नहीं थी।

"बाप रे ! चेक्कु मूप्पर फ्रांस से आए आदमी हैं न।"

कुरम्बी अम्मा का तर्क यही था। फ्रांस में कितने ही सालों तक जीवनयापन करने वाले और फ्रांसीसी महिला से शादी करने वाले चेक्कु मूप्पर—मेयर चेक्कु मूप्पर—नारियल के व्यापारी केलु अच्चन की जोरू को देखकर मुस्कुराएंगे ? उससे हालचाल पूछेंगे ?

लेस्ली साहब भी फ्रांस में जाकर पढ़-लिखकर आए व्यक्ति हैं। ऊंचे ओहदे पर काम करने वाले हैं। लेकिन चेक्कु मूप्पर की तरह लेस्ली साहब ने मय्यषी के लोगों को अपने से हटाकर नहीं रखा। लेस्ली साहब ने चेक्कु मूप्पर से भी अच्छी पोशाक पहनी और मय्यषी के उस समय के सबसे अच्छी घोड़ागाड़ी में घूमे-फिरे। उसके साथ ही साथ केकु अच्चन जैसे लोगों के गलबांही डाले चलने-फिरने में झिझके भी नहीं। बरसों तक लेस्ली साहब कुरम्बी अम्मा के हाथ से रोज सुंघनी लेकर सूंघा करते। मिस्सी और कुरम्बी अम्मा सहेलियां थीं। लेस्ली साहब का बेटा गस्तोन साहब और कुरम्बी अम्मा का लड़का दामू दिली दोस्त थे।

महान लेस्ली साहब।

महती मिस्सी साहिबा।

महान गस्तोन साहब।

कुरम्बी अम्मा का मर्द केलु अच्चन कोट-पतलून या जूते कुछ भी नहीं पहनता। घुटनों तक की धोती ही वह पहनता था। घर में आते ही वह धोती उतार देता था। केलु अच्चन को कपड़ों से नफरत थी। पलभर भी एक जगह चुपचाप बैठने की आदत केलु अच्चन की नहीं थी। लंगोटी लगाए वह घर के चारों तरफ दौड़ता फिरता। नारियल के पेड़ की जड़ों के आसपास वाले गड्ढों में खाद डालता। घर के अगवाड़े और पिछवाड़े में पानी रुके नहीं, इसके लिए नालियां बनाता। इस तरह का कोई-न-कोई काम करता ही रहता।

कोट-पतलून, जूते पहने और टोपी लगाए चलने वाले बहादुरों की आराधिका कुरम्बी अम्मा को पति के रूप में केलु अच्चन का मिलना दुर्भाग्य की बात थी।

सारी रात बारिश के साथ हवा चलती रही। नीचे गिरे पड़े नारियलों को उठाने के लिए केलु अच्चन बगीचे में गया। नालियों और गड्ढों में सब जगह रुका पड़ा लाल-लाल बरसाती पानी। सड़क पर पुल को भी सराबोर किए पानी बेतहाशा बह रहा था। नगरपालिका की बत्तियों के शीशे कदाचित् कुछ गिर जाने से टूटे-फूटे पड़े थे। पानी पेट में भर जाने से फूले मरे पड़े मेंढक पैरों पर आ पड़ते थे।

"री कुरम्बी !"

केलु अच्चन एक ही पैर पर कूदते-कूदते लौट आया।

"किसी ने काट लिया मुझे।"

दाहिने पैर की एंड़ी से खून बूंद-बूंद टपक रहा था।

खून देखकर उसका दिल धड़क उठा। बरसात के मौसम में बांबी में पानी

भर जाने से सांप बाहर निकल आते हैं। काट लेने पर विष का उतरना भी मुश्किल हो जाता है।

"मेरे मर्द को कुछ होए नहीं..."

कुरम्बी अम्मा की डबडबाई आंखें पुनीत कन्या मरियम के गिरजाघर के ऊपर के क्रूस पर जा टिकीं।

वह ताड़ के पत्ते का बना छाता ले आई।

"धोती चाहिए ?"

"ऐसी बारिश में ?"

धोती बिना पहने खाली लंगोटी लगाए एक ही पैर पर कूदते-कूदते केलु अच्चन मलयन कटुङ्न के घर की ओर चल पड़ा।

कटुङ्न की मंत्रशक्ति से न उतरने वाला कोई विष है क्या ? एक बार पूरब में आठ मील की दूरी से सांप के डंसे एक मुसलमान बालक को मलयन कटुङ्न के पास लाया गया। विष सिर तक चढ़ गया था। विष उतारना हो तो एक ही उपाय है। डंसने वाले सांप को वहां लाना है। मलयन कटुङ्न ने किया भी वैसा ही। आठ मील दूरी से मय्यषी नदी तैरकर सांप आया। मुसलमान बालक के सिर से विष पी लेने के बाद सांप कटुङ्न के पैरों पर गिरकर मर गया।

"क्या है रे केलु अच्चन ?"

"किसी ने काट लिया है।"

कटुङ्न बरामदे में खड़ा था। उसका 'गुलिकन कटुङ्न' नाम भी था। मेले के दौरान गुलिकन का मुखौटा कटुङ्न ही लगाता था। नहा-धोकर माथे पर भस्म लगाए गुलिकन ऐसे खड़ा था मानो वह किसी का इंतजार कर रहा हो।

"मैं तुम्हारा ही इंतजार कर रहा था, केलु अच्चन !"

अमुक समय पर, अमुक आदमी को सांप डंसेगा, इसकी जानकारी मानो कटुङ्न को पहले से ही हो जाती थी।

एक पैर से कूदता हुआ, केलु अच्चन बरामदे में चढ़ गया। जिस रास्ते से वह गया था, वहां के बरसाती पानी में खून के धब्बे दिखाई पड़ रहे थे।

केलु अच्चन चटाई पर बैठ गया। कटुङ्न नागमंत्र जप-जपकर झाड़-फूंक करता रहा।

पांच मिनट बीत गए।

"अब तुम जाओ। मगर एक बात है—चौबीस घंटे तक आंख मूंदनी नहीं है। झपकी आ गई तो फिर मेरे बस की बात नहीं।"

चौबीस घंटे तक सोना नहीं है। आंखें झपकाईं तो गुलिकन का मंत्र निष्फल हो जाएगा। केलु अच्चन ने सिर हिलाया। कान से अधन्नी निकालकर कटुङ्न को दक्षिणा दे दी।

केलु अच्चन घर वापस पहुंच नहीं पाया। उसके पहले ही रास्ते में गिरकर मर गया।

खबर सुनते ही कुरम्बी अम्मा एक काले पत्थर की प्रतिमा जैसी निश्चल खड़ी की खड़ी रह गई।

"मेरा मर्द चला गया। मुझे छोड़कर चला गया...।"

मय्यषी के लोग कितने ही दिनों तक लगातार कुरम्बी अम्मा का करुण क्रंदन सुनते रहे। बाद में एक दिन वह रोदन सिसकी में सिमट गया। धीरे-धीरे कुरम्बी अम्मा अपना दुःख-दर्द भूल गई।

"थोड़ा-सा रंग और साफ होता तो...", चेक्कु मूप्पर मेम साहिबा के साथ घूमने निकले तो रोज की तरह कुरम्बी अम्मा कहने लगी। उसका दिमाग फिर से कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए, बहादुरों के सपने देखने और सोचने लगा।

क्लेमां साहब ने पुलिस वालों को ही पुरस्कार के रूप में शराब दी थी। लेकिन लेस्ली साहब की शराब न पीने वाले मर्द उस समय मय्यषी में नहीं के बराबर थे। लेस्ली साहब हमेशा दावतें दिया करते। हाथ भर-भरकर दान देते। 'कत्तोर्स-षुइए' (फ्रांस का गणतंत्र दिवस), नोएल (क्रिस्तमस) आदि अच्छे अवसरों पर धर्मशाला के सारे के सारे अनाथों को बंगले पर बुलाकर दावत और पुरस्कार देते।

अपने बाप से ज्यादा दानशील थे, लेस्ली साहब।

मिस्सी के दो बच्चे पैदा हुए—अल्बेर और गस्तोन। जिस साल मिस्सी ने गस्तोन को जन्म दिया, उसी साल कुरम्बी अम्मा ने दामू को भी जन्म दिया।

अल्बेर बड़ा होते-होते बदमाश बनता गया। अध्यापक को गाली देकर स्कूल छोड़कर चला आया। पढ़ना छोड़कर अल्बेर साहब शराब पीकर लौंडियाबाजी करता हुआ कुछ समय तक मय्यषी में ही रहा। युद्ध शुरू हो जाने पर फौज में भर्ती होकर गायब हो गया। उसके बाद अल्बेर साहब के बारे में कोई भी जानकारी किसी को मिली ही नहीं।

"मेरा नसीब है कुरम्बी..."

मिस्सी की नीली आंखों में आंसू भर आते।

अल्बेर साहब के बारे में बहुतों को बहुत सारे किस्से कहने थे। अल्बेर साहब युद्ध में मारे गए। अल्बेर साहब जहाज दुर्घटना में डूब मरे। अल्बेर साहब बीबी-बच्चों के साथ फ्रांस में सुख से रह रहे हैं। अल्बेर साहब...

उन दिनों फौज से पेंशन पाकर सरषाम कुञ्ञिकण्णेन मय्यषी आ पहुंचा। सरषाम आम रेत्रेत (पेंशन पाया हवलदार) कुञ्ञिकण्णेन को भी अल्बेर साहब के बारे में कुछ कहना था :

"अल्बेर को मैंने देखा। सैगोन में।"

"सच है मोस्ये ?"

मिस्सी की भीगी आंखों में चमचमाहट।

"मैंने अपनी आंखों से देखा है।"

कुञ्जिकण्णेन ने दुहराया।

"हाथ में बोतल लिए गाना गाते हुए रियूद लप्लास से अल्बेर पैदल जा रहा था, एक सैनिक के गले में बाहें डाले।"

"जहां भी हो, मेरा बेटा जिंदा तो है..."

मिस्सी ने रूमाल से आंसू पोंछ लिए। अल्बेर पियक्कड़ और लंपट हो सकता है, स्नेहहीन हो सकता है लेकिन मिस्सी में अल्बेर के प्रति प्यार में रत्ती-भर भी कमी नहीं आई। अल्बेर सैगोन में हो सकता है। धरती के किसी भी कोने में हो सकता है। जिंदा है, इतना जान लेने मात्र से मिस्सी को तसल्ली हो गई।

गस्तोन, अल्बेर जैसा नहीं था। अच्छे स्वभाव वाला अत्यंत बुद्धिमान। एक-एक करके सारी परीक्षाएं पास कर लीं। पाण्डुचेरी में जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त की। लेस्ली साहब को गस्तोन से बड़ी उम्मीदें थीं।

"गस्तोन को मैं फ्रांस भेज रहा हूं, कुरम्बी !" एक दिन सुंघनी सूंघने के लिए आए लेस्ली साहब ने कहा।

"सच है सा'ब !"

"उसे मैं डाक्टर बनाऊंगा।"

"मेरे भगवान ! सच है सा'ब !"

"सच है कुरम्बी ! पांच साल जरा बीतने दो।—गस्तोन डाक्टर।"

"यह दासी कहीं बीमार पड़ जाए तो देखभाल करने के लिए एक व्यक्ति तो होगा। हे भगवान !"

"तेरे बीमार पड़ जाने पर मेरा बेटा ही तेरा इलाज करेगा।"

"वह मेरे नसीब में बदा है क्या, सा'ब ?"

"होगा कुरम्बी, होगा। मय्यषी की पुनीत माता की इच्छा हो तो न होने वाली कौन-सी बात है ?"

"मेरी पुनीत माता, मेरे गस्तोन को डाक्टर बना दे !"

दूर पर पुनीत माता के गिरजाघर के ऊपर स्वच्छ आकाश पर साफ-साफ दिखने वाले क्रूस पर देखते-देखते कुरम्बी अम्मा ने आंखें बंद कर लीं।

आला हाथ में लिए उसका इलाज करने के लिए आने वाले गस्तोन का दिवास्वप्न देखते हुए चौखट का सहारा लिए खड़ी कुरम्बी अम्मा गस्तोन के पिता लेस्ली साहब की ओर देखकर मुस्कुराती हुई पूछती हैं, "इलाज करने के लिए आते समय गस्तोन मुझसे पैसा लेगा, साहब ?"

हाथी-दांत की डिबिया खोलकर उसमें से चुटकी भर सुंघनी सूंघकर

उसके नशे में आंखें बंद किए लेस्ली साहब कहते हैं, "गस्तोन तुम्हारा भी बेटा है न, कुरम्बी !"

यह सुनकर आनंद की तरंगों में तरंगायित होते हुए कुरम्बी अम्मा कहती हैं, "वह मेरा बेटा है। मेरे लिए दामू और गस्तोन एक जैसे हैं।"

अगले दिन दामू की खोज में आने वाले गस्तोन के पास कुरम्बी अम्मा दौड़कर जा पहुंचीं। पकड़कर पास बिठाया और सिर तथा पीठ पर हाथ फेरा। लेस्ली साहब जैसी हंसी, वैसी ही निगाह। एक ही दृष्टि में लेस्ली साहब की खोई हुई जवानी गस्तोन में फिर से देख रही थी।

दामू और गस्तोन दोस्त थे। वे रोज एक साथ घूमने जाते। वे हमेशा एक साथ ही दीखते। दामू को गस्तोन की तरह उच्च शिक्षा मिली नहीं थी। दामू के पांचवां दर्जा पास कर लेने पर कुरम्बी अम्मा ने लेस्ली साहब से कहा, "दामू आगे नहीं पढ़ेगा।"

"सो क्यों कुरम्बी ?"

"मेरे लिए तो एक पुरुष वही है न ? मैं तो बुड्ढ़ी हो चली। वह कहीं ठिकाने से लग जाता तो तसल्ली हो जाती।"

लेस्ली साहब ने जरा सोचकर कहा, "दामू को पढ़ना न हो तो कल से वह कचहरी में आया करे।"

वैसे पलेद षयूस्तीस में दामू को मुंशी का काम मिला।

लेस्ली साहब के गस्तोन को फ्रांस भेजने की तैयारी करते समय एक दिन कुरम्बी अम्मा साहब के बंगले पर गईं।

"एं कुरम्बी !"

दौड़कर मिस्सी ने फाटक खोल दिया। पास बैठकर उन दोनों ने बहुत देर तक बातचीत की। घर की, पास-पड़ोस की बातें कीं। केक खाकर चाय पी। फिर कुरम्बी अम्मा ने मतलब की बात कही, "तुमसे एक बात कहना चाहती थी मिस्सी !"

"क्या है कुरम्बी ?"

मिस्सी कुरम्बी अम्मा से सटकर बैठ गई।

"दामू नौजवान हो गया। उसकी शादी होनी है।"

"दामू कोई बीस साल का हो गया है न ?"

उन दिनों अठारह साल की उम्र में मर्द शादी किया करते थे। मय्यषी के मर्द दाढ़ी-मूंछ निकलते-निकलते पिता बन जाते थे। कुरम्बी अम्मा से शादी करते समय केलु अच्चन की उम्र सत्रह साल की थी और कुरम्बी की बारह साल। शादी के बाद पति के घर पहुंचने के बाद ही कुरम्बी अम्मा रजस्वला हुई थी। रजस्वला होने तक वह पति की माता के साथ सोती थी।

"गस्तोन और दामू हमउम्र हैं।"

"गस्तोन दो महीना बड़ा है।"

"गस्तोन भादो में और दामू कातिक में पैदा हुआ।"

कुरम्बी अम्मा ने डिबिया से जरा-सी सुंघनी निकालकर सूंघ ली।

"गस्तोन फ्रांस जा रहा है न ? आंखों की पहुंच के उस पार।"

कुरम्बी अम्मा कुछ कहने ही वाली थीं। अचानक मिस्सी स्वयं यादों में खो गईं। फ्रांस के बारे में मिस्सी की यादें बहुत धूमिल थीं। वे पूरी तरह बदल गई हैं। नाम मात्र के लिए ही मिस्सी आज फ्रांसीसी हैं। मय्यषी में रहते-रहते कितने ही साल बीत गए हैं। आज मय्यषी के लोगों की तरह ही मलयालम बोलती हैं। उनके बीच रह रही हैं। लेकिन फ्रांस का नाम सुनते ही मिस्सी चुप्पी साध लेतीं। जन्मभूमि की पुकार कानों में गूंज उठती।

कुरम्बी अम्मा ने आगे कहा, "फ्रांस जाने से पहले गस्तोन की शादी कर दी जाए तो, मिस्सी !"

मिस्सी भी इसी बात पर सोच-विचार करती आ रही थीं। कुरम्बी अम्मा की राय जानकर मिस्सी को बेहद खुशी हुई।

"अपने बेटे की चिंता मुझे न हो तो क्या, तुझे तो है न कुरम्बी ?"

लेस्ली साहब को भी खुशी हुई।

कुरम्बी अम्मा अपनी सुंघनी की डिबिया लिए हंसी-खुशी घर लौटीं।

विवाह की बात जानने पर गस्तोन का चेहरा कागज जैसा फीका पड़ गया।

"नहीं पापा, मुझे अभी शादी नहीं करनी है।"

गस्तोन ने भय से पापा के चेहरे पर देखा। बेटे की विह्वलता ने लेस्ली साहब को अचंभे में डाल दिया।

उसे शादी नहीं करनी है, ऐसा गस्तोन ने खुलेआम कह दिया। लेस्ली साहब और मिस्सी के हाथ-पांव फूल गए। बड़ा बेटा अल्बेर उनके हाथ से निकल गया। उसकी शादी करने का भाग्य लेस्ली साहब और मिस्सी को नहीं मिला। गस्तोन में वे अल्बेर को भी देख रहे थे।

गस्तोन शादी न करे तो क्लेमां साहब का परिवार गस्तोन में ही खतम हो जाएगा न ?

"गस्तोन में कोई कमी है, ऐसा मैंने अंदाज लगाया था।"

हाथों में मुंह थामे लेस्ली साहब चिंताकुल हो कुर्सी पर बैठे रहे।

बचपन में गस्तोन जोशीला और फुर्तीला बालक था। नौजवान होते-होते गस्तोन का जोश ढलता गया। खुशी सूख गई। गस्तोन हमेशा चिंतामग्न दीखने लगा। गस्तोन को जैसे कुछ सता रहा था। कोई गोपनीय दुःख ! मय्यषी की पुनीत माता ही वह जानती थीं।

"जरा दामू की शादी होने दो।"

कुरम्बी अम्मा ने लेस्ली साहब और मिस्सी को सांत्वना दी।

"गस्तोन यहां आकर कहेगा—पापा, मुझे भी शादी करनी है।"

कुरम्बी अम्मा दामू की शादी की तैयारियों में जुट गईं। लड़की देखी। शादी की तारीख भी तय की गई।

पिछले कुछ दिनों से दामू गस्तोन से मिल नहीं पाया था। गस्तोन लुक-छिपकर रह रहा था। एक दिन दामू ने गस्तोन को पकड़ ही लिया। आंखों में आंसू भरे गस्तोन समुद्र-तट पर बैठा था।

"मैं तुम्हारा दोस्त हूं न, गस्तोन, मुझसे बताओ, तुम्हें हो क्या गया है ?"

गस्तोन चुपचाप समुद्र की ओर देखता रहा।

"बताओ..."

दामू अपने दोस्त से सटकर बैठ गया।

"अब तुम इसे छिपाओ नहीं। मुझे यह जानना है। नहीं तो आज से मैं तुम्हारा दोस्त नहीं।"

गस्तोन बहुत देर तक एक प्रतिमा के समान बैठा रहा। गस्तोन की नीली आंखों से गरम-गरम आंसू टपक पड़े। आखिर वह रहस्य जो मय्यष़ी की पुनीत माता ही जानती थीं, गस्तोन ने दामू को बताया।

दामू ठहाका मारकर हंसा।

"तुम निरे काठ के उल्लू हो। आज ही तुम अपने पापा से जाकर कह दो कि तुम्हें शादी करनी है।"

गस्तोन साहब ने भौंचक्के होकर दामू के चेहरे पर देखा।

"नहीं तो रहने दो—मैं ही लेस्ली साहब से कह दूंगा।"

दामू उठकर समुद्र-तट से होता हुआ चला। सीधे पलेद प्यूस्तीस में जाकर वह लेस्ली साहब से मिला।

"गस्तोन सहमत हो गया।"

"सच ?"

लेस्ली साहब की सफेद भौंहों वाली आंखें चमचमा उठीं। गिरजाघर के ऊपर वाले क्रूस पर साहब की आंखें अनजाने ही जा पहुंचीं। शराब के व्यापारी क्लेमां साहब का परिवार खतम नहीं होगा। गस्तोन साहब की शादी पीढ़ियों की लंबी परंपरा को जन्म देगी। वैसे क्लेमां साहब के उत्तराधिकारी आगे भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी लाली लाटसाहब के खून की खोज की यात्रा जारी रख सकेंगे।

पाण्डुचेरी से कीमती शराब मंगाई गई। लेस्ली साहब के बंगले के सामने मय्यष़ी की सारी घोड़ागाड़ियां हमेशा कतार में खड़ी रहतीं। गस्तोन साहब की शादी की दावत में मय्यष़ी के सारे के सारे लोगों को न्योता दिया गया था। शादी होने

तक मय्यषी में एक त्योहार का वातावरण था।

"ऐसी शादी मैंने अपने जीवन में कभी देखी ही नहीं, कुरम्बी !"

कंधे पर सीढ़ी और हाथ में मिट्टी के तेल का पीपा लिए लंगड़ाते-लंगड़ाते चलने वाले कुञ्चक्कन ने कहा। उसे सुनकर कुरम्बी अम्मा आनंद-विभोर हो गईं।

गस्तोन साहब की वधू पाण्डुचेरी के भूतपूर्व मेयर शेवालिए इन्न्यास साहब की बेटी तेरेसा थी। फूटती जवानी। अच्छी तंदुरुस्ती। शराब का रंग था उसकी आंखों का। पातार समुद्र-तट के शिरीष के फूल जैसे लाल-लाल थे उसके ओठ।

शादी होने के दूसरे ही दिन गस्तोन साहब और वधू सुहागरात मनाने के लिए जहाज पर चढ़कर पाण्डुचेरी चले गए।...

सुहागरात मनाने के लिए गए गस्तोन साहब अकेले ही वापस आए। देखने पर पहचान में न आने जैसे बदल गए थे वे। कपोलों पर बढ़ी हुई दाढ़ी, झुकी पीठ, नित्य दुःख की स्रोत जैसी आंखें।

"कैसी गजब की बात है यह !"

मय्यषी के लोग भौंचक्के रह गए। दामू कुछ दिनों तक कचहरी नहीं गया। लेस्ली साहब और मिस्सी तो मृतप्राय हो गए।

पाण्डुचेरी से आने वाले दिन ही गस्तोन साहब ने बंगले के अपने कमरे में घुसकर अंदर से दरवाजा बंद कर लिया। फिर उस कमरे से बाहर निकले ही नहीं। गस्तोन साहब की दुनिया उस चहारदीवारी के अंदर सिमट गई। उसके बाद उन्हें किसी ने भी नहीं देखा। सूरज की रोशनी न मिलने से उनका शरीर पीला पड़ गया। बाल बढ़ते-बढ़ते कंधों तक पहुंच गए। आंखें नित्य दुःख की दीपशिखा बन गईं।...

एक दिन आधी रात के बाद, मय्यषी के लोगों के सो जाने के बाद, बड़े फिरंगी साहब की दावत के बाद, आखिरी घोड़ागाड़ी के आंखों से ओझल हो जाने के बाद लेस्ली साहब के बंगले के ऊपर से गिटार का निनाद गूंज उठा।

दुःख का आलाप, हिजड़े का संगीत।

जमाना बीतता गया।

लेस्ली साहब के लिए अल्बेर तो न जाने कब का हाथ से निकल चुका था। गस्तोन मरा जैसा हो गया। उस दुःख से लेस्ली साहब को छुटकारा नहीं मिला। लाली लाटसाहब के उत्तराधिकारी का दावा करने वाले क्लेमां साहब के पास ही उसी दुःख में छाती पर क्रूस रखे लेस्ली साहब आज शाश्वत निद्रा में लीन हैं।

तीन

वीर्य जैसे रंगवाले और क्रौंच द्वीप जैसे सुशांत प्रभात में दासन पैदा हुआ था।

कुकुही ने बांग दी। कन्या-झिल्ली जैसी झीनी अंधियारी में मय्यषी डूबी पड़ी थी। बैठक में बिछाई गई दरी पर मुंशी दामू सो रहे थे। कौसू का प्रसव-काल पास आ जाने पर वे बैठक में सोने लगे थे।

"अब सहा नहीं जाता, मैय्या री..."

"हे मेरे राम !"

मुंशी ने जागकर कान दिए। कौसू का स्वर पहचान लेने पर वे उठकर अंदर गए। अंदर रोशनी से ज्यादा धुआं उड़ाने वाला कांच का दिया जल रहा था। बिखरे बालों के बीच डबडबाई दो आंखें। पीला पड़ा चेहरा।

"कौसू को प्रसव-वेदना शुरू हो गई।"

कुरम्बी अम्मा ने सूचना दी। मुंशी दामू की आंखें पत्नी की कलाइयों पर पड़ीं। खून निकल रहा था। धोती पर भी खून दीख रहा था।

"यह क्या है कौसू ?"

सृष्टि की वेदना सहने वाली कौसू कुछ भी बोल नहीं पाई। कुरम्बी ने ही उत्तर दिया, "उसने काट खाया है।"

अपनी कलाई पर काट खाने जैसे मुंशी दामू सिहर उठे।

"बाप रे !"

"जरा चुप रहो बिटिया !"

कौसू के पास बैठकर कुरम्बी अम्मा ने उसके बालों पर हाथ फेरते हुए सांत्वना देने की कोशिश की।

"औरत होकर पैदा होने पर यह सब सहना ही पड़ेगा।"

किंकर्तव्यविमूढ़-से मुंशीजी थोड़ी देर वहीं खड़े के खड़े रह गए। फिर दाई को बुलाने बाहर निकले।

"इस असमय में वह आएगी ?"

दामू के निकलते समय कुरम्बी अम्मा अपने आपसे पूछ बैठी।

ग्रहण पड़ने वाली रात जैसी शून्यता और नीरवता ! पुनीत कन्या मरियम का गिरजाघर धुंधले अंधकार में ढंका पड़ा था। निर्जन पुल के नीचे से मय्यषी नदी बह रही थी।

दामू धर्मशाला के पास वाले दाई कुञ्आणी के घर की ओर जल्दी-जल्दी चला। रियू घ्यू गुवर्णमान में पहुंचने पर दूर पर उसने घोड़ागाड़ियों का जुलूस देखा। आधी रात की स्तब्धता में टापों-घंटियों की आवाज। धुंधले आसमान के नीचे समुद्र और नदी के किनारे से होते हुए एक के पीछे एक घोड़ागाड़ी आगे बढ़ती जा रही थी।

घोड़ागाड़ियों के पास आ जाने पर मुंशी दामू सड़क के किनारे सिमटकर खड़े हो गए। एक के बाद एक घोड़ागाड़ी उनके पास से निकलती गई। शराब के नशे में ऊंघने वाले दावीद साहब, मेयर चेक्कु, मूप्पर सरषाम, आम रेंत्रेत, कुञ्जिकण्णेन आदि बहादुर लोग।

"दावीद साहब की घोड़ागाड़ी भी निकल गई।"

कुरम्बी अम्मा ने मानो हवा में कहा।

बहुत देर तक सिर पटकने के बाद पसीने से लथपथ चेहरे वाली कौसू निश्चल पड़ी है।

बड़े फिरंगी साहब की दावत के बाद घोड़ागाड़ियों के निकल जाने पर भी कुरम्बी को नींद नहीं आती। सिरहाने सुंघनी वाली डिबिया रखे लेटी कुरम्बी अम्मा कान देतीं। टापों की ताल और घंटियों के टनटनाने और पहियों के चरमराने से मय्यषी की सारी की सारी घोड़ागाड़ियों को कुरम्बी अम्मा पहचान लेती थीं। अनदेखे ही वे कह देतीं, "दावीद साहब की घोड़ागाड़ी भी निकल गई।"

सभी घोड़ागाड़ियों के ताल और स्वर उन्होंने अपने मन में संजो रखे हैं। खास तौर पर लेस्ली साहब की घोड़ागाड़ी का। लेस्ली साहब चल बसे। फिर भी हजारों घोड़ागाड़ियों के ताल-स्वरों में से लेस्ली साहब की घोड़ागाड़ी के ताल-स्वर कुरम्बी अम्मा आज भी पहचान लेतीं।

"कुञ्आणी अम्मा !" दामू ने दाई कुञ्आणी का दरवाजा खटखटाया।

"इस आधी रात में कौन है रे ?"

"मैं हूं दामू।"

"कौन-सा दामू रे ?"

"मुंशी दामू।"

"इस समय तुम्हें क्या चाहिए ?"

"जरा दरवाजा तो खोलो, मेरी कुञ्आणी अम्मा !"

अंदर रोशनी हुई। हाथ में कांच का दिया लिए कुञ्आणी अम्मा ने दरवाजा खोला। सिर पर ऊपर की तरफ बांधे थोड़े-से बाल। छेद बढ़ा-बढ़ाकर कंधे तक लटकने वाले कान।

"कौसू को प्रसव-वेदना होने लगी। तुम जरा चलो। कौसू की तकलीफ देखकर मैं खड़ा नहीं रह पाता, कुञ्ञाणी अम्मा !"

"तुम जाओ। सवेरा होते-होते मैं वहां आ जाऊंगी।"

"हाय रे कुञ्ञाणी अम्मा !"

कुञ्ञाणी अम्मा की आदत थी यह। किसी के भी आकर बुलाने पर टालमटोल करती। ज्यादा पैसा पाने की चालाकी।

"मुंशीजी, तुम मर्द हो न ? तुम्हारे साथ इस आधी रात को मैं अकेली कैसे आऊं ?"

गुस्सा पीकर दामू ने दयनीय स्वर में कहा, "तुम जितना चाहो, दूंगा। भगवान के खातिर जरा आओ।"

कुञ्ञाणी अम्मा की आंखें लालच से चमक उठीं, "कितना दोगे ?"

"पाव रुपया।"

उन दिनों पाव रुपया बहुत बड़ी रकम थी। कुञ्ञाणी अम्मा संतृप्त हो गई। धोती बदलकर दामू के साथ चल दी।

"मेरी बिटिया ! रोओ नहीं कौसू। दाई अभी आएगी। मेरी लाडली बिटिया..."

रोने वाली कौसू को कुरम्बी अम्मा सांत्वना दे रही थीं। कौसू ओठ काटती जा रही थी। मुंह में लबालब खून।

दामू और दाई के अंदर घुसते ही कुरम्बी अम्मा को तसल्ली हुई।

दामू के सामने वाले दरवाजे बंद कर लिए गए। सृष्टि का रहस्य वे जान न पाए। सृष्टि करने की ही स्वतंत्रता है उन्हें। बाहर बिछी हुई दरी पर बैठे वे एक-एक करके बीड़ियां पीते रहे।

कुञ्ञाणी अम्मा ही अंदर है। तजुर्बेदार दाई है वह। कितने ही जन्मों के लिए हाथ देने वाली है। दामू को तसल्ली हुई। फिर भी अंदर से कौसू की कराहें सुनकर अनजाने ही चौंक पड़ते हैं।

"कौसू, रोओ मत बिटिया !..."

कुरम्बी अम्मा भी कौसू की परेशानी देखते खड़ी नहीं रह पातीं। वे भी थोड़े-थोड़े आंसू बहाने लगीं। इसे देखकर जल्दी-जल्दी काम करने वाली दाई डांटने लगी, "तुम जाकर सो जाओ, कुरम्बी अम्मा !"

"मेरी पुनीत माता ! मेरी कौसू को..."

"तुम टरोगी नहीं यहां से ?"

दाई ने कुरम्बी अम्मा को बाहर धकेल दिया। कुछ बड़बड़ाती हुई वे धान रखने वाले लकड़ी के बड़े संदूक पर जाकर बैठ गईं। छत्तीस साल तक केलु अच्चन के साथ वे इसी संदूक पर लेटी थीं। वह केलु अच्चन आज कहां ? संदूक के पास कमरे के कोने में खोदकर गाड़े गए मिट्टी के घड़े में, लाल-लाल फूलों के बीच...

कुरम्बी अम्मा ने सुंघनी की डिबिया फेंटे से निकाली। चुटकी भर सुंघनी सूंघ लेने के बाद संदूक पर लंबी लेट गईं। कौसू की चीख-पुकार अब सुनाई नहीं पड़ती। कुरम्बी अम्मा की आंखें धीरे-धीरे बंद होने लगीं।

दूर पर टापों की आवाज ! गरदन पर बहुत सारे बालों वाले जोशीले सफेद घोड़े की टापों की आवाज ! कुरम्बी अम्मा चौंककर जाग उठीं। उनके कानों ने हजारों कानों की श्रवण-शक्ति अर्जित कर ली। दिल धड़कने लगा। टापों की आवाज पास-पास आती गई। पहियों की चरमराहट ! टापों की आवाज और पहियों की चरमराहट अचानक थम गई।

"कुरम्बी, कुरम्बी जरा सुंघनी दे दोगी ?"

दो साल पहले चल बसे लेस्ली साहब की आवाज ! कुरम्बी अम्मा सिर से पैर तक रोमांचित हो गईं। हिलने-डुलने और बोलने में असमर्थ वे लेटी ही रहीं।

"कुरम्बी, कुरम्बी, जरा सुंघनी दे दोगी ?"

निश्चल पड़ी कुरम्बी अम्मा की आंखें भर आईं। हिलने-डुलने और बोलने में असमर्थ वे लेटी ही रहीं। समय बीतता जा रहा है।

आखिर टापों की आवाज दूर होती गई।

कहीं एक मुरगी ने बांग दी। गिरजाघर से प्रभात का घंटा-निनाद हुआ। मय्यषी नदी पर प्रभात की किरणें फैलने लगीं।

एक बच्चे का दुर्बल रोदन; साथ ही दामू की आह्लादपूर्ण आवाज, "मां जी, लड़का..."

यों दासन पैदा हुआ। वैसे अति-भौतिक रहस्यों को गर्भ में धारण किए पड़े समुद्र में दूर पर स्थित, जन्मों के अंतराल में आत्माओं के विश्राम योग्य सफेद चट्टान से एक तितली मय्यषी की ओर उड़कर आ गई।

चार

चिड़ियों के चहचहाने से पहले दासन जाग पड़ा। जागते ही चारपाई से नीचे उतरकर मां को खोजने लगा। नाड़ा खुल जाने से जंघिया नीचे खिसक गया। काली करधनी दीखने लगी।

"मांजी, मुझे आज ही स्कूल जाना है न ?"

"बेटा, तू जाग गया ?"

बरामदे में लटकाए गए कांसे का दीया जलाने वाली कौसू दासन को देखकर अचंभे में पड़ गई। सात बत्तियों वाला वह कांसे का दीया कौसू रोज सुबह-शाम जलाकर रखती। शाम को दासन बैठक में बेंच पर बैठकर उस दीये की रोशनी में रामनाम जपता। तब कुरम्बी अम्मा भी उसके पास आ बैठतीं। वे राम नाम नहीं जपतीं। दासन के राम नाम जप लेने तक वे आंखें मूंदे बैठी रहतीं। राम नाम जपने के बाद जोड़े हुए हाथ अलग-अलग हटाने के पहले दासन मौन हो प्रार्थना करता, "मुझे सद्‌बुद्धि दें ! मांजी, पिताजी और दादीजी को कोई बीमारी न होए।"

रात में सोते समय बीच-बीच में चौंककर जागकर पूछ बैठता, "सुबह हो गई? स्कूल जाने का समय हो गया ?"

"इस आधी रात में तुझे स्कूल जाना है ?"

मुंशी दामू अपने बेटे को अपने से सटाकर कंधे पर थपथपाता।

मुंशी और कुरम्बी अम्मा जगे नहीं हैं। धुंधले उजाले में दूर पर गिरजाघर के ऊपर वाला क्रूस स्पष्ट दीखने वाला ही है। कुछ देर बाद गिरजाघर से सुबह का घंटानाद होने लगा।

रोज तीन बार वह घंटा बजाया जाता है—सुबह, दोपहर और शाम को।

"मांजी स्कूल कब जाना है ?"

"अभी बहुत देर है। तुम जाकर सो जाओ। समय हो जाने पर मैं जगा दूंगी न।"

यह सुनकर दासन निराश हो जाता। स्कूल जाने का भूत सवार रहता उस पर। दिन गिन-गिनकर काट रहा था। रोज सवेरे पड़ोसिन वनजा को स्कूल जाते देखकर वह मन मसोसकर रह जाता। छोटा-सा लहंगा पहने, काजल लगाए, बालों

में फूल खोंसे, उसके स्कूल जाते समय आंखों से ओझल होने तक वह उसे खड़ा देखता रहता। उसके हाथों में स्लेट और कापियां देखकर उसे ईर्ष्या होती। बरसात में एक छोटी छतरी लेकर वनजा जाया करती।

एक दिन वनजा को स्कूल जाते देखते समय दासन की आंखों से अचानक आंसू फूट पड़े।

"मेरे बेटे, रो क्यों रहा है ?"

कौसू भागती आई।

"मुझे स्कूल जाना है।"

दासन फूट-फूटकर रोया। कौसू को हंसी और रोना आया। दासन को गोद में बिठाकर उसने आंचल से आंसू पोंछ दिए।

"अगली साल तुम भी स्कूल जाना। तुम छोटे बच्चे हो न।"

कौसू ने तसल्ली देने की कोशिश की। लेकिन दासन के आंसू रुके नहीं।

स्कूल जाने की अदम्य अभिलाषा, ज्ञान पाने की असह्य पिपासा, एक दिन उस अभिलाषा ने बांध तोड़ दिया।

कौसू नहा रही थी। मुंशी कचहरी गया था। कुरम्बी अम्मा संदूक पर बैठी-बैठी ऊंघ रही थी। रात में तो उसे नींद आती ही नहीं। बड़े फिरंगी साहब की दावत के बाद बहादुरों की/घोड़ागाड़ियों को गुजरते देखने के इंतजार में रहती। उसके बाद अपने कानों को हजारों कानों की श्रवण-शक्ति देकर राह देखती बैठी रहती...केवल उसे ही दीख पड़ने वाली लेस्ली साहब की घोड़ागाड़ी की, सिर्फ उसे ही सुनाई पड़ने वाली स्वर्गीय लेस्ली साहब की आवाज की।

सबकी आंख बचाकर दासन ने पेटी खोली और धुली हुई जंघिया और कमीज निकालकर पहन लिए। मुंशी द्वारा कचहरी से लाए गए कागज के बंडल से नीले रंग वाली कांपी निकाल ली। फिर वह चल पड़ा।

गेरू पुता स्कूल वह कई बार देख चुका था। एक बार मां का हाथ पकड़े रियूद लग्लीस से जाते समय कौसू ने बताया था, "बड़े हो जाने पर तुम्हारे पढ़ने का स्कूल है वह।"

उसने स्कूल की ओर इशारा किया।

गेरू पुते उस स्कूल का चित्र अपने मन में संजोए दासन सड़क से चला। काफी दूर रास्ता तय कर लेने पर वह संदेह में पड़ गया। सामने तीन राहें। पूरब की ओर जाने वाली रियूद सिमत्तियेर। वह इरिमीस (मरघट) पर खतम होती है। वहां छाती पर क्रूस रखे क्लेमां साहब और लेस्ली साहब विश्राम कर रहे हैं। पश्चिम की ओर जाने वाली रियूद्यु गुवर्णमां। वह रियूद रसिदाम्स में मय्यषी नदी के किनारे विलीन हो जाती है। पुनीत कन्या मरियम के गिरजाघर के सामने से लंबी पड़ी रियूद लग्लीस।

राहों के संगम पर किस ओर जाना है, यह पता न होने के कारण दासन रुक गया। उसकी आंखें भर आईं। इस बीच चार-पांच लोगों ने उसे घेर लिया।

"तू कौन है, बेटा ?"

जवाब दिए बिना दासन फूट-फूटकर रोने लगा।

"तू कहां जा रहा है, बेटा ?"

"मुझे स्कूल जाना है।"

कांपी कसकर पकड़े डबडबाई आंखों से उसने आसपास खड़े लोगों की ओर एक-एक करके देखा। रोना धीरे-धीरे जोर पकड़ता गया। वह किसी से भी परिचित नहीं है। सभी अपरिचित चेहरे।

"यह मुंशी दामू का बेटा है।"

पादरी के सेवक ने उसे पहचान लिया। एक आदमी मुंशी को बुलाने के लिए कचहरी गया। दासन को गोद में लेकर सेवक शेखर की चाय की दुकान की ओर चल पड़ा।

"मुझे स्कूल जाना है।"

सेवक की गोद में वह रोने लगा। बात सेवक की समझ में आ गई। सबकी आंख बचाकर वह स्कूल जा रहा था।—सेवक ने दांतों तले उंगली दबा ली। दुधमुंहा बच्चा !

पांच मिनट के अंदर मुंशी कचहरी से भागा आया। वैसे उस दिन दासन की स्कूल-यात्रा की इतिश्री हुई।

एक साल बीत गया। आज दासन स्कूल जा रहा है। सड़कों के संगम पर किधर जाना है, यह जाने बिना असमंजस में पड़ने की जरूरत नहीं होगी। रियूद लग्लीस के गेरू पुते स्कूल का फाटक दासन के लिए आज खुला पड़ा है।

कुरम्बी अम्मा जागते ही बैठक में आकर पैर पसारकर बैठ गईं। डिब्बी से चुटकी भर सुंघनी लेकर सूंघ ली। उस दिन की पहली चुटकी।

दासन को पकड़कर गोद में बिठाते हुए कुरम्बी अम्मा ने कहा, "खूब मन लगाकर पढ़ना मेरे बेटे !"

"हूं।"

"पढ़-लिखकर बड़े आदमी बनना। लेस्ली साहब की तरह जज बनना।"

कुरम्बी अम्मा ने दासन के माथे पर चूम लिया। दादी की नंगी छाती की गर्मी में वह सिमटा बैठा रहा।

"फिर कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए तेरा चलना इस दादी को जरा देखना है।"

सुंघनी और विदूर स्वप्नों के नशे में दासन को छाती से सटाए कुरम्बी अम्मा ध्यानमग्न-सी बैठी रहीं। उस समय कुञ्चिचिरुता उस रास्ते से आई।

"बैठी-बैठी कौन-सा सपना देख रही हो, कुरम्बी अम्मा ?"

मोती जैसे दांत दिखाते हुए कुञ्ञिचिरुता हंस दी। रात-भर दावीद साहब के बंगले में रहने के बाद अपने घर वापस जा रही थी वह। सुनहली किनारी वाली धोती पर सलवटें पड़ गई थीं। बिखरे बालों को लापरवाही से बांधे थी। निंदासी होने पर भी हंसने वाली आंखें।

"तुम तो आज बड़े तड़के उठ गई हो, कुरम्बी अम्मा ?"

"दासन आज स्कूल जा रहा है।"

"मुंशी का लड़का ? स्कूल जाने की उमर हो गई उसकी ?"

कुञ्ञिचिरुता ने नाक पर उंगली रखी।

"भादो में वह पांच साल का हो गया। समय उड़ता जा रहा है, कुञ्ञिचिरुता ! तुम घोड़े पर चढ़ी क्यों खड़ी हो ? अंदर आकर बैठो।

कुञ्ञिचिरुता सड़क से बरामदे में चढ़ी। कौसू ने अंदर से एक कुरसी लाकर बरामदे में डाल दी। कुरसी पर बैठकर कुञ्ञिचिरुता ने जरा जम्हाई ली।

एक रात की नहीं, अनेक रातों की नींद।

"तुम्हारे साहब कल आए ?"

दावीद साहब मय्यषी में नहीं थे। सरकारी काम के लिए साहब कभी-कभी पाण्डुचेरी जाया करते हैं।

"कल शाम के जहाज में। आते ही आदमी भेजकर बुलवाया।"

"तुम्हें देखे बिना साहब को नींद नहीं आती है, ऐसा हो गया है न, कुञ्ञिचिरुता ?"

दावीद साहब ही कुञ्ञिचिरुता को अपने बंगले पर बुलवाया करते हैं। और सब कुञ्ञिचिरुता के घर जाया करते हैं। उसका एक कारण था। दावीद साहब कुंवारे हैं। अपने बंगले में रसोइया और अन्य सेवकों के साथ दिन बिता रहे हैं। दावीद साहब के कुंवारे रहने के पीछे कोई रहस्य नहीं है। गस्तोन साहब जैसा नसीब नहीं है उनका। उसका प्रमाण है, कुञ्ञिचिरुता।

"फिर भी तुम्हारे पिता जितनी उम्र है उस साहब की, कुञ्ञिचिरुता !"

"बुड्ढों को ही तो मेरी ख्वाहिश है, कुरम्बी अम्मा !"

कुञ्ञिचिरुता मुस्कुराई—दावीद साहब समेत मय्यषी के सभी पुरुषों को हथियाने वाली मुस्कान !

नाटा सुडौल शरीर। मटक-मटककर चलना। सोने जैसा रंग। दाड़िम जैसे सुंदर दांत। मेयर चेक्कु मूप्पन, दावीद साहब आदि के कुञ्ञिचिरुता के दरवाजे पर खड़े रहने में अचरज की कौन-सी बात है ?

"दासन कहां है ? अपने बेटे को जरा देखूं तो।"

"दासन नहा रहा है।"

कौसू ने कहा। कुञ्जिचिरुता कुएं के पास गई। उसे देखकर दासन शरमा गया। कुञ्जिचिरुता हंस दी।

"शरमाने की कोई बात नहीं बेटे ! तेरी मां बनने की उम्र है मेरी।"

दासन उसकी ओर पीठ करके खड़ा हो गया।

"कौसू, तुम दासन के लिए सोने की करधनी क्यों नहीं बनवा देतीं।"

दासन की कमर में बंधी काली करधनी को देखकर कुञ्जिचिरुता ने पूछा। साल-दो साल पहले खरीदी हुई करधनी। वह बिल्कुल बेरंग हो गई है। इस बीच कौसू ने कई बार खोलकर बांधी है। दासन दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

"तुम्हें मालूम नहीं कुञ्जिचिरुता, हम यहां कैसे दिन काट रहे हैं।"

सोने की करधनी की बात सुनकर अनजाने ही कौसू ने लंबी सांस भरी।

चलते समय कुञ्जिचिरुता ने अपने फेंटे से एक दुअन्नी निकाल ली। जार्ज पंचम के चित्र वाला पीला सिक्का।

"स्कूल जाते समय मिठाई खरीद लेना।"

कुञ्जिचिरुता ने सिक्का दासन के हाथ में जबरदस्ती पकड़ा दिया।

पैसा दीवाल पर रखकर दासन ने नहाना जारी रखा। नहा-धोकर, दलिया खाकर, धुला हुआ जंघिया-कमीज पहनकर वह स्कूल जाने के लिए तैयार होकर खड़ा हो गया। हाथ में स्लेट और कांपी, जेब में स्लेट साफ करने के लिए बथुए के डंठल और दवात रखी थी।

"दाहिना पैर आगे रखकर निकलो। भगवान का ध्यान करो।"

दादी के कहे अनुसार दाहिना पैर आगे रखना चाहता था। लेकिन जल्दी में निकलते समय सीढ़ी पर बायां पैर पड़ गया।

उन दिनों मय्यषी में तीन फ्रांसीसी स्कूल थे—एक्कोल द फीय, एक्कोल द गरसोन और कूर कोम्प्लमांतेर। पहला स्कूल लड़कियों का है। वनजा वहां पढ़ती है। दासन एक्कोल द गरसोन में पढ़ने जा रहा है। सर्टीफिका पास हो जाने पर एक्कोल द फीय और एक्कोल द गरसोन के बच्चों को कूर कोम्प्लमांतेर में भर्ती होना पड़ता है, ब्रवे के लिए पढ़ना हो तो।

पिता का हाथ पकड़कर दासन स्कूल के लिए चल दिया। वे रास्ते में मिस्सी के घर गए।

लेस्ली साहब का घर एक प्रेत-गृह की तरह सोया पड़ा है। बंगले के सामने एक ओर बिना घोड़े की गाड़ी जुए की लकड़ी पर खड़ी है। लेस्ली साहब की घोड़ागाड़ी झट से मय्यषी की सड़कों से गायब हो गई। बहुत सारे गरदन के बालों वाले सफेद घोड़े की टापों की आवाज सिर्फ कुरम्बी अम्मा ही अब सुना करती हैं।

मिस्सी बंगले से बाहर निकली। एंड़ी तक पहुंचने वाला काला चोंगा पहने है। लेस्ली साहब के मरने के बाद काले कपड़े ही पहना करती है मिस्सी।

"मिस्सी, दासन को स्कूल भेज रहे हैं।"

दासन के पास घुटनों पर बैठकर मिस्सी ने उसे छाती से लगाकर चूम लिया। उन्होंने दासन को 'केक' दी। मिस्सी की 'केक' मय्यषी के लोगों के बीच मशहूर है। क्रिस्तमस, कात्तोर्सषुइए नामक रिपब्लिक दिन आदि खास अवसरों पर मिस्सी 'केक' बनाया करतीं।

मिस्सी की केक खाना मय्यषी के लोग अपना अहोभाग्य मानते थे।

मुंशी दामू की निगाह अनजाने ही ऊपर की ओर पड़ गई। कारीगरी की गई और कालीन बिछाई हुई सीढ़ी खतम होने की जगह वाला दरवाजा बंद पड़ा है। किसी के भी सामने वह दरवाजा खुलता नहीं है। तीनों वक्त मिस्सी सीढ़ियां चढ़कर प्लेट, कप वगैरह सब दरवाजे के पास वाली छोटी मेज पर रख देती हैं। कुछ देर बाद नौकरानी चीरू खाली बरतन वापस ले आती है। कोई भी गस्तोन साहब से मिलता नहीं है। मुंशी दामू को गस्तोन साहब से मिले तीन साल हो गए।

आधी रात के परदे में आराम करने वाले मय्यषी के लोगों को गिटार से उठने वाला हिजड़े का विलाप-गीत, किसी दुःख-स्वप्न की तरह हमेशा सुला देता है। वैसे वे जानते हैं—हिजड़ा साहब अपना दुःखांत जीवन जारी रख रहे हैं।

"तेरा भला हो।"

मिस्सी ने दासन के सिर पर हाथ रखकर उसे आशीर्वाद दिया। एकाकीपन और दुःख के पिंजड़े जैसी मिस्सी की आंखें तब भीग गई थीं।

रियूद लग्लीस पर पहुंचते ही मुंशी ने फेंटे से दो मोमबत्तियां लेकर दासन को दे दीं। पुनीत माता के सामने जलाकर रख दे।"

वे गिरजाघर के अंदर घुसे। पुनीत कन्या मरियम की प्रतिमा के सामने हथेली की ओट करके दासन ने मोमबत्तियां जलाकर रख दीं। झट से गिरजाघर के शीशे के दीयों ने हिलते हुए आवाज की। कमान जैसे वातायनों से आई हवा ने दासन द्वारा जलाई गई मोमबत्तियां बुझा दीं। पल भर जीकर छटपटाकर मरने वाली आग की लौ की महक ही सिर्फ बाकी रह गई थी।

अनजाने ही मुंशी गहरी सांस ले बैठा।

गिरजाघर के सामने है दासन का स्कूल। गेरुए रंग की बड़ी इमारत। कितने ही समय से दासन द्वारा स्वप्न में देखा गया स्कूल। पिता के हाथ पकड़े अपने ही दिल की धड़कनें कानों में संजोए दासन स्कूल की सीढ़ियों पर चढ़ा।

स्कूल की छुट्टी वाले किसी एक दिन कुरम्बी अम्मा की गोद में बैठे-बैठे दासन ने पूछा, "मुझे किसने जन्म दिया ?"

"तेरी मां कौसू ने।"

सुंघनी के नशे में आंखें मूंदे बैठी कुरम्बी अम्मा ने जवाब दिया।

"मैं मांजी के पेट से निकला हूं ?"

"हां।"

गरमी और गंधवाली कुरम्बी अम्मा की छाती पर थोड़ी देर सिर टिकाए दासन यों ही बैठा रहा। जन्म देने से पहले वह कहां था ? दासन ने सोच-विचार किया। उसकी समझ में कुछ नहीं आया।

"दादी, मैं कहां था—अपने जन्म से पहले ?"

मय्यषी की सभी दादियों के पास उस प्रश्न का एक उत्तर है, "सफेद चट्टान पर।"

समुद्र में दूर पर एक बड़े आंसू की बूंद जैसी दिख पड़ने वाली सफेद चट्टान। मय्यषी की सारी संतानें वहीं से आती हैं। सूरज के समान चमकने वाली सफेद चट्टान पर जन्म का इंतजार करने वाली आत्माएं तितलियों की तरह उड़ती फिरती हैं।

"दादी, कहां है यह सफेद चट्टान ?"

सृष्टि की नेपथ्य रूपी सफेद चट्टान के बारे में दासन पहली बार सुन रहा था।

"उधर, समुद्र के उस सिरे पर।"

"देखने पर दीख पड़ेगी ?"

"ज्वार भाटा न होने पर दीख पड़ेगी।"

"आपने देखी है दादी ?"

"हां।"

हाथी के दांत से बनी सुंघनी की डिबिया से एक चुटकी सुंघनी सुड़ककर उत्तेजित की गई पूर्वजन्म की स्मृतियों के समान उन्होंने सिर हिलाया।

अगले दिन स्कूल जाते समय दासन समुद्र तट पर जा पहुंचा। तरंगों से रहित और मौन की गंभीरता में निमग्न समुद्र। दूर-दूर एक स्वप्न जैसी दीखने वाली सफेद चट्टान। उसके ऊपर तितलियों जैसी उड़ने-फिरने वाली आत्माएं, जन्म और पुनर्जन्म की प्रतीक्षा करने वाली आत्माएं, जन्म लेने के अंतराल में थोड़े विश्राम के लिए आई आत्माएं !...

निर्जन समुद्र-तट पर समुद्र की ओर ताकता हुआ दासन बहुत देर तक खड़ा रहा।

उस दिन बहुत देर करके ही वह स्कूल पहुंचा। दो पीरियड खतम हो चुके थे।

पांच

भालू साहब मर गए। क्लेमां साहब और लेस्ली साहब की तरह ही मय्यषी के लोगों के लिए कभी न भुला पाने वाला वर्णसंकर था, रोबेर साहब या भालू साहब।

नाटा शरीर। हाथ-पैर और चेहरे पर ही नहीं, गरदन पर भी बाल थे। इस प्रकार रोबेर साहब का नाम भालू साहब पड़ गया। क्लेमां साहब और लेस्ली साहब की तरह वे प्रतापी नहीं थे। एक हाफ पैंट तथा कालर और मारकीन की बिना बांह वाली कमीज ही थी उनकी हमेशा की पोशाक। जीवन का अधिकांश भाग ताड़ी के ठेके पर बिताया था।

रोबेर साहब ने पांचवें दर्जे तक ही पढ़ा था। भालू साहब के लिए स्कूल जाना फांसी के तख्ते पर चढ़ने जैसा था। स्कूल का नाम सुनते ही रोबेर को मिरगी मार जाती थी। रोबेर के पप्पा गब्रियल साहब रोज सवेरे एक लोटा पानी लेकर गिड़गिड़ाते :

"मोम्पेत्ती (मेरे बच्चे), उठो। मों षेरपेत्ती (मेरे प्यारे बच्चे), उठो।"

भैंसे की तरह सोने वाला रोबेर टस से मस तक नहीं होता। फिर चार-पांच बार गब्रियल साहब बुलाते। तब भी रोबेर हिलता-डुलता तक नहीं। तब लोटे का पानी मुंह पर उड़ेलकर वे रफूचक्कर हो जाते। मुंह पर पानी गिरते ही एक गरजन के साथ रोबेर झपटकर उठ बैठता। तकिया को कुरेदता और जमीन पर लोटता-पोटता। रोबेर के बाहर आते-आते गब्रियल साहब चाबियों का गुच्छा लिए नमक की दुकान चले गए होते।

रोबेर न तो मंजन करता न हाथ-मुंह धोता। नाद भरकर बाहर आते वक्त कंधे पर उठाकर ले जाने वाला पोक्कन किताबों का बैग लिए चबूतरे पर खड़ा मिलता। नमक की दुकान वाले गब्रियल साहब के पास क्लेमां साहब की तरह घोड़ागाड़ी नहीं थी। रोबेर पैदल चलकर स्कूल जाने को तैयार नहीं था। वैसे रोबेर को कंधों पर बिठाकर स्कूल ले जाने के लिए पोक्कन की नियुक्ति हुई।

हर दर्जे में रोबेर एक-एक, दो-दो साल फेल होता। पांचवें दर्जे में पहुंचते-पहुंचते उसकी उम्र पंद्रह साल की हो गई। तब भी रोबेर की दिनचर्या में कोई तब्दीली नहीं आई। रोज की तरह लोटे में पानी लाकर गब्रियल साहब गिड़गिड़ाते :

"मेरे बच्चे, मेरे प्यारे बच्चे, उठो।"

तब भी सवेरे पोक्कन आता। अपने से भी अधिक डील-डौल वाले रोबेर को कंधों पर लिए वह स्कूल जाता। उन दिनों मय्यषी में वह एक आम नज़ारा था।

एक बार अनहोनी बात हुई। रोज की तरह लोटे का पानी रोबेर के मुंह पर उड़ेलकर गब्रियल साहब भागे जा रहे थे। उस दिन रोजमर्रे के खिलाफ रोबेर साहब ने पप्पा का पीछा करते हुए उन्हें बुरी तरह पीटा। चबूतरे पर किताबों का बैग लिए खड़े पोक्कन को भी मार भगाया। इसके साथ ही रोबेर साहब की पढ़ाई-लिखाई की इतिश्री हो गई।

इस बीच पूरी की पूरी देह पर रोएं बढ़ चुके थे। इसके साथ ही भालू साहब नाम भी पड़ गया।

गब्रियल साहब के नमक की दुकान पर जाते समय रोज भालू साहब आकर पैसा मांगता।

"तुझे पैसा किसलिए ?"

"ताड़ी पीने के लिए।"

गब्रियल साहब पैसा दे देते। लेकिन शाम को दुकान पर जाकर भालू दुबारा पैसा मांगता।

"अब तुम्हें पैसा किसलिए ?"

"रंडी के पास जाने के लिए।"

यह सुनकर गब्रियल साहब छाती पर हाथ से क्रूस आंकते।

"भाग जा यहां से।"

"तुम नहीं दोगे तो मुझे पैसा कहां से मिलेगा। मुझे कोई नौकरी-चाकरी है क्या ?"

भालू साहब ने सफाई दी, "तुम मुझे कोई काम दिलवा दो। फिर मैं पैसा नहीं मांगूंगा।"

गब्रियल साहब पांचवां दर्जा तक पास न करने वाले रोबेर को कौन-सा काम दिलवाते। सिफारिश कराने की बात हो तो नमक के व्यापारी गब्रियल साहब का कस्बे में कौन-सा मान-सम्मान और ओहदा था। वे परेशान हो गए। आखिर गब्रियल साहब ने पुनीत कन्या मरियम के गिरजाघर के पादरी की शरण ली।

वैसे भालू साहब गिरजाघर में घंटा बजाने वाला बन गया। भालू के काम पर लगने वाले दिन सवेरे गिरजाघर के ऊपर वाले बड़े-बड़े घंटे तूफान की तरह मय्यषी में गरज उठे। उस दिन वह घंटा-निनाद मय्यषी के बाहर कितने ही मील दूरी तक सुनाई पड़ा। पादरी संतुष्ट हो गया। गब्रियल साहब भी।

गिरजाघर का घंटानाद सुनकर ही रोज सूरज मय्यषी के ऊपर उगकर आया

करता था। रोबेर साहब के घंटा बजाने का काम ले लेने के अगले दिन एक सद. के बाद पहली बार गिरजाघर से सवेरे का घंटानाद सुनाई नहीं पड़ा। पिछली रात ताड़ी पीकर बेहोश पड़े भालू साहब नमक की दुकान के बाहर पड़ा सो रहा था।

वैसे बड़ी मेहनत से गब्रियल साहब द्वारा दिलाई गई नौकरी से भालू साहब को हाथ धोने पड़े।

"भालू सा'ब जा रहा है, भालू सा'ब जा रहा है।"

रोबेर साहब को देखने पर बच्चे शोर मचाते। ये सब सुनकर गब्रियल साहब आंसू बहाते—गब्रियल साहब का इकलौता बेटा।

आधी रात तक भालू ताड़ी के ठेके पर बैठा खाता-पीता रहता। ठेके पर भालू साहब का दोस्त था पीलपांव वाला अन्तोणी। पीलपांव के अलावा उसे अंडवृद्धि भी थी—फुटबाल जितने बड़े-बड़े फोते। दोनों एक साथ आधी रात को ताड़ी के ठेके से बाहर निकलते। अन्तोणी धर्मशाला में रहता था। अपने-अपने ठिकाने तक किस्से सुनाते, गाना गाते, लड़खड़ाते वे दोनों एक साथ चला करते।

मय्यषी के दूसरे वर्णसंकर लोग यह देखा करते। उनमें क्रोध की आग भभक रही थी। बूढ़े गब्रियल साहब के प्रति सहानुभूति से ही वे चुपचाप रहे। मय्यषी के वर्णसंकरों के चेहरों पर कालिख पोतने वाले भालू को क्या वे यों ही छोड़ देते ?

एक दिन भालू साहब के पीते समय कंधों पर लादकर ले जाने वाला पोक्कन ठेके पर आ पहुंचा।

"एक बोतल ताड़ी और तीन पैसे के छौंके चने।"

सिर पर बंधे अंगोछे को उतारकर कंधे पर डालकर पोक्कन एक कोने में जा बैठा। ताड़ी उड़ेलकर गिलास मुंह की ओर ले जाते समय ही भालू चिल्ला पड़ा, "तू पोक्कन है न ?"

"हां जी।"

पोक्कन ने गिलास मेज पर रख दिया। उसने भालू साहब को तभी देखा था। पोक्कन अदब से बैठा रहा। भालू उठकर पोक्कन के पास गया।

"उठ रे !"

पोक्कन उठ खड़ा हुआ। भालू ने उसके गिलास की सारी की सारी ताड़ी एक ही सांस में अंदर कर ली।

"अब, बाहर आ रे !"

भालू ने हुक्म दिया। कुछ होने वाला है। ठेके वाला उण्णिनायर और उसके साथी ताकते खड़े रहे। भालू साहब पोक्कन का हाथ पकड़े बाहर चल दिया। उण्णिनायर और उसके साथियों की धुक-धुकी चलने लगी।

"कोई अत्याचार मत कर बैठना, भालू।"

उण्णिनायर ने विनम्रता से कहा। मारपीट करेगा, ऐसा सोचा था उण्णिनायर ने। उसका सोचना गलत निकला। लड़खड़ाते पैरों पर सीधे खड़े होते और बंद होने वाली आंखों को खोलने की कोशिश करते हुए भालू साहब ने आज्ञा दी, "मुझे उठा रे।"

पोक्कन भालू साहब को घूरकर देखता खड़ा का खड़ा रह गया। उण्णिनायर और उसके साथियों की समझ में कुछ भी नहीं आया।

"अबे, तुझसे ही तो उठाने को कहा है न ?"

भालू साहब ने हाथ उठाया। उण्णिनायर और उसके साथी दम साधे खड़े रह गए। पोक्कन तब भी किंकर्तव्यविमूढ़-सा खड़ा रहा। स्कूल में ले जाने वाला पहले वाला रोबेर नहीं है वह। पोक्कन भी पहले वाला पोक्कन नहीं रहा। सिर के सारे बाल सफेद हो गए हैं। पीठ भी झुक गई है।

"पोक्कन, साहब का कहना मान ले।"

उण्णिनायर ने समझाया। भालू के स्वभाव से उण्णिनायर भली-भांति परिचित है। पोक्कन हाथ जोड़े खड़ा है। चारों ओर लोगों की भीड़ है। सभी के चेहरों पर जिज्ञासा और भय। कुपित होकर भालू मुट्ठी बांधे आगे बढ़ा।

"मैं उठाए लेता हूं। मुझे सताओ नहीं—"

बुड्ढा पोक्कन भालू के पैरों पर गिर पड़ा। उसने उठकर अंगोछा लेकर कमर पर कसकर बांध लिया। भालू साहब उसके कंधों पर सिर के दोनों ओर पैर डाले बैठ गया।

"कसकर पकड़ लो साब !"

उण्णिनायर और उसके साथी हंसते खड़े रहे।

"चल।"

भालू ने आज्ञा दी। कमान की तरह टेढ़ी पीठ लिए पोक्कन चल दिया। दिन-दहाड़े लोग सड़क पर आ जा रहे हैं। उण्णिनायर और उसके साथी तालियां बजाकर हंस पड़े।

पोक्कन का सिर कसकर पकड़ते हुए भालू साहब समय-समय पर बताता रहा :

"अड्डे की ओर।"

"गिरजाघर के पास।"

"पातार समुद्र-तट की ओर।"

बूढ़ा पोक्कन भालू साहब को ढोता हुआ अड्डे और गिरजाघर होता हुआ पातार की ओर चलता रहा। पल-पल में झुकने वाली देह लिए हांफते हुए पोक्कन ने मय्यषी की परिक्रमा की। उस मेहनत की थकान से मरते दम तक पोक्कन को छुटकारा नहीं मिला।

गब्रियल साहब के मरने के बाद दूसरे वर्णसंकर लोगों ने भालू साहब को जाति-बहिष्कृत कर दिया। कुछेक ने उसे मारा-पीटा। कुछेक ने उसे समझाने की कोशिश भी की। लेकिन भालू साहब के नसीब की लगाम उनके हाथों में नहीं थी। पहले की तरह वह ताड़ी पीता, व्यभिचार करता और झगड़ा करता घूमता-फिरता रहा। अपने आपको बेइज्जत करते और दूसरे वर्णसंकरों को भी अपमानित करते भालू साहब जीवित रहा।

..."पीटर, पीटर"

सोते पड़े पीटर को एमिली ने झकझोरकर जगाया। पीटर सीधा लेटा सो रहा है। भालू साहब की ही आकृति-प्रकृति है पीटर की। पूरे शरीर पर रोएं भी हैं।

"पप्पा आए नहीं बेटे ! जरा जाकर देखो पीटर..."

एमिली गिड़गिड़ाई। गिरजाघर से प्रभात का घंटानाद हुआ। चिड़ियां चहकने लगीं। फिर भी पिछले दिन घर से गया भालू साहब लौटकर नहीं आया। बुढ़ापा आते-आते भालू साहब ने ताड़ी के ठेके को ही अपना मुकाम बना लिया। आधी रात हो जाने के बाद भी भालू बाहर नहीं निकलता। बची-खुची ताड़ी घड़े में उड़ेलकर उण्णिनायर कहता, "साहब, हम बंद कर रहे हैं।"

भालू साहब टस से मस नहीं होता। कोई उठाकर बाहर ले जाकर बिठा देता। उण्णिनायर ठेका बंद करके घर चला जाता। भालू साहब को जहां बिठाया जाता, वहीं वह लुढ़क जाता। नहीं तो सड़क के किनारे या किसी दुकान के सामने बेहोश पड़ा रहता। प्रभात का घंटा बज जाने और चिड़ियों के चहचहाने के बाद भी यदि साहब वापस नहीं आता तो एमिली, पीटर की शरण लेती, "तेरे पप्पा हैं न बेटे! जरा जाकर देख।"

"तेरा खसम है न! तू ही चली जा।"

पीटर ने करवट बदल ली। वह बड़ा हिम्मती है। रोबेर साहब को भालू साहब नाम देने वाले मय्यषी के लोग पीटर को भी चिढ़ाने का नाम देने की कोशिश किए बिना रहे नहीं। डिम्मन साहब। एक बार अड्डे के सामने उण्णिनायर और उसके साथियों ने पीटर को डिम्मन साहब कहकर पुकारा। पीटर ने सड़क पर पटक कर उनकी पिटाई की। कुञ्ञाणन का सामने वाला एक दांत टूट गया। इस घटना के बाद मय्यषी के लोगों में से किसी ने भी उसे डिम्मन साहब कहकर पुकारने की हिम्मत नहीं की।

पीटर के करवट बदलकर लेटे रहने पर रोबेर साहब की खोज में एमिली बाहर निकली। यह दैनिक कार्यक्रम बन गया। पातार समुद्र-तट के सीमेंट की बेंचों पर, धर्मशाला और नमक की दुकान के चबूतरों पर, पुनीत कन्या मरियम के गिरजाघर के फाटक पर एमिली हर जगह रोबेर साहब की खोज करती। वहां कहीं न मिलने

पर रियूद लागार से होकर उण्णिनायर के ठेके पर जाती। रास्ते में कुञ्चक्कन या मलयन कटुङ्ङन कोई बता देता, "वहां, उस कोने में पड़ा है तेरा साहब।"

उनकी बताई जगहों पर एमिली जाती। बत्ती वाले खंभे के नीचे एक कुत्ते के समान पैर पेट से सटाए सो रहा होता रोबेर साहब। साहब को एमिली पकड़कर उठाती। सफेद दाढ़ी-मूंछ पर लगी कै पोंछ देती। दूर पड़ी टोपी उठाकर सिर पर लगा देती। उनके कंधे पर सिर टिकाए चलने वाले साहब को लेकर एमिली रियूद लागार से होकर घर की ओर चलती। पुनीत गिरजाघर के सामने पहुंचने पर एमिली की आंखें सहज ही भर आतीं।

"उसकी मुसीबतें..."

मय्यषी के लोग सहानुभूति करते। बीवी के कंधे पर सिर टिकाए लड़खड़ाकर चलने वाला यह बेढंगा बूढ़ा, बंगला और घोड़ागाड़ी वाले लेस्ली साहब की बिरादरी के हैं, अपनी शिराओं में लाली लाटसाहब के खून का दावा करने वाले क्लेमां साहब की बिरादरी के हैं। मय्यषी के लोग सहानुभूति किए बिना कैसे रह सकते हैं ?

एक दिन थाली और डंडी लिए पैतल ताड़ी के ठेके पर आया।

"भालू साहब, खुशखबरी पता चली तुम्हें ? तुम्हारे बेटे की शादी हो गई।"

आंखों पर से टोपी हटाकर भालू साहब ने पैतल को घूरकर देखा। मय्यषी नगरपालिका का डुगडुगी पीटने वाला है पैतल। रिपब्लिक के दिन बड़े फिरंगी साहब के मय्यषी के लोगों को चावल और कपड़े देने, तूफान आने की संभावना होने या इस तरह की और किसी अन्य खास बात के होने पर पैतल डुगडुगी पीटता। गली-गली में घूमता-फिरता। ढाल की आकृति वाली थाली पर डंडी टनकाकर लोगों को बुलाकर नगरपालिका की मोहर वाला कागज खोलकर जोर से पढ़कर खबर सुनाता।

"पीटर ने शादी कर ली है", भालू साहब को घूरते देखकर पैतल ने दुहराया।

"सच है पैतल ?"

उण्णिनायर और उसके साथियों ने पैतल को घेर लिया। उसने थाली और डंडी मेज पर रखकर ब्योरा दिया, "पंजीकृत शादी है। मेयर के दफ्तर में। लड़की कौन है, पता है ?"

"कौन है ?" उण्णिनायर और उसके साथियों ने एक स्वर में पूछा।

"रामन मिस्तरी की छोटी बेटी—जानू।"

रोबेर साहब के बेटे पीटर साहब ने एक हिंदू लड़की से शादी की है। उण्णिनायर और उसके साथियों ने नाक-भौं सिकोड़ीं।

मछली की कढ़ी में उंगलियां डुबोकर चाटने वाला रोबेर साहब झटपट उठकर बाहर निकला।

"किधर जा रहे हो, भालू साहब ?"

जवाब दिए बिना भालू साहब रियूद लागार से होते हुए सीधे चलता बना।

शादी के बाद बीवी को घर में पहुंचाकर जाल लेकर पीटर पातार समुद्र-तट पर पहुंच गया था। मछली पकड़ते समय पीटर ने भालू साहब की गरजन सुनी, "अबे कुत्ते के बच्चे, किससे पूछकर तूने उस कोरिन से..."

भालू साहब पूरा नहीं कह पाया। क्रुद्ध पीटर की आंखों से निकलीं चिनगारियों ने उसके मुंह में ताला लगा दिया, "अपनी मनचाही लड़की से मैं शादी करूंगा, तू कौन होता है पूछने वाला ?"

भालू साहब ने पीटर का गला पकड़ लिया। अपने को छुड़ाकर पीटर ने चेतावनी दी, "मार-मार के दांत तोड़ दूंगा। बताए देता हूं।"

सुन्न पड़े हाथों वाला भालू साहब कांपता खड़ा रहा। फिर अपने घर की राह पकड़ी। पीटर ने पीछे से चिल्लाकर कहा, "जा कहां रहा है ? घर पर जानू है। कुछ मनमानी की तो हड्डी-पसली एक करके रख दूंगा तेरी !"

पीटर की धमकी की परवाह नहीं की भालू साहब ने। उसके बेटे को मोहकर वश में करने वाली रामन मिस्तरी की बेटी से दो बातें पूछनी है। अपने घर से मार मारकर भगाना है। भालू साहब हठ के साथ कुछ कर गुजरने के लिए चल पड़ा। चबूतरे पर खड़े-खड़े भालू साहब ने पुकारकर कहा, "री रंडी की बच्ची ! निकल बाहर।"

जानू आई। छपाईदार ब्लाउज और सफेद धोती। माथे पर काला टीका, हवा में उड़ने वाले घुंघराले बाल, उभरे उरोज। उस सुंदरी को देखते ही भालू साहब भौंचक्क रह गया।

"क्या बात है पिताजी ?"

"जरा-सा पानी लाओ।"

भालू साहब बरामदे की बेंच पर बैठा-बैठा हांफने लगा। एक गिलास भरकर नमक पड़ा मांड़ जानू ले आई। पूरा पी लेने तक पास ही खड़ी रही।

"और चाहिए पिताजी ?"

"हां।"

जानू के चेहरे और छाती पर बार-बार निगाह डालते हुए हामी भरी। जानू ने फिर मांड़ लाकर दिया। उस दिन और अगले दिन भालू साहब ने अनेक बार पानी मांगा। हर पांच मिनट पर भालू साहब अंदर की ओर देखते हुए पुकारकर कहता, "जानू, मुझे जरा पानी पिला दो।"

कुछ दिन बीत गए। एक रात पीटर की छाती पर सिर रखे हुए जानू ने सिसकते हुए कहा, "मुझसे यहां रहा नहीं जाता।"

यह सुनकर पीटर भौचक्का रह गया।

"पिताजी..."

"उसने क्या किया तुझे ?"

"पिताजी बहुत परेशान कर रहे हैं।"

पीटर की छाती पर मुंह औंधाकर वह फूट-फूटकर रोई। पीटर उस रात सो ही नहीं पाया। रोबेर साहब कुछ दिनों से बाहर जाता ही नहीं। बरामदे में ही जमा रहता। पीटर उस पर गौर किए बिना नहीं रहा।

"रे पीटर, तेरे पप्पा को क्या हो गया ? बुड्ढा तो दिखाई ही नहीं पड़ता" उण्णिनायर ने पूछा, "शादी तूने की है या तेरे पप्पा ने ?"

ठेके पर सबने एक साथ ठहाका लगाया। सिर झुकाए बैठा पीटर ताड़ी की दो बोतलें चढ़ा गया। उसके ऊपर कुछ ठर्रा भी पी लिया। ठेके से बाहर निकलते समय आधी रात ढल चुकी थी।

घर में दीया बुझ चुका था। रोबेर साहब बरामदे में जिस बेंच पर लेटता था, वह खाली पड़ी थी। उड़काया हुआ दरवाजा धीरे से खोलकर पीटर अंदर पहुंचा। जानू जिस कमरे में लेटी है, उसकी खिड़की के पास बूढ़ा छिपा खड़ा है। धूमिल उजाले में करवट लिए लेटी जानू को भी पीटर ने देखा।

पीटर को देखते ही भालू साहब जरा चौंका। कुछ बड़बड़ाता हुआ बूढ़ा बरामदे में जाकर लेट गया।

"उठ।"

बूढ़े ने आंखें खोलीं तो रस्सी हाथ में लिए पीटर को खड़ा पाया। कुएं से पानी खींचने वाली बाल्टी से खोलकर लाई गई रस्सी। बूढ़े को उठाकर बरामदे के खंभे के पास ले जाकर बिठाया। रस्सी से खंभे में बांध दिया। फिर वह न जाने क्यों अंदर चला गया।

"मुझे मारे डाल रहा है, दौड़ो ! मुझे मारे डाल रहा है...!"

रस्सी से बंधझा भालू साहब जोर-जोर से चीखने लगा। तब तक पीटर वापस आ गया था। हाथ में बड़ी बोतल भर मिट्टी का तेल। पीटर ने तेल बूढ़े के सिर पर उड़ेल दिया। पतलून की जेब से निकाली दियासलाई जलाकर सिर पर आग लगा दी।...

रोबेर साहब के पास घोड़ागाड़ी या बंगला कुछ भी नहीं था। कस्बे में स्थान-मान भी नहीं था। फिर भी जिस श्मशान में लेस्ली साहब को दफनाया गया था, वहीं उसको भी दफनाया गया। इतना ही नहीं, मरघट की उनकी स्मारक शिलाएं पास-पास ही हैं। मय्यषी के वर्णसंकरों के बीच के दो वैरुध्य ही नहीं थे वे, अपितु मानव के दो चेहरे भी थे। सृष्टि के एक ही नियम के अनुसार वे दोनों जन्मे थे। फिर भी भिन्न-भिन्न नसीब हासिल कर अलग-अलग रास्तों से होकर काल-यवनिका के पीछे वे तिरोहित हो गए।...

मय्यषी के वर्णसंकरों की कहानी यहां भी खतम नहीं होती। इसके बाद भी वे बाकी थे। कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए, रखैलों और कुत्तों को पालते हुए वे क्रिसमस और रिपब्लिक दिनों पर अन्नदान करते हुए जीते आ रहे हैं। वैसे वर्णसंकरों का खून नई शिराओं को खोजता और पाता हुआ पीढ़ी-दर-पीढ़ी बहता जा रहा है।

छह

"बहुत पुराने जमाने में फ्रांस में..."

डिबिया खोलकर एक चुटकी सुंघनी सूंघकर कुरम्बी अम्मा कहने लगीं। कुरम्बी अम्मा की गोदी में बैठकर गलबांहें डाले दासन सुन रहा था।

"बहुत पुराने जमाने में फ्रांस में एक गड़रिये की लड़की रहती थी। उसके बाल सुनहरे रंग के थे। दया से भरी, चमकीली नीली-नीली आंखें। दोमरेमी के हरी-हरी घास के मैदानों में, नीले जल वाली नदी के किनारों पर वह अपनी बकरियां चराती घूमती-फिरती थी।

एक दिन अपनी बकरियों के साथ नदी-तट पर बैठते समय उसने एक अशरीरी वाणी सुनी।

"री गड़रिये की बच्ची ! तेरी जन्मभूमि खतरे में है।..."

उसने अपनी नीली-नीली आंखें उठाकर आसमान की ओर देखा। आसमान की गहरी नीलिमा से सफेद पंख फैलाए पवित्रात्मा माइकल उड़ते आ रहे हैं। गड़रिये की लड़की घुटनों के बल बैठ गई।

"गड़रिये की लड़की, हथियार उठाओ..."

उसके सिर के ऊपर पंख फैलाते हुए पवित्रात्मा माइकल गोल चक्कर लगाते हुए उड़े।

अंग्रेज जन्मभूमि को चारों ओर से घेर रहे थे। फिरंगी राजा एक-एक करके हथियार डाल रहे थे।

"षान तू ही फ्रांस को बचा सकती है। री गड़रिये की बच्ची, बढ़ रणक्षेत्र की ओर..."

घुटनों के बल खड़ी आसमान की ओर आंखें लगाए गड़रिये की लड़की हाथ जोड़े रही। उसके देखते-देखते पवित्रात्मा माइकल चांदी जैसे पंख फैलाए ऊपर उड़ गए। धीरे-धीरे एक सफेद कबूतर की तरह छोटे होकर आसमान की नीलिमा में विलीन हो गए।

दोमरेमी की गड़रिये की लड़की ही जन्मभूमि को बचा सकती है। अपनी बकरियों को छोड़कर कानों में पवित्रता का दिव्य स्वर लिए नीली आंखों में आंसू

भरे वह झोंपड़ी की ओर चल दी।

"पप्पा, मम्मी, मैं रणक्षेत्र में जा रही हूं।..."

"बिटिया, तू ?"

बच्ची की बात सुनकर वे भौचक्के रह गए। लेकिन पवित्रात्मा की आज्ञा की बात जानने पर वे भी घुटनों के बल खड़े हो गए।

जन्मभूमि की मान-रक्षा के लिए गड़रिये की लड़की रणक्षेत्र की ओर चल पड़ी। वह वोक्कुलेर नामक शहर में पहुंची। शासक कप्पित्तेन रोबेर द बोदिक्कूर से हथियार मांगे।

"पराक्रमी राजाओं के हारकर पीठ दिखाते समय री गड़रिये की लड़की, तू अंग्रेजों का क्या बिगाड़ सकती है ?"

कप्पित्तेन और शहर के निवासी गड़रिये की लड़की को देखकर हंस दिए। उन्होंने उसकी खिल्ली उड़ाई।

गड़रिये की लड़की निराश नहीं हुई।

पवित्रात्मा माइकल का ध्यान करके नीली आंखों में आंसू भरे गड़रिये की लड़की शीनोम नामक राज्य की ओर चल पड़ी। शीनोम के दयालु राजा ने उसे सेना और हथियार दिए। वैसे पुष्पलता जैसे हाथों में तलवार लिए उसने ओर्लयान्स की ओर सेना बढ़ाई। युद्ध करके अंग्रेजों को हराते हुए शहरों को एक-एक करके मुक्त करते हुए वह पेरिस की ओर बढ़ती गई।

गड़रिये की लड़की ने यों जन्मभूमि के मान-सम्मान को बचाया।

लेकिन कोम्बिएञ में वह घायल हो गई। वह जमीन पर गिर पड़ी। गुलाब के फूल की तरह कोमल शरीर खून से लथपथ हो गया।

रणक्षेत्र में घायल पड़ी गड़रिये की लड़की को छोड़कर भयभीत सैनिक दुम-दबाकर भाग गए। अनाथ पड़ी उस लड़की को उस रास्ते से आए बूर्ग्विञ के व्यापारी उठा ले गए। उन्होंने उसे कुछ सोने के सिक्कों के लिए अंग्रेजों के हाथ बेच दिया।...

गड़रिये की लड़की के हाथ आ जाने पर शत्रु लोग खुश हो गए। उनसे घुटने टिकवाने वाली, उन्हें अपमानित करने वाली। उसको उन लोगों ने निष्ठुरता से दंड दिया। गड़रिये की लड़की को जीते जी चिता में खड़ा करके जलाने का निश्चय किया।

व्येमार्शे में उन्होंने चिता बनाई। उस चिता के बीचोबीच उन्होंने गड़रिये की लड़की को लाकर खड़ा किया। यह देखकर वह डरी नहीं। उसकी आंखें ऊपर की ओर उठीं। हाथ जोड़े...

आग की लपटें चारों तरफ से उठीं। आग की लपटों ने उसका आह्वान किया। तब भी वह मौन रही। ऊपर उठी आंखों और अंजलिबद्ध हाथों के साथ वह खड़ी रही। धीरे-धीरे वह जीते जी जल गई।... "

कुरम्बी अम्मा की आंखों से आंसू टपक पड़े। दासन की आंखें भी भर आई थीं।

मय्यषी की कोई भी दादी आंसू टपकाए बिना षानदार्क की कहानी कह नहीं पाती। मय्यषी का हर बच्चा जीते जी जलाई गई गड़रिये की लड़की की कहानी सुनकर ही बड़ा होता है। लेस्ली साहब के बचपन में क्लेमां साहब ने उसे गोद में बिठाकर यह कहानी कह सुनाई थी। गस्तोन को गोद में बिठाकर लेस्ली साहब ने भी वह कथा उसे कह सुनाई। गड़रिये की लड़की की दर्दनाक कहानी सुनकर आंसू बहाए बिना रहने वाला एक भी बच्चा मय्यषी में हुआ ही नहीं।

कुरम्बी अम्मा ने हाथ से आंसू पोंछे। फेंटे से डिबिया निकालकर चुटकी भर सुंघनी सूंघ ली। उसके नशे में आंखें मूंदे बैठी रहीं। दासन बरामदे में खंभे पर टेक लगाए बैठा रहा। उसके मन में व्येमार्शे की चिता और उसके बीचोबीच अंजलिबद्ध खड़ी गड़रिये की लड़की भरी पड़ी थी। उसकी आंखें भरती और सूखती रहीं।

थोड़ी देर बाद कुञ्चक्कन लंगड़ाता हुआ उस रास्ते से आया। कंधे पर सीढ़ी और हाथ में मिट्टी के तेल का पीपा था।

दासन के घर के सामने बत्ती का एक खंभा था। रोज सवेरे उसमें तेल डालने और धुएं से काले हुए शीशे को पोंछने के लिए कुञ्चक्कन आता था। तब बैठक में पैर पसारे बैठी कुरम्बी अम्मा कहतीं, "थोड़ा-सा ज्यादा डाल दे कुञ्चक्कन।"

"सूप्पी मालिक का स्वभाव तुम जानती नहीं कुरम्बी?"

नगरपालिका की बत्तियां निलामी पर लेने वाला सूप्पी मालिक था। वह कंजूस था। रात में सड़क पर घूमता हुआ बत्तियां देखा करता। आधी रात के बाद कोई बत्ती जलती देखने पर सूप्पी मालिक आगबबूला हो जाता।

"तू मेरी पत्तल में छेद कर रहा है, नमकहराम ?"

मालिक कुञ्चक्कन को गालियां देता। कुञ्चक्कन मालिक से डरता भी था। इसलिए वह बड़ी सावधानी से दीयों में तेल डाला करता था। आधी रात के बहुत पहले ही दासन के घर के सामने वाली बत्ती बिना तेल के जलती-जलती बुझ जाती।

लेकिन कुछ बत्तियां पौ फट जाने पर भी नहीं बुझती थीं। दावीद साहब, मेयर चेक्कु मूप्पर सरषाम आम रेत्रेत कुञ्जिकण्णेन आदि लोगों के बंगले के सामने वाली बत्तियां थीं वे। मय्यषी के सभी प्रतिष्ठित लोगों के घर के सामने बत्तियां थीं।

"सा'ब मुझे भी चाहिए एक बत्ती।"

एक दिन कुञ्चिरुता ने आशिक दावीद साहब से कहा। उसका घर जिस गली में है, उसी में है पुलिस वाले रामन का घर। इसलिए उस गली वाली बत्ती सहज में ही उसके घर के सामने रखी गई थी।

कुञ्ञिचिरुता की इच्छा दावीद साहब ने पूरी कर दी। दूसरे ही दिन कोलतार पुता लकड़ी का खंभा उसके घर के सामने गाड़ा गया।

चरमराते जूते पहने और तुर्की टोपी लगाए इत्र की सुगंध फैलाते हुए सूप्पी मालिक आ खड़ा होता और पूछता, "कुञ्ञिचिरुता, तेरी बत्ती जल रही है ?"

"जल रही है मालिक।"

कुञ्ञिचिरुता कहती। उसके घर के सामने वाली बत्ती एक दिन पौ फटने से पहले ही बुझ गई। उस दिन सूप्पी मालिक पर भूत सवार हो गया।

"तेरा दूसरा पैर भी मैं तोड़ डालूंगा। देख लेना", उसने कुञ्चक्कन को चेतावनी दी। उस दिन के बाद पौ फट जाने के बाद भी कुञ्ञिचिरुता की बत्ती नहीं बुझती थी।

लंगड़े पैर को कठिनाई से उचकाते हुए सीढ़ी पर चढ़कर कुञ्चक्कन ने बत्ती का शीशे का चौखटा खोला। तेल डालते समय उसने एक नजारा देखा। कुञ्चक्कन का लंगड़ा पैर नीचे से ऊपर तक सुन्न हो गया। छड़ी घुमाता हुआ पुलिस वाला रामन। पीछे कंपाउंडर शिशुपालन और चपरासी भार्गवन।

कुञ्चक्कन सीढ़ी पर से नीचे कूद पड़ा। भागकर दासन के घर में घुस गया।

कुञ्चक्कन काफी उम्र का हो गया है। बेटे और पोते सब हैं। फिर भी टीका लगवाने से डरता है। हर साल एक पुलिस वाले को साथ लिए शिशुपालन और भार्गवन यों आया करते हैं। वे घर-घर में जाकर चेचक का टीका लगाया करते हैं। अभी तक उन्होंने कुञ्चक्कन को टीका नहीं लगाया है। उसका वह मौका ही नहीं देता था।

"कुञ्चक्कन, लंगोट में आग लगने जैसे तू इस तरह भाग क्यों रहा है ?"

"मेरी कुरम्बी, चेचक वाले आ रहे हैं। मैं इस समय कहां छिपूं ?"

"कुञ्चक्कन, तू मकान के पीछे जाकर छिप जा।"

उसकी घबराहट देखकर कौसू को सहानुभूति हुई। उसे हंसी भी आ गई। पुलिस वाला रामन और साथी बरामदे में घुस आए।

"बैठो मोसिए।"

कौसू ने धोती के छोर से बेंच पोंछकर साफ किया। पुलिस वाला छड़ी और टोपी गोद में रखकर बैठ गया। हाथ वाला पुराना बड़ा रजिस्टर खोलकर भार्गवन ने नाम पुकारा :

मदाम कुञ्ञिपरेम्बिल केलन, स्वासांत त्रुआसान (तिरसठ साल)।

मोसे कुञ्ञिपरेम्बिल दामू, त्राम तान (तीस साल)।

मदाम दामू, वेंत्रुआसन (तेईस साल)।

मोसे कुञ्ञिपरेम्बिल दासन, सेतान (सात साल)।

उसके बाद कंपाउंडर शिशुपालन ने एक-एक करके टीका लगाया। बाहर

निकलते समय अनाथ पड़ी कुञ्चक्कन की सीढ़ी उनकी निगाह में पड़ी।

"वह इस साल भी छिपा घूम रहा है।"

"इस बार मैं उसे यों ही नहीं छोडूंगा।"

पुलिस वाले रामन ने हठपूर्वक चारों तरफ कुञ्चक्कन की खोजबीन की।

"कुञ्चक्कन कहां है, कुरम्बी अम्मा ?"

"मैंने नहीं देखा, बाबा।"

कुरम्बी अम्मा आंखें मींचे बैठी रहीं। शिशुपालन के कंपाउंडर और भार्गवन ने आपस में कुछ कहा। पुलिस वाले रामन ने मूंछ पर ताव दिया। "कुरम्बी अम्मा, उससे कह देना—इस बार मैं उसे यों ही नहीं छोडूंगा। इस साल उसने टीका न लगवाया तो मेरा नाम रामन नहीं।"

रामन और उसके साथियों के मोड़ पर ओझल हो जाने पर कुञ्चक्कन बाहर आया। आंखों में कृतज्ञता भरकर उसने कुरम्बी अम्मा की ओर देखा। दुबारा सीढ़ी पर चढ़कर काम में लग गया।

"कुञ्चक्कन जरा ज्यादा तेल डाल दो।"

कुञ्चक्कन ने वैसा ही किया। उसने दीया भरकर तेल डाला।

उस दिन दावीद साहब, चेक्कु मूप्पर सरषाम आम रेत्रेत कुञ्ञिकण्णेन के बंगले के सामने वाली बत्तियों की तरह कुरम्बी अम्मा के घर के सामने वाली बत्ती भी पौ फटने तक जलती रही। सात बजे तक भी वह बुझी नहीं। उसे देखकर कुरम्बी अम्मा फूली नहीं समाईं। एक दिन ही सही, उसके घर के सामने वाला दीया भी पौ फटने तक जलता तो रहा।

सवेरे कुरम्बी अम्मा ने दासन को गोद में बैठाकर डिबिया से सुंघनी निकालकर सूंघकर कुञ्चक्कन के लंगड़ेपन की कहानी कह सुनाई।

"कुञ्चक्कन के बाबा कुरुम्बच्चन का घर मीतल नामक मंदिर के पास पड़ोस में था। घर के सामने से देखने पर मंदिर के तीनों मंडप और रंगशालाएं दीख पड़ती थीं। सूरज के डूबने पर मंदिर के अहाते के ध्वज-स्तंभ की परछाईं कुरम्बनच्चन के घर की चहारदीवारी छू लेती थी।

कुरम्बनच्चन भी मय्यषी के अन्य लोगों की तरह मूंछ जमने के पहले ही ताड़ी पीने लगा था। घरों में जाकर पुताई करने का काम किया करता था। बुरे सावन* का महीना। रात-दिन घनघोर वर्षा होती रहती है। दो घूंट ठर्रा के लिए भी कोई चारा न देखकर कुरम्बनच्चन बरामदे में घुटने पेट से लगाए बैठा था। एक घूंट पिए अड़तालीस घंटे बीत गए। कोई भी उधार नहीं देता। बेचने या गिरवी रखने के

---

* केरल में सावन के महीने में घनघोर वर्षा होती है। इसीलिए उस समय लोगों को बेकार बैठना पड़ता है, फलतः आमदनी न होने के कारण गरीबों को भूखों मरना पड़ता है। इसी कारण से 'बुरा सावन' कहा जाता है।

लिए कुछ भी पास नहीं रहा। ठेके पर नारियलकस गिरवी रखकर परसों ही दो घूंट पी थी।

बरामदे में घुटने पेट से लगाए बैठा कुरम्बनच्चन झट से कोई खयाल आ जाने पर उछलकर खड़ा हो गया। पानी बरस रहा था। संध्या का समय। कुरम्बनच्चन अंगोछा सिर पर डाले बाहर निकला।

मंदिर के अहाते में लगा कदली का गुच्छा लोगों की आंख बचाकर काट लिया। गुच्छे को अंगोछे में छिपा लिया। लोगों की निगाह बचाते हुए ठेके की ओर बढ़ा।

"एक पौवा ठर्रा और मेरा नारियलकस।"

कुरम्बनच्चन ने केले का गुच्छा अम्बूनायर के पैरों के पास रख दिया। उण्णिनायर के बाबा अम्बूनायर का ठेका था। अम्बूनायर ने बिना किसी हिचक के एक पौवा ठर्रा दे दिया। ठर्रा पीकर बाहर निकलते समय गिरवी रखा नारियलकस भी वापस दे दिया।

शराब के नशे में नारियलकस बगल में दबाए गाना गाते कुरम्बनच्चन गली से होते हुए चल दिया। आधी रात के बाद का समय। धुंधले आसमान से बूंदें टपक रही थीं। मंदिर के अहाते से चंपक के पेड़ से मदमस्त करने वाली सुगंध बह रही थी।

मंदिर के सामने पहुंचने पर कोई आहट पाकर कुरम्बनच्चन ठिठक गया। नूपुरों की रुनझुन। धुंधले अंधेरे में एक उजलापन। कुरम्बनच्चन की छाती धुकधुकाने लगी। नशा रफूचक्कर हो गया। घूरती हुई आंखों से वह स्तब्ध खड़ा रह गया।

"मेरा कदली का गुच्छा कहां है ?"

नारियल की कोंपलों से ढंके पैरों वाला नूपुर पहने देवता गुलिकन मंदिर के अहाते से बाहर निकला।

भय के मारे कुरम्बनच्चन के सिर के बाल खड़े हो गए। शरीर के सारे के सारे रोंगटे खड़े हो गए।

"कहां है मेरा कदली का गुच्छा ?"

उग्रमूर्ति परदेवता का सवाल। कुरम्बनच्चन देवता के पैरों पर गिर पड़ा।

"बंदे को माफी दें।"

देवता अपने पैरों के पास गिरे पड़े कुरम्बनच्चन को नूपुर पहने पैरों से धकेलकर जरा कूकते हुए सीढ़ियां चढ़कर मंदिर के अंदर भाग गया। मंडप से इसके बाद भी एक-दो कूकें सुनाई पड़ीं।

कुरम्बनच्चन चंपक के झड़े पड़े फूलों से भरी पड़ी जमीन पर निश्चल पड़ा रहा। बगल में दबा नारियलकस दूर छिटका पड़ा था। कितनी देर पड़ा रहा, इसका कुरम्बनच्चन को पता नहीं। अंत में उठकर चलना शुरू किया तो दाहिने पैर से लंगड़ाने लगा।

कुरम्बनच्चन के बेटे कुञ्जिकुट्टी के पैदा होने पर उसके भी दाहिने पैर पर लंगड़ापन था। कुञ्जिकुट्टी के बेटे कुञ्चक्कन के पैदा होते समय वह भी दाहिने पैर से लंगड़ा निकला।"

"लेकिन कुञ्आणनच्चन तो लंगड़ा नहीं है न ?"

कहानी सुनने वाले दासन ने पूछा। यह सुनकर कुरम्बी अम्मा जरा परेशान हो गईं। कुञ्चक्कन का बेटा है कुञ्आणन। उसके पैर में लंगड़ापन नहीं है।

"देवता की नाराजगी दूर हो गई, इसीलिए ऐसा है।"

कुरम्बी अम्मा ने डिबिया से चुटकी भर सुंघनी निकालकर सूंघ ली।

"अब तुम जाकर खेलो बेटे !"

लेकिन दासन नहीं गया। स्कूल में उस दिन छुट्टी थी। छुट्टी वाले दिन दासन कुरम्बी अम्मा का पिंड नहीं छोड़ता था। उसके लिए वह किस्सों और पौराणिक कहानियों का दिन होता था। मुंशी सवेरे उठकर कचहरी चले जाते। कौसू को घर में काम-काज से फुरसत ही नहीं मिलती। अलावा इसके, दासन की छोटी बहन हाल ही में पैदा हुई थी।

कुरम्बी अम्मा को कोई खास काम नहीं होता था। वे बरामदे में पैर पसारे बैठी रहतीं। रास्ते से गुजरने वाले कुञ्चक्कन, कुञ्आणन, कुञ्जिचिरुता आदि में से किसी एक को बुलाकर बातें करती समय बितातीं। वर्ना गिरजा को गोद में लिटाकर खेल खिलातीं।

"दादी एक कहानी और।"

दासन कुरम्बी अम्मा की छाया से जरा-सा भी दूर नहीं हुआ।

"मुझे एक पैसे की सुंघनी ला दे।"

"तो फिर कहानी सुनाओगी ?"

कुरम्बी अम्मा सहमत हो गईं। उसने फेंटे से एक छेददार पैसा निकालकर दिया। उसे उंगली में डालकर दुकान की ओर भागा। भागता हुआ वापस भी आ गया।

"अब कहानी सुनाओ दादी !"

सुंघनी लिए हांफता हुआ वह उसके सामने आकर खड़ा हो गया। सिगरेट के चमचमाते खोल में लपेटी सुंघनी को डिबिया में सतर्कता से डालकर उसे बंद करके अपने फेंटे में रख लिया।

"सुनाओ न।"

दासन उनकी गोद में चढ़कर बैठ गया।

"तुझे कौन-सी कहानी मैं सुनाऊं, दासन ?"

जितनी कहानियां उन्हें मालूम थीं, सारी की सारी अब तक वे सुना चुकी थीं। बहुत-सी कहानियां कितनी बार दुहरा भी चुकीं। अब कौन-सी कहानी वे सुनाएं ?

"सुनाई हुई काफी है। शेर और खरगोश की कहानी।"

"नहीं। नई कहानी।"

"नई कहानी के लिए मैं कहां जाऊं ?"

कुरम्बी अम्मा थोड़ी देर तक सोचती रहीं। उसके बाद उसने धीमे स्वर में दासन के कान में कहा, "नई कहानी सुना दूंगी। लेकिन किसी को बताना नहीं। बताओगे ?"

"नहीं", दासन ने सिर हिलाया। उसकी आंखें चमक उठीं। खुशी से उसका मन खिल उठा।

उस समय तक न सुनाई गई एक कहानी कुरम्बी अम्मा सुनाने लगीं—

कुञ्जिम्माणिक्यम के जमाने में उसके समान कोई दूसरी सुंदर लड़की मय्यषी में नहीं थी। तपाए सोने जैसा रंग था उसका। गहने और रेशमी वस्त्र पहने जब उसके चलते समय मय्यषी के मर्दों की नींद हराम हो जाती—खास तौर पर गोरों की। बंदरगाह पर जहाज पहुंचते ही कुञ्जिम्माणिक्यम की प्रशंसा सुनकर गोरे उसे पाने के लिए उतावले हो जाते थे।

एक बार रेशमी कपड़े बेचने के लिए तमिलनाडु से चेट्टियार आया। गोरों और वर्णसंकरों की औरतों को रेशमी कपड़े बेच-बेचकर चेट्टियार ने बहुत सारा पैसा बटोर लिया।

काला मोटा शरीर। दस में से आठ उंगलियों पर सोने की अंगूठियां। गले में सोने की माला। रेशमी कमीज।...मय्यषी के लोगों ने चेट्टियार को एक नाम दिया—वैश्रवणन चेट्टियार।

"कुञ्जिम्माणिक्यम !..."

सिर पर रेशमी कपड़ों की गठरी रखे सड़क पर खड़े होकर वैश्रवणन चेट्टियार ने पुकारकर पूछा, "आऊं ?"

कुञ्जिम्माणिक्यम ने सिर बाहर निकालकर देखा, "आज नहीं। अंदर बरनार साहब हैं।"

वैश्रवणन चेट्टियार निराश हो वापस चला गया।

"आज आऊं, कुञ्जिम्माणिक्यम ?" दूसरे दिन फिर आकर चेट्टियार ने चाह प्रकट की।

"बाप रे ! अन्तोणी साहब हैं अंदर।"

"कल कैसा रहेगा, कुञ्जिम्माणिक्यम ?"

वैश्रवणन चेट्टियार ने आशा छोड़ी नहीं।

कुञ्जिम्माणिक्यम ने दरवाजा बंद कर लिया। चेट्टियार उस दिन भी दुःखी होकर वापस चला गया।

अगले दिन चेट्टियार बरामदे में चढ़ आया। गठरी खोलकर कीमती रेशमी कपड़े

निकालकर कुञ्जिम्माणिक्यम के पैरों के आगे फैलाकर रख दिए। कुञ्जिम्माणिक्यम ने लालच से रेशमी कपड़े उलट-पुलट कर देखे।

"तो आज ?"

उसको अनसुना करते हुए कुञ्जिम्माणिक्यम ने एक सफेद रेशमी साड़ी छाती पर डालकर शोभा देखी।

"आऊं ?"

चेट्टियार ने जेब से स्वर्णशृंखला युक्त सोने की घड़ी लेकर कुञ्जिम्माणिक्यम के पैरों के पास रख दी।

"अभी नहीं। फ्रांसिस साहब हैं अंदर।"

कुञ्जिम्माणिक्यम सफेद रेशमी साड़ी और सोने की घड़ी लिए अंदर चली गई। दरवाजा भी बंद कर लिया।

वैश्रवणन चेट्टियार रोज आया। हमेशा सोना और रेशमी वस्त्र भेंट किए। लेकिन एक बार भी कुञ्जिम्माणिक्यम से संपर्क नहीं कर सका। चेट्टियार का ध्यान व्यापार से हटने लगा। रेशमी वस्त्र लेने के लिए कांचीपुरम् जाना भी छोड़ दिया। गोरों और वर्णसंकरों की औरतें रेशमी वस्त्र न मिलने की शिकायत करने लगीं।

दिन बीतते-बीतते वैश्रवणन चेट्टियार सूखकर कांटा हो गया। आंखें धंस गईं। दुबली उंगलियों से सोने की अंगूठियां ढीली होकर गिर गईं। आखिर एक दिन चेट्टियार ने कुञ्जिम्माणिक्यम से संपर्क किए बिना दम तोड़ दी।

कुञ्जिमाणिक्यम खिले नीलकमल वाले तालाब में जलक्रीड़ा के लिए जाया करती थी। धोती उतारकर घुटनों तक पानी में खड़ी होकर कांसे के बर्तन से तेल लेकर शरीर पर मल लिया। खुले हुए बाल, नंगे उरोजों और जांघों को ढंके हुए थे।

कुञ्जिम्माणिक्यम के नहाते समय तालाब के किनारे वाले केतकी के झुरमुट से एक सीटी बजी। हथेली से नाभि छिपाकर उसने चारों ओर देखा। कोई नहीं है आसपास। नीलकमल के फूलों के बीच केतकी के फूलों की सुरभि में वह नहाती रही।

अगले दिन भी केतकी के झुरमुट से एक सीटी बज उठी। उस दिन भी कुञ्जिम्माणिक्यम की नजर में कोई नहीं आया।

तीसरे दिन केतकी के झुरमुट से फूलों वाला सांप बाहर निकला। तालाब के किनारे फन फैलाए खड़ा सर्प कुञ्जिम्माणिक्यम का सौंदर्य निहारता रहा।

अगले दिन कुञ्जिम्माणिक्यम नीलकमल वाले तालाब में नहाने गई ही नहीं। तब सांप उसे खोजता आया। अहाते की पुष्पलताओं पर लटके सांप ने सीटी बजाई।

"हींग पानी में घोलकर घर के चारों ओर छिड़क दो", मंत्रवादी मलयन कुञ्जिरामन ने राय दी।

"हींग की महक के डर के मारे सांप रफूचक्कर हो जाएगा।"

कुञ्ञिम्माणिक्यम ने हींग घोलकर घर के चारों ओर छिड़क दी। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। सांप फिर भी आया। डर से थरथराती कुञ्ञिम्माणिक्यम दुबारा मलयन कुञ्ञिरामन से जाकर मिली।

"इतना आगे बढ़ गया ?"

क्रोध से मलयन की आंखों से आग फूट पड़ी। मरी मुर्गी तक को भी उड़ा देने वाला है मंत्रवादी मलयन कुञ्ञिरामन—डंसने वाले सांप को बुलाकर विष वापस लिवा लेने वाला।

"मेरी रक्षा करो।"

कुञ्ञिम्माणिक्यम की काजल लगी आंखें डबडबा आईं। पान खाकर लाल हुए उसके होंठ कांपने लगे।

मलयन कुञ्ञिरामन पलीते, हल्दी का बूरा और चतुश्शती* लिए कुञ्ञिम्माणिक्यम के घर गया। तांबे की शलाका पर मयूर ताम्र और पुन्नाग ताम्र को मिलाकर आठ त्रिशूल वाला अष्टकोण बनाया।—'ऊं क्षिपस्वाहा' नामक बीज मंत्र।

किरन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरुम्बामृतरसं
हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तमिव यः।

मलयन ने पलीतों के बीच में पलथी मारे बैठकर अंगारे जैसी आंखों में पलीतों के प्रतिबिंबों के साथ सांप से मुठभेड़ शुरू की।

ससर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव
ज्वरप्लुष्टान् दृष्ट्या सुखयति सुधाधारसिरया।

चारों ओर हल्दी का बूरा छिड़कते हुए मलयन उठ खड़ा हुआ।

"अब वह यहां पैर नहीं धर पाएगा।"

कुञ्ञिम्माणिक्यम को तसल्ली हुई। उसके द्वारा दिया गया चांदी का सिक्का लेकर मलयन चला गया। पलीते बुझ गए। जले घी और हल्दी के बूरे की गंध ही बाकी रह गई।

दूसरे दिन सवेरे घोंसले से बाहर आए बलिभोजी कौए कुञ्ञिम्माणिक्यम के घर के पास आए तो पंख फड़फड़ाए। कांव-कांव करते हुए कौवे शोर करने लगे। रेशमी बिस्तर पर कुञ्ञिम्माणिक्यम गहने पहने निश्चल पड़ी थी। नंगे उरोजों के बीच सिर सटाए मरा पड़ा सांप।

"कौन है वह सांप, जानते हो ?"

कुरम्बी अम्मा ने डिबिया से चुटकी भर सुंघनी लेकर नथुनों से सूंघकर आगे कहा, "वैश्रवणन चेट्टियार।"

---

* मंत्रवादी लोगों द्वारा भूत-प्रेतादियों को आवाहित करने के लिए नारियल की कोपलों से बनाया गया चौखटा।

अपनी गोद में सिर रखे लेटे दासन की पीठ पर ताल देते हुए कुरम्बी अम्मा ने लय से गाया,

"लाल-लाल फूलों जैसे गोरे लोग
कोषिक्कोड के बाजार में जहाज से उतरे..."

दासन की आंखें धीरे-धीरे मुंदने लगीं।

वैसे जीते जी दफनाई गई दोमरेमी की गड़रिये की लड़की की, सांप का रूप धरकर अपनी कामिनी से संपर्क करने वाले वैश्रवणन चेट्टियार की और कोषिक्कोड के बाजार में जहाज से उतरे गोरों की कहानियां सुन-सुनकर दासन बड़ा हुआ।

सात

"मास्साब, आप तैयार हो गए ?" कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के घर के सामने घोड़ागाड़ी खड़ी करके गाड़ीवान केलन ने पुकार कर पूछा।

केलन का घोड़ा लेस्ली साहब के घोड़े जैसा तेज चलने वाला और ऊंचे सिर वाला नहीं था। उसकी पसलियां सारी की सारी उभरी दीख पड़ती थीं। गरदन के बालों पर रेंगने वाली किलनियां। केलन के घोड़े को देखकर ऐसा लगता था मानो जरूरत से ज्यादा बड़ा कोई कुत्ता हो।

रेलवे स्टेशन एक मील दूर है। ज्यादा रेलगाड़ियां उस रास्ते से नहीं गुजरती थीं। सवेरे कोषिक्कोड की ओर एक स्थानीय पैसेंजर गाड़ी जाती थी। रात में अपनी बीवियों के साथ सोने के बाद मुसलमान लोग सवेरे वडकरा और नादापुरम इसी गाड़ी में जाया करते थे। पैसेंजर गाड़ी के चले जाने के बाद खाली घोड़ागाड़ी लेकर केलन कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के घर पहुंचता।

"मास्साब !..."

"केलन, मैं अभी आया।"

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की बड़ी बहन लीला बरामदे में आई। केलन गाड़ी से नीचे उतरकर एक बीड़ी सुलगाकर घोड़े के सहारे खड़ा हो गया।

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी बड़े आईने के सामने खड़े अपना रूप देखते रहे। कनपटी के ऊपर के बाल पक गए हैं। तीस साल की उम्र में ही बुड्ढे हो गए हैं। अस्पताल के दो हफ्ते के टिकाव ने उन्हें मोटा बना दिया था। फिर भी चेहरे का पीलापन गया नहीं था। पित्तग्रस्त जैसा सूजा चेहरा।

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी दुबारा आईने के सामने खड़े होकर अपना चेहरा देखते रहे। उन्होंने अपने ही चेहरे पर आंखें दौड़ाते हुए स्वयं कहा, "फिर केलन की वही घोड़ागाड़ी। फिर सवेरे नहा-धोकर स्कूल की यात्रा।...सब कुछ मैं दुबारा शुरू कर रहा हूं। मैं मरा नहीं।"

"कुञ्ञनन्तन, तू क्या बड़बड़ा रहा है ?"

"मैं मरा नहीं, लीला जिज्जी !"

यह सुनकर लीला का चेहरा फीका पड़ गया।

"अस्पताल से मैं जिंदा वापस आ पाऊंगा, यह मैंने सोचा ही नहीं था। आपसे सच बताता हूं।"

उसके पीले चेहरे पर एक मंद मुस्कान उभरी। लीला ने विषय बदल दिया।

"वह केलन तुम्हारे इंतजार में खड़ा है।"

कुञ्जनन्तन मास्टरजी ने एक बार और अपने आपको आईने में देखा। अस्तित्व का आह्लाद उनकी आंखों में उमड़ रहा था। चारपाई पर पड़ी किताबें लेकर वे जल्दी-जल्दी बाहर निकले। भागते-भागते सीढ़ियों से नीचे उतरे। वे बीमार आदमी हैं, यह तथ्य वे भूल गए। अपने हृदय की धड़कनें सुनकर उनके कान रोमांचित हो रहे थे।

"आप तो बड़े फुर्तीले दीखते हैं, मास्साब..."

केलन ने पीने वाली बीड़ी नीचे डाल दी।

"केलन, तुम सच-सच बताओ। मैं कोषिक्कोड से जिंदा लौट आऊंगा, ऐसा तुमने सोचा था ?"

"आप यह क्या फरमा रहे हैं, मास्साब ! आप नौजवान हैं न ?"

मास्टरजी का सवाल सुनकर केलन घबड़ा गया। नौजवान होने पर भी मास्साब लाइलाज रोग के शिकार हो गए। केलन यह जानता है। उसने गाड़ी का पीछे वाला दरवाजा खोल दिया। किसी मुसलमान के इत्र के गंध वाली लाल चमड़े की सीट पर वे बैठ गए। गाड़ी हिलती-डुलती आगे बढ़ी।

दो फर्लांग दूरी है स्कूल की। फिर भी मास्टरजी घोड़ागाड़ी पर ही आया-जाया करते हैं। दो फर्लांग पैदल चलने की ताकत भी उनमें नहीं थी।

सूजा मोटा रक्तहीन यह शरीर किसी भी पल निश्चल हो सकता है। इसी क्षण हो सकता है या अगले क्षण। नहीं तो कल हो सकता है। गर्दन तक कंबल ओढ़कर लेटते समय मास्टरजी को अपनी ही धड़कन मृत्यु की पदचाप जैसी लगती थी। मृत्यु का भार हमेशा उन्हें मरोड़ रहा था।

"कुछ भी हो, इस क्षण तो मैं मरा नहीं", गाड़ी के हिलडुलकर आगे बढ़ते समय कुञ्जनन्तन मास्टरजी ने अपने आपसे कहा। उन्हें तसल्ली हुई। धीरे-धीरे अस्तित्व का बोध उनकी संपूर्ण सिराओं में फैल गया। मैं जी रहा हूं—मास्टरजी के पैर की उंगलियों से लेकर सिर तक आह्लाद की तरंगें तरंगायित हो उठीं। उस आनंद-लहरी में वे अपने को ही भूल बैठे।

अस्तित्व के बारे में रह-रहकर उठने वाला यह विचार मास्टरजी के जीवन का सबसे बड़ा आनंददायी क्षण होता है। इससे बढ़कर और कोई आनंद उनके जीवन में है ही नहीं। गाड़ी के हिलडुलकर चलते समय मास्टरजी ने एक पुरानी घटना याद की—

एक दिन आधी रात के समय मास्टरजी पेशाब करने के लिए बाहर निकले। तारों की झिलमिलाहट में चमकने वाले गिरजाघर के फाटक का क्रूस। कोलतार पुते लकड़ी के खंभों पर जलने वाली बत्तियां। दूर से समुद्र का शांत-गंभीर निनाद सुनाई पड़ रहा था। उकडूं बैठकर पेशाब करते समय अकस्मात मास्टरजी को लगा—मैं जी रहा हूं। वे रोमांचित हो उठे। पूरा पेशाब किए बिना वे उठकर चल पड़े।

अधिक चलना मना है, वे जानते हैं। ओस में चलना नहीं चाहिए, यह भी पता है। फिर भी निर्जन सड़क पर सीधे चलते रहे। एकहरी धोती ही पहने थे। अपने अस्तित्व का मौन उद्घोष करते हुए आह्लादित हो रियूद लग्लीस, रियूद्यु गुवर्णमां और रियूद ला प्रिसोम से होते हुए चलते रहे...रोंगटों तक में भरा हुआ आह्लाद...उस वक्त अपने आपको ही भूल गए थे।

मुर्गे के बांग देते समय कुञ्ञनन्तन मास्टरजी वापस आए। सीढ़ियां चढ़ नहीं पाए। पेट के बल गिर पड़े। मुंह से फेन और लार बहने लगीं।

लीला की चीख-पुकार सुनकर कुछ लोग भागे-भागे आए। केलन अपनी गाड़ी लेकर डाक्टर को बुलाने गया। बारह घंटे के बाद ही मास्टरजी होश में आए थे। एक हफ्ते तक बीमार पड़े रहे।

बचपन में ही उनकी यह बीमारी शुरू हो गई थी। कितनी ही दवाइयां और काढ़े पी लिए। कोई फायदा नहीं हुआ। अषियूर से आए रामुट्टी वैद्य ने इसे राजयक्ष्मा बताया। उन्होंने काढ़ा लिखकर दिया। उन दिनों राजयक्ष्मा के लिए काढ़े के अलावा बकरी का दूध ही दूसरी दवा थी।

"दूध दुहकर ठंडा होने से पहले ही देना है। रोगी की चारपाई के पैर पर ही बकरी का बांधा जाना ज्यादा अच्छा है", रामुट्टी वैद्य ने कहा।

कुञ्ञनन्तन के पिता उसी दिन वडकरा के मवेशियों के मेले से एक बकरी खरीद लाए। मास्टरजी उन दिनों छोटे थे। जंघिया पहने घूमने-फिरने के दिन थे उनके। कुञ्ञनन्तन जिस चारपाई पर लेटते थे, उसी के पांव में बकरी को बांधकर दोनों समय दूध दुहकर पिलाया। कमरे में हमेशा बकरी की बू। गोबर से लिपे फर्श पर लेंड़ी।

बकरी ने दूध देना बंद कर दिया। कुञ्ञनन्तन मास्टर के पिता मर गए। फिर भी मास्टरजी की बीमारी दूर नहीं हुई।

कुञ्ञनन्तन ने जैसे-तैसे सातवें दर्जे तक पढ़ा। उससे ज्यादा पढ़ने के लिए सेहत ने उनका साथ नहीं दिया। उन दिनों सातवें दर्जे की परीक्षा बहुत बड़ी मानी जाती थी। परीक्षा पास होते ही कुञ्ञनन्तन को एक्कोल द गरसोन में अध्यापक का काम भी मिल गया।

"तू पढ़ाने जाएगा ?"

उठकर चलने में भी असमर्थ कुञ्ञनन्तन पढ़ाने जा रहा है, यह जानकर कुञ्ञूट्टी मामा ने डांटा-फटकारा।

"तेरे खाने-पीने की जरूरत भर का पैसा तेरे पिता ने कमाकर रख दिया है। मर-मिटने की नौबत तो आई नहीं।"

"पैसे की कमी होने से नहीं, मामाजी..."

"फिर किसलिए ?"

मामा की समझ में नहीं आया।

"रोज यों ही मुझसे बैठा नहीं जाता।"

"बीमार आदमी को यों ही बैठना चाहिए, नहीं तो क्या फावड़ा चलाना है ?"

मामा का कहना कुञ्ञनन्तन को बिल्कुल नहीं रुचा। अपने को बीमार के रूप में देखा जाना मास्टरजी को पसंद नहीं था।

"चल-फिर न पाने की कोई बीमारी मुझे नहीं है। जब तक मैं पढ़ा सकता हूं, पढ़ाऊंगा।"

कुञ्ञनन्तन ने दृढ़ता से कहा।

मास्टरों के अभाव का समय था वह। महीने में दस-पंद्रह दिन ही वे स्कूल जाते थे। बाकी दिन बीमार पड़े रहते। फिर भी स्कूल जाना छोड़ा नहीं। चल-फिर न पाने की हालत में केलन की घोड़ागाड़ी का इंतजाम किया।

घोड़ागाड़ी रियूद सिमित्तियेर को पीछे छोड़कर शेखरन की चाय की दुकान के सामने आ पहुंची।

"केलन, रोक तो जरा।"

मास्टरजी ने सिर बाहर निकालकर देखा। गिरिजा का हाथ पकड़े दासन पैदल आ रहा है। गिरिजा के हाथ में स्लेट है।

"चढ़ रे।"

मास्टर ने घोड़ागाड़ी का दरवाजा खोल दिया। दासन हिचकिचाता खड़ा रहा। गिरिजा की बड़ी-बड़ी आंखें घोड़ागाड़ी देखकर फट आईं। वह अभी तक घोड़ागाड़ी में बैठी नहीं थी।

"चढ़ रे।"

हिचकिचाते हुए ही दासन गाड़ी पर चढ़ गया। मास्टरजी ने गिरिजा को पकड़कर गोद में बिठा लिया।

"छोटी बहिन है न ?"

"ऊयी (हां) मोसिए।"

"किस दर्जे में है ?"

"पहले दर्जे में।"

गाड़ी के हिलने-डुलने का आनंद लेती गिरिजा बैठी रही। मास्टरजी और दासन

बातें करते रहे। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी दासन के क्लास-टीचर थे।

एक्कोल द गरसोन के सामने गाड़ी रुकी। मास्टरजी और दासन नीचे उतरे।

"केलन, दासन की छोटी बहिन को उसके स्कूल में छोड़ दे।"

गिरिजा को लिए केलन ने रियूद गुवर्णमान से होकर गाड़ी हांकी। गिरिजा का स्कूल रियूद ला प्रिसोम में था।

फिर वह रोजमर्रे की बात हो गई। दासन और गिरिजा को देखते ही मास्टरजी गाड़ी रोकने को कहते। मास्टरजी और दासन के उनके स्कूल में उतर जाने के बाद केलन गिरिजा को लिए उसके स्कूल चला जाता।

उस साल दर्जे में अव्वल था दासन। बच्चों में असुलभ गंभीरता वाला वह बुद्धिमान बच्चा कुञ्ञनन्तन मास्टरजी को बहुत पसंद आया।

"त्रे बियेन (बहुत अच्छा)।"

दासन की पीठ थपथपाते हुए उन्होंने उसका अभिनंदन किया। दिल के मरीज कुञ्ञनन्तन मास्टरजी धीमी आवाज में नेपोलियन और रूसो के बारे में बताते। उन्होंने गणित और इतिहास पढ़ाया। बहुत धीमी आवाज में ही वे पढ़ाते। कम-से-कम शब्दों में बड़े स्पष्ट ढंग से पूरा ब्योरा देते। किसी पर नाराज नहीं होते।

"वह कैसे पढ़ाएगा ? दिल का मरीज है न वह ?"

दासन द्वारा कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की प्रशंसा सुनकर कुरम्बी अम्मा दांतों तले उंगली दबा लेतीं।

"एक अच्छा-खासा नौजवान है, लेकिन यह कहने से क्या फायदा ? यह सब तो नसीब का खेल है", कुरम्बी आम्मां के अंतर्मन ने कहा।

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की तरह ही जीवन में व्याघात झेलने वाला दूसरा आदमी है गस्तोन साहब। लेकिन वे दोनों अलग-अलग रास्तों पर सफर कर रहे हैं। किसी भी क्षण मरकर गिर सकते हैं, यह मास्टरजी अच्छी तरह जानते हैं। जीने में वे आनंद का अनुभव कर रहे हैं। हिजड़ा साहब अपनी ही बनाई कारा में जीवन बिता रहे हैं।

गस्तोन साहब जब अपने को जन्म देने वाले बीज की ओर लौट जाने की कोशिश कर रहे हैं तो कुञ्ञनन्तन मास्टरजी पूरे प्रपंच में समाकर फैलने की इच्छा कर रहे हैं। वे दो विरोधी भाव थे।

अपने कस्बे में साम्यवाद का बीज बोने वाले थे कुञ्ञनन्तन मास्टरजी। कोषिक्कोड में इलाज करवाकर लौट आने के दिन बरामदे में तीन मढ़े हुए चित्र दीख पड़े—बीच में कार्ल मार्क्स का चित्र, दोनों ओर लेनिन और स्तालिन के चित्र।

"ये दाढ़ी वाले और मूंछों वाले कौन हैं, मास्साब ?"

सड़क पर खड़ी कुञ्ञिचिरुता ने चित्रों की ओर देखा। फिर बरामदे में चढ़

आई। आंखों में अचरज भरकर उसने पूछा, "बीच वाला आदमी कोई संन्यासी है क्या ?"

मास्टरजी को हंसी आ गई।

"यह मूंछ वाला कौन है, मास्साब ?" कुञ्जिचिरुता ने स्तालिन की ओर इशारा करते हुए पूछा।

"ये कोम्मीस्सार हैं क्या ?"

उन दिनों पुलिस का अधीक्षक था कोम्मीस्सार लोरेन साहब। उसकी मूंछ स्तालिन जैसी थी।

"यह एक बहुत बड़ा आदमी है।"

"बड़े फिरंगी साहब से भी बड़ा आदमी है ?"

"बड़े फिरंगी साहब से बहुत बड़े आदमी हैं वे।"

कुञ्जिचिरुता मुंह ताकती खड़ी रह गई। उसकी निगाह में संसार में सबसे महान व्यक्ति बड़े फिरंगी साहब हैं। कुञ्जिचिरुता की ही नहीं, कुरम्बी अम्मा की भी नहीं, मय्यषी के सारे के सारे लोगों की निगाह में। बड़े फिरंगी साहब एक अवतार पुरुष हैं, ऐसा मानने वाले लोग भी थे। उन फिरंगी साहब से भी बड़े हैं कुञ्जनन्तन मास्टरजी के ये मूंछोंवाले ?"

"कुञ्जिचिरुता जरा काफी पी ले।"

लीला एक गिलास कॉफी ले आई—बिना दूध की ठेठ कॉफी। उसमें नारियल खुरचकर डाला गया था।

"दूध नहीं है कुञ्जिचिरुता। वह दूध वाली आई ही नहीं अभी तक।"

कुञ्जिचिरुता को बिना दूध की कॉफी देते समय लीला को परेशानी हुई। किसी भी घर में जाने पर कुञ्जिचिरुता को दूध पड़ी काफी या चाय मिलती। दावीद साहब के साथ उसकी घनिष्ठता दिनोदिन बढ़ती जा रही है, साथ ही साथ उसकी प्रतिष्ठा भी।

"कॉफी नहीं चाहिए, लीला। दावीद साहब के बंगले से पीकर आ रही हूं।"

"तुम हमारी बनाई कॉफी क्यों पियोगी, दावीद साहब हैं न—"

"यों होते-होते दावीद साहब, कहीं शादी न कर बैठें, कुञ्जिचिरुता ?"

मास्टरजी का सवाल सुनकर कुञ्जिचिरुता के गाल लाल-लाल हो गए। उसने कॉफी पीकर गिलास बेंच पर रखकर विदा मांगी। सीढ़ियों पर से उतरते समय रुककर वह मास्टर की ओर मुड़ी।

"वह फोटो—"

उसने स्तालिन की तस्वीर की ओर इशारा किया।

"वह फोटो मुझे दोगे, मास्साब ?"

"वह नहीं दूंगा। दूसरी फोटो देना काफी नहीं है ?"

"उसी तरह की मूंछों वाले आदमी की तस्वीर दीजिएगा, मास्साब..."

मास्टरजी ने सिर हिलाकर हामी भरी। वे उसका जाना देखते खड़े रहे। सवेरे की धूप में धोती का सुनहला चौड़ा गोटा चमचमा रहा था।

कुञ्ञिचिरुता की तरह ही मास्टरजी के बरामदे में टंगी तस्वीरें किसकी हैं, यह किसी और की भी समझ में नहीं आया। लेकिन एक दिन बड़े फिरंगी साहब के दाहिने हाथ सरषाम आम रेत्रेत कुञ्ञिकण्णेन का बेटा सेक्रत्तेर करुणन शाम को टहलने निकला तो मास्टरजी के बरामदे के सामने आकर खड़ा हो गया और आग बबूला होकर उसने घोषणा की—

"इले कम्यूनिस्ट (वह साम्यवादी है।)—"

आठ

नगरपालिका की बत्तियां तेल के खतम हो जाने से बुझ गईं। उण्णिनायर का ताड़ी का ठेका बंद हो गया था। ठेके से सबसे बाद में बाहर निकलने वाला बैंड बजाने वाला कणारी है। वह गीत गाता हुआ सड़क से चला गया। कणारी के चले जाने के बाद फिर खामोशी।

कुरम्बी अम्मा काठ के संदूक पर आंखें खोले पड़ी हैं। आजकल उन्हें नींद आती ही नहीं। किसी-किसी दिन वे मुर्गे के बांग देने तक ऐसे ही आंखें खोले पड़ी रहती हैं। दिन में भी वे सोती नहीं। रास्ते से जाने वाले किसी को भी बुलाकर बातचीत करते और सुंघनी सूंघते समय बितातीं।

पहले तो दासन को किस्से-कहानियां सुनाया करतीं। षान्तार्क, वैश्रवणन चेट्टियार आदि की कहानियां उन्होंने उसे कितनी ही बार कह सुनाई थीं। कितनी ही बार सुन लेने पर भी दिल न भरने वाली कहानियां—ऐतिहासिक कहानियां।

अब दासन बच्चा नहीं है। किस्से-कहानियों की दुनिया से वह अब दूर होता जा रहा है—उसकी जगह गिरिजा ने ले ली है।

"बहुत पुराने जमाने में फ्रांस में..."

कुरम्बी अम्मा गिरिजा को गोद में बिठाकर हाथी-दांत की डिबिया खोलकर चुटकी भर सुंघनी सूंघकर षान्तार्क की कहानी सुनाने लगतीं। कहानी सुना चुकने पर कुरम्बी अम्मा की आंखें पहले की तरह डबडबा आतीं। गिरिजा की आंखें भी भर आतीं।

कुछ दिनों के बाद उसकी आंखें आंसू नहीं बहाएंगी। लेकिन किस्से-कहानियां वहां खतम नहीं होंगे। षान्तार्क और वैश्रवणन चेट्टियार की कहानियां सुनाने के लिए दादियां आगे भी पैदा होंगी।

उनकी गोद में बैठकर वे कहानियां सुनने के लिए सफेद चट्टान से तितलियां आगे भी आएंगी।

दासन कुछ दूर बैठा पढ़ रहा था। मुंशीजी रात में बैठकर लिखे दस्तावेजों को सिलसिलेवार रख रहे थे।

"चावल नहीं है..."

कौसू अम्मा मुंशीजी के पास आकर खड़ी हो गई।

"शाम को खरीदूंगा।"

"दोपहर में बच्चों के स्कूल से लौटते समय..."

दस्तावेजों का वस्ता और छतरी लिए कचहरी जाने के लिए निकले मुंशीजी चिंता में डूबे खड़े रहे।

"पड़ोस से पाव भर चावल उधार ले लो।"

"मुझे भी है हया-शर्म।"

पड़ोस में ग्रफिये सुकुमारन रह रहा है। बड़ा सरकारी नौकर। दो दिन पहले उधार लिया चावल अभी तक वापस दिया नहीं है। अब कैसे मांगा जाए ?

"मुझसे नहीं होगा।"

मुंशी दामू मुसीबत में पड़ गए।

"कोई चारा है, जरा देखूं।"

आखिर एक गहरी सांस लेते हुए बस्ता बगल में दबाए वे सीढ़ियां उतरने लगे। तब अपनी डिबिया की ओर देखते हुए कुरम्बी अम्मा ने प्रार्थना की, "लौटते समय तीन पाई की सुंघनी भी लेते आना।"

हाथी-दांत वाली डिबिया खाली पड़ी थी। पहले एक पैसे की सुंघनी काफी होती थी। रात में नींद न आने से दो पैसे की सुंघनी भी काफी नहीं पड़ती।

यह दृश्य देखते-देखते दासन स्कूल गया था। गिरिजा का हाथ पकड़े चलते समय उसे लगा कि आज दोपहर को भात नहीं होगा।

लेकिन स्कूल से वापस आने पर थाली में भात।

"चावल कहां से मिला, मांजी ?"

कौसू पलभर उसके चेहरे पर ताकती खड़ी रही। घर में मुसीबतें ही मुसीबतें। बच्चों को यह सब पता नहीं चलने देती थी वह। पहली बार ही दासन यों पूछ रहा है।

वह बड़ा हो रहा है।

"कहां से, मांजी ?" वह दुबारा पूछ रहा है।

"तुम्हें यह सब जानने की जरूरत नहीं, बेटे !"

"ग्रफिये के घर से लिया है ?"

कौसू ने उसका जवाब नहीं दिया। वह देहरी पर सिर औंधाए बैठी रही। बीच-बीच में धोती के छोर से आंखें पोंछती रही।

दासन भात खा नहीं पाया। वह उठकर चला गया।

"कौसू, तेरे ये मुसीबत के दिन टल जाएंगे बिटिया ! दासन को जरा बड़ा होने दो। उसे ठिकाने से लग जाने दो।"

कौसू के पास आकर कुरम्बी अम्मा ने उसे तसल्ली दी।

शाम को नामजप के बाद दासन रोज पढ़ने बैठ जाता। उस दिन कुरम्बी अम्मा उसके पास जाकर खड़ी हो गईं और बोलीं, "खूब मन लगाकर पढ़ना। पढ़-लिखकर बड़े आदमी बनना।"

कुरम्बी अम्मा की आंखें अनजाने ही गिरजाघर के ऊपर वाले क्रूस की ओर मुड़ गईं। उनकी आंखें धीरे-धीरे मुंद गईं, "मेरी पुनीत माता ! मेरे दासन का भला करना।"

चिराग के सामने बैठकर पढ़ने वाले उसे वे खड़ी देखती रहीं। उनके लिए अनजानी भाषा में, उनकी समझ में न आने वाले विषयों की किताबें वह पढ़ रहा है। कुरम्बी अम्मा फ्रांसीसी भाषा के दो-चार शब्द ही जानती थीं। पहले कभी लेस्ली साहब 'मजे में हो' इस अर्थ में 'सवा' ऐसा पूछने पर कनफूलों को हिलाते हुए कुरम्बी अम्मा कहा करतीं, "ऊयी मौसिए।"

लेकिन दासन जो फ्रांसीसी में पढ़ रहा है, वह समझ लेने जितनी फ्रांसीसी उन्हें आती नहीं थी।

आधी रात तक दासन का पढ़ना कुरम्बी अम्मा आंखें मींचे सुनती रहतीं। वैसे बैठे-बैठे वे हवाई किले बनातीं। धीरे-धीरे उन्होंने उसमें एक लेस्ली साहब की सृष्टि की। एक दिन उन्होंने घोषणा की, "मेरा दासन जज बन जाएगा। कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए घोड़ागाड़ी पर सवार होगा।"

सुंघनी के नशे में वे आंखें मींचे बैठी रहीं। कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए घोड़ागाड़ी पर सवार होने वाले दासन के बारे में वे दिवा-स्वप्न देखने लगीं।

बाहर नगरपालिका की बत्तियां तेल खतम हो जाने से बुझ गईं। बैंड बजाने वाले कणारी का गाना सुदूर में विलीन होता गया। दासन अब भी बैठा पढ़ रहा है। इम्तिहान की चिंताओं से उसकी खोपड़ी भरी थी।

बड़े फिरंगी साहब के बंगले की उस दिन की दावत हो चुकी थी। मेयर चेक्कु मूप्पर, दावीद साहब, कुञ्ञिकण्णेन आदि की घोड़ागाड़ियां घंटियां टनटनाती हुई एक-एक करके गुजर गईं।—मय्यषी खामोश हो गई। मूप्पन की पहाड़ी की तराइयों में सांस लेने वाले समुंदर की आवाज ने खामोशी को और भी गहरा कर दिया।

काठ के बड़े संदूक पर लेटी कुरम्बी अम्मा की आंखों से धीरे-धीरे दासन ओझल होने लगा। चिराग की लाल-लाल रोशनी उसकी आंखों तक पहुंच नहीं पाई। उनके कान किसी आवाज को सुनने के लिए खड़े हो गए। शरीर निश्चल पड़ा रहा।

दूर से आने वाली किसी घोड़ागाड़ी की टनटनाहट सुनाई पड़ रही है न ? घोड़े की टापों की आवाज सुनाई दे रही है न ? कुरम्बी अम्मा का दिल धड़कने लगा। उनके कानों ने हजारों कानों की श्रवण-शक्ति अर्जित कर ली।

पास-पास आने वाली घोड़े की टापों की आवाज। ऊबड़-खाबड़ रास्तों से चलने वाले पहियों की चरमराहट। घोड़े की गर्दन की घंटियों की ध्वनि। पहियों की चरमराहट और टापों की आवाज अकस्मात रुक गई। गाड़ी घर के सामने आकर खड़ी हो गई होगी।

दरवाजे के खुलने की आवाज। घोड़े की गरदन की घंटी जरा बज उठी।

"कुरम्बी, कुरम्बी..."

मृत्यु द्वारा खामोश न हो पाने वाला लेस्ली साहब का शब्द। सड़क पर खड़े होकर उन्होंने पुकारा, "कुरम्बी, कुरम्बी, जरा-सी सुंघनी दोगी ?"

कंकरीट पर चलने वाले बूट। साहब गाड़ी से उतर गए होंगे, "कुरम्बी, कुरम्बी..."

कान खड़े किए रोमांचित शरीर वाली कुरम्बी अम्मा निश्चल पड़ी रही।

लेस्ली साहब अहाते में घुस रहे हैं। वहां से बरामदे में घुसने वाले बूटों की आवाज।

"चुटकी भर सुंघनी दोगी, कुरम्बी ?"

"उसमें क्या है साहब ?"

कहना चाहती थी लेकिन जीभ हिली नहीं। हाथी-दांत की डिबिया फेंटे से निकालने की कोशिश करने पर भी हाथ हिला नहीं।

बेंच के पुराने पैरों ने हिल-डुलकर शोरगुल किया। लेस्ली साहब बैठक की बेंच पर बैठे होंगे। टोपी उतारकर गोद में रख ली होगी।

"दोगी नहीं, कुरम्बी ? चुटकी भर सुंघनी दोगी नहीं ?" लेस्ली साहब ने याचना की।

फिर खामोशी। कुछ देर बीत गई। बैठक की बेंच फिर हिल उठी। सीढ़ियां उतरकर चले जाने वाले बूटों की आवाज। घोड़े की गरदन की घंटी जरा बज उठी। पहिए चरमराने लगे।

दूर-दूर होती जाने वाली घोड़े की टापों की आवाज।

कुरम्बी अम्मा फूट-फूटकर रो पड़ीं।

"दादी..."

दासन ने किताब से निगाह उठाकर देखा। काठ के संदूक पर बैठी कुरम्बी अम्मा सिसक-सिसककर रो रही हैं। दासन पलभर वह देखता बैठा रहा। फिर किताब खोलकर पढ़ने लगा। यह आज कोई खास बात नहीं। कुरम्बी अम्मा रोज आधी रात को यों उठकर बैठी-बैठी रोया करतीं।...वह एक रोजमर्रे की बात बन रही है।

"मांजी..."

मुंशी दामू सीधे चटाई पर से उठकर आ रहे थे।

"खाए-पीए बिना किसी के बैठकर पढ़ते रहने को तुम देख नहीं रही हो ? उसका इम्तिहान है, उसका खयाल रखना है। रोने का अच्छा-खासा समय खोज निकाला है..."

मुंशीजी गुस्से में भरे अंदर चले गए।

"मां को न जाने क्या हो गया, हे राम ! रोज यों जागकर रोने लगती हैं..."

कौसू भी जागकर चारपाई पर बैठी हैं।

"कोई सपना देखा होगा। कौसू, अब तुम सो जाओ।"

हाथ से आंखें पोंछकर कुरम्बी अम्मा फिर से संदूक पर लेट गईं। थोड़ी देर बाद आधी रात को बांग देने वाली कुहकुही बोली। कुरम्बी अम्मा ऊंघने लगीं। उनकी वेदना का किसे पता है।...

कुरम्बी अम्मा के सो जाने के बाद भी दासन ने पढ़ना बंद नहीं किया। चिराग से निकलने वाले धुएं से आंखें धुंधला गईं। गला रुंध गया।

सर्तिफिका परीक्षा सिर पर मंडरा रही है। अभी तक किसी भी दर्जे में फेल नहीं हुआ है। दर्जे में सबसे बुद्धिमान लड़के जैसी ख्याति भी है। मास्टर ने कई बार कहा भी है, "तेरे जैसे लड़के को पढ़ाने का अवसर पाने वाला मैं भाग्यशाली हूं। जी जान से पढ़—तू गजब करेगा।"

दर्जे में गणित में दासन से ज्यादा अंक पाने वाले एक-दो लड़के थे। किंतु उनमें सामान्य ज्ञान की कमी थी। दासन बहुत ज्यादा किताबें पढ़ा करता था। इसलिए कुञ्जनन्तन मास्टरजी को उससे खास लगाव था। स्कूल के पुस्तकालय से मास्टरजी उसको किताबें छांटकर दिया करते थे। वैसे दासन ह्यूगो की 'हेरनानी', बोमारशे की 'मरिआष द फिगारो' आदि सब पढ़ने लगा था।

रोज सवेरे केलन की घोड़ागाड़ी घर के सामने आकर खड़ी हो जाती। सिर बाहर निकालकर कुञ्जनन्तन मास्टरजी कहते—

"दासन, गिरिजा, आ जाओ।"

मास्टरजी के घर से स्कूल जाने का रास्ता वह नहीं है। दासन और गिरिजा को साथ ले जाने के लिए ही वे उस रास्ते से आया करते थे।

"मास्टरजी ! दासन पास हो जाएगा ?"

यह सुनकर गाड़ी में बैठे मास्टरजी जरा मुस्करा दिए, "अच्छा सवाल ! अब भी अपने बेटे को समझ नहीं पाए न, मुंशीजी ?"

"वह गणित में जरा कमजोर है।"

"गणित में फेल हो जाने जितना कमजोर नहीं है।"

गाड़ी चलने लगी तो सड़क पर खड़े मुंशीजी से उन्होंने कहा, "गणित की बात मेरे ऊपर छोड़ दो। दासन शाम को मेरे घर आ जाया करे—परीक्षा खत्म होने

तक।''

''मास्साब, आपकी इस उदारता के लिए मैं हमेशा-हमेशा आभारी रहूंगा।''

मुंशीजी आनंदित हो गए। आगे उन्होंने जोड़ दिया, ''मेरे लड़के के नाम पर एक यही है—मास्साब, आप यह तो जानते ही हैं। उसके ठिकाने पर लग जाने के बाद ही मैं अपनी कमर सीधी कर पाऊंगा।''

''दासन तुम्हें निराश नहीं करेगा। यह मैं जानता हूं।''

दासन उनकी बातचीत सुन रहा था। स्वभाव से ही गंभीर उसका चेहरा और भी ज्यादा गंभीर हो गया। उसने मन ही मन कहा—पिताजी को मैं निराश नहीं होने दूंगा। जहां तक हो सके, अच्छी तरह पढ़ना है। परीक्षाएं अव्वल दर्जे में पास करनी हैं। एक अच्छी-खासी नौकरी पानी है। परिवार के लिए आसरा-सहारा बनना है।...मांजी को दूसरों के घर से चावल उधार नहीं लेने देना है। दादी की हाथी-दांत की डिबिया सुंघनी से कभी भी खाली नहीं होने देनी है।...

लाल धूल भरी सड़क पर पहियों के टेढ़े-लंबे निशान।

शाम को रोज की तरह नहाने नहीं गया। स्कूल से आने के बाद मां के हाथ से एक गिलास गुड़ पड़ी काफी लेकर पीने के बाद दासन कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के घर की ओर चल दिया—हाथ में गणित की क़िताबें और कापियां लिए।

पहली बार मास्टरजी के घर जा रहा है। अभी तक बाहर से ही देखा है। एक बड़ा दुमंजिला मकान। फाटक के दोनों ओर सीमेंट से बने दो सिंह। उसके वहां पहुंचते समय एक छोटी लड़की फाटक पर खड़ी थी।

''मास्साब घर में हैं न ?''

एंड़ी तक लटकने वाला लहंगा पहने हुए उस लड़की ने उसके चेहरे पर नजर दौड़ाई। फिर जवाब दिए बिना पायल की रुनझुन के साथ भीतर भाग गई।

''आओ बेटे।''

लीला बरामदे में आकर खड़ी हो गई।

''रे अनन्तन, मुंशीजी का बेटा आया है।''

मास्टरजी अपनी चारपाई पर लेटे थे। हाथ में रूसो का प्रसिद्ध 'कोन्त्रासोस्याल' नामक ग्रंथ। कमीज नहीं पहने थे वे। हल्दी जैसा रंग था शरीर का। पहले छाती पर जंगल जैसे रोम थे। इधर हाल में वे रोम सारे के सारे झड़ने लगे। ऊसर जैसी बन गई उनकी छाती।

आठ बजे तक मास्टरजी ने गणित सिखाया। लीला दो बार चाय लेकर आई। दूध और चीनी पड़ी चाय पिए जमाना बीत गया। बीच-बीच में पायल पहने चंद्रिका दरवाजे पर आकर चेहरा दिखा जाती। परीक्षा के पिछले दिन तक दासन रोज मास्टर के घर जाता रहा। परीक्षाफल पता लगने पर वह 'सर्तिफिका' में सर्वप्रथम पास हुआ है...

बड़े आईने के सामने खड़े होने पर आंखों में आश्चर्य फूट पड़ा। हाथ-पैर कैसे लंबे हो गए। यह लंबाई कहां से आ धमकी ? अब गोलियां नहीं खेलनी हैं। अब गिरिजा से लड़ाई-झगड़ा नहीं करना है। अब जिद्द नहीं करनी है। अब दर्द होने पर आंसू नहीं बहाने हैं ! दुःखों को मन में कैदकर रखने और आंसुओं को बांधकर रखने का समय आ पहुंचा है।

हाथ से निकले बचपन के नाम पर जरा-सा दुःख नहीं हुआ। वह बढ़ना चाहता है, जितनी जल्दी हो सके, बड़ा आदमी बनने के लिए।

अचानक उसने आईने में मां-बाप को देखा। पीछे देहरी पर खड़े-खड़े वे पहली बार धोती पहनने वाले बेटे को निहार रहे थे। मां की आंखें गीली हो गईं।

"बेटे, तुम तो पहचाने ही नहीं जाते।"

आंसू रोकते हुए मां मुस्कुरा दीं। एक गहरी सांस भरकर पिता बैठक में पड़ी आरामकुरसी पर जाकर लेट गए। उनके चले जाने के बाद एक बार फिर दासन ने आईने में देखा। किसी जमाने में यही मैं, यह मेरी आत्मा ही सफेद चट्टान के ऊपर तितली की तरह उड़ा करती थी।...पल भर वह स्वयं चिंता में खो गया। सृष्टि-स्थिति-संहार का आश्चर्य उसकी आंखों में भरा हुआ था।

"हे राम..."

बैठक में पैर पसारे बैठी-बैठी सुंघनी सूंघने वाली कुरम्बी अम्मा दासन को देखकर झटपट उठ खड़ी हुई। उन्होंने उसे बांहों में भर लिया। आनंद से उनका दम घुटने लगा। न जाने क्या-क्या पुकार-पुकारकर कहने की इच्छा हुई।

"कौसू, वह अंगोछा इधर ला..."

"मांजी, तुम इस दोपहरी में कहां जा रही हो ?"

अंगोछे से छाती ढंककर दासन का हाथ पकड़े-पकड़े उन्होंने कहा, "आ..."

किधर, यह उसने नहीं पूछा। मिस्सी के घर जा रहीं होंगी—उसने अंदाज लगाया। कोई भी खास बात हो तो उन्हें उधर जाना है। मिस्सी से बात बतानी है।

दासन का हाथ पकड़कर कुरम्बी अम्मा बाहर निकलीं। गर्मजल की तरह सुखद माघ महीने की धूप। लाल-लाल धूल भरी सड़क से वे मिस्सी के घर की ओर चले।

"मिस्सी, मिस्सी, जरा देखो तो सही, यह कौन है ?"

मिस्सी बाहर आईं। दासन को देखकर वे अचंभे में पड़ गईं।

"तुम तो बहुत बड़े हो गए हो बेटे ! पिता से भी बड़े हो गए हो।"

मिस्सी अपने सूखे हाथों से दासन की गर्दन और पीठ सहलाने लगीं। उनके हाथ ठंडे लग रहे थे।

अंदर जाकर मिस्सी ने केक का एक टुकड़ा लाकर खिलाया। स्कूल में भर्ती

होने वाले दिन दिया हुआ केक। सर्तिफिका पास होने पर दिया हुआ केक।

"अब तुम्हारे लिए केक नहीं। तुम बड़े हो गए बेटे ! अब गिरिजा को ही केक देनी है।"

दासन का केक खाना देखती रही मिस्सी। वह बड़ा हो गया है। अब उसके लिए केक बनाने की जरूरत नहीं। बनाएं तो क्या वह खाएगा ?

कुरम्बी अम्मा को गस्तोन की याद आई।

"बेटे गस्तोन..."

सीढ़ियों के ऊपर की ओर देखते हुए उसने पुकारा। गस्तोन साहब पुकार का जवाब नहीं देंगे, यह उन्हें पता था। फिर भी अनजाने वे पुकार उठीं।

गस्तोन को देखे कुरम्बी अम्मा को कितने ही साल बीत गए। बुलाने पर जवाब देने की ही दूरी है, उन दोनों के बीच। सीढ़ियों के नीचे खड़ी कुरम्बी अम्मा गस्तोन साहब का कमरा देख सकती हैं। उनके दरवाजे बंद पड़े हैं। वे दरवाजे किसी के भी सामने खुले नहीं। चाहे भूकंप आए चाहे आग बरसे, वे दरवाजे खुलेंगे नहीं।

कुरम्बी अम्मा एक गहरी सांस लेकर मिस्सी के पास आकर बैठ गईं। उनके मन की बातें मिस्सी समझ गई। मिस्सी के चेहरे की मुस्कान अकस्मात् नदारद हो गई। वहां सहसा मरघट की खामोशी छा गई।

"मेरी तकदीर है, कुरम्बी..."

मिस्सी की नीली आंखें डबडबा आईं।

"पुनीत माता से प्रार्थना करें, मिस्सी। एक दिन उसकी बुद्धि सुधर जाएगी।"

कुरम्बी अम्मा ने मिस्सी से सटकर बैठते हुए उसे सांत्वना देने की कोशिश की। वे ऐसा कर सकती हैं ? मिस्सी को उनके अतिरिक्त और कौन सांत्वना दे सकती है ?

दासन ने केक खाना बंद कर दिया। वह भी हिजड़ा साहब के बारे में सोच रहा था। बहुत समय तक वे उसके सामने एक पहेली बने हुए थे। गस्तोन साहब का रहस्य उसे दिन-रात बेचैन करता रहा। लेकिन एक दिन 'हिजड़ा' शब्द का अर्थ उसकी समझ में आ गया। इस प्रकार गस्तोन साहब के रहस्य की कुंजी उसके हाथ आ गई।

हिजड़ा साहब की दुरवस्था एक चिता की तरह उसके चारों ओर जलकर फैलने लगी। नींद न आने वाली रातों में उसका नन्हा मन मानव के नसीब के उद्भव की खोज में भटकने लगा।

धोती पहने हुए ही शाम को मास्टजी के घर गया। ऊपर से नीचे तक सरसरी निगाह डालते हुए लीला मुस्कराई।

"धोती तुम्हारे ऊपर बहुत फबती है। चंद्री, देखो, यह कौन आया है ?..."

एंड़ी तक पहुंचने वाला लहंगा पहने मेज के पास बैठकर पढ़ने वाली लड़की उठकर खड़ी हो गई। मां के पीछे शरमाते खड़े उसने भी दासन को देखा।

उस दिन से रोज धोती पहनने लगा। चलते समय पैर पर रगड़ने वाली काली किनारी वाली मोटी धोती। उसकी बढ़ोत्तरी को वह जताती रहती, जिम्मेदारियों की याद दिलाती रहती। तब उसका चेहरा दृढ़ हो जाता। उसका सिर उठ जाता।

नौ

बैसाख आया। पूरब से काली-काली घटाएं मय्यषी नदी पार करके आईं। गिरजाघर के फाटक के ऊपर हाथ पसारे खड़े क्रूस पर वे घिर-घिरकर आने लगीं। बादलों की परछाईं ने मय्यषी के ऊपर अंधेरा फैला दिया। मूप्पन की पहाड़ी के नीचे तूफान को गर्भ में धारण किए समुद्र निश्चल पड़ा रहा।

निर्जन सड़क से होती हुई केलन की घोड़ागाड़ी दासन के घर के सामने आकर खड़ी हो गई।

"मास्साब कहां हैं ?" गाड़ी में वे नहीं थे।

"मामा की तबीयत ठीक नहीं है", चंद्रिका ने उत्तर दिया। गोद में किताबें और छतरी रखे वह गाड़ी में बैठी थी।

"क्या हुआ मास्साब को ?"

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की तबीयत खराब है, यह सुनते ही दिल धड़कने लगता। उनकी बीमारी के बारे में दासन को पता था। मृत्यु के धागे के पुल पर से मास्टरजी की यात्रा उसे हमेशा आशंकित रखती है। गिरिजा गाड़ी में चढ़कर चंद्रिका के पास बैठ गई। दासन नहीं चढ़ा।

"मैं पैदल आ जाऊंगा।"

गाड़ी हिलती-डुलती चली गई।

धोती घुटनों तक उठाकर करके दासन मास्टरजी के घर की ओर चल पड़ा। कुछ दिनों से मास्टरजी कड़ी मेहनत कर रहे थे—अपनी तंदुरुस्ती की परवाह किए बिना।

सब जगह चेचक की बीमारी फैल रही थी। भार्गवन और शिशुपालन घर-घर में जाकर टीका लगवाने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन क्या फायदा ? मय्यषी के लोगों में अधिकतर कुञ्चक्कन के स्वभाव वाले हैं। उन्हें मरने से भी ज्यादा डर है टीका लगवाने का।

"चेचक से मर जाना मेरे लिए अच्छा है। मुझे टीका मत लगाओ।"

भार्गवन और शिशुपालन पुलिस वाले रामन को आगे किए टीका लगाने के लिए गए तो बैंड बजाने वाले कणारी ने चीख-पुकार की। कुञ्चक्कन जैसा ही स्वभाव है उसका भी।

समुद्र-तट के आसपास कोई भी ऐसी झोपड़ी नहीं थी, जहां चेचक न निकली हो। रोज रात को पलीतों की रोशनी में लपेटी हुई चटाइयां रियूद सिमित्तियेर से होकर आगे बढ़तीं। झंडे और झाड़फूंक करने वाले मय्यषी से गुजरे। कोई फायदा नहीं हुआ। आखिर ईश्वर पर विश्वास करने वालों ने वेलुत्तच्चन को गिरजाघर से बाहर निकाल दिया। वेलुत्तच्चन की प्रतिमा लिए विलाप-यात्रा गलियों से होती हुई निकाली गई। हमेशा दुःखसूचक घंटियां बजती रहीं।

"अपनी इन आंखों से मैंने देखा।"

"कणारी, तूने क्या देखा रे ?"

कुरम्बी अम्मा ने पूछा। कंधे पर तुरही लटकाए और ढीली पतलून हाथ से उचकाए खड़ा है कणारी।

"वेलुत्तच्चन और कोडुङ्ङल्लूर की देवी के बीच का युद्ध।"

भयचकित आंखों से कणारी ने उसका ब्योरा दिया।

पुनीत कन्या मरियम के देवालय के सामने युद्ध हुआ था। हाथ में भाला लिए सफेद घोड़े पर बैठे वेलुत्तच्चन। श्वेत साड़ी पहने बाल खोले खड़ी शीतला मैय्या।

कणारी के चले जाने के बाद कुरम्बी अम्मा ने एक बर्तन में गोबर घोलकर सीढ़ी के पास रख दिया। वैसा करने पर शीतला मैय्या आएंगी नहीं, ऐसा विश्वास है।

दोपहर को स्कूल से लौटी गिरिजा ने सड़क से चिल्लाकर कहा, "मांजी भूख लगी है।"

यह सुनते ही कुरम्बी अम्मा ने कान बंद कर लिए।

"ठेठ दोपहरी में 'मांजी' पुकारकर आफत मत बुलाओ, बिटिया।"

"ठेठ दोपहरी में जोर से चिल्लाकर 'मांजी' बुलाना मना है। बुलाने पर पुकार सुनकर शीतला मैय्या आ सकती हैं।" नन्ही गिरिजा ने भोलेपन से कहा।

"आगे से 'मांजी' चिल्लाकर मत बुलाना, सुना ?"

"नहीं बुलाऊंगी।"

गिरिजा ने सिर हिलाकर हामी भरी। उंगली ओठों पर रखते हुए वह अंदर चली गई।

यह सब सुनते-देखते दासन मन ही मन हंसा।

"यहां किसी के चेचक नहीं निकलेगी। हम सबके टीके लगा दिए हैं न, दादी ?"

"इसका निश्चय करने वाला तू है क्या ? दासन, कोडुङ्ङल्लूर की देवी की

खिल्ली मत उड़ा, मैं बताए देती हूं।"

"कोडुङ्ङ्ल्लूर की देवी नहीं, 'वायरस' ही चेचक लाता है।"

दासन हंस पड़ा। कुरम्बी अम्मा ने कान बंद कर लिए।

आधी रात के समय रियूद सिमित्तियेर से होकर आगे बढ़ने वाले पलीतों को देखते हुए मास्टरजी अपने अध्ययन-कक्ष की खिड़की के पास खड़े रहते। दिनोदिन पलीतों की संख्या बढ़ती जा रही है। उसे देखते समय मास्टर साहब का दिल धड़कने लगता। जीवन का मूल्य तो समझते ही हैं मास्टरजी।

मृत्यु उनके लिए सबसे बड़ी समस्या है। मृत्यु का नाम सुनते ही चाबुक से मार खाने जैसे वे छटपटाते। एक दिन ज्यादा जीने के लिए वे कोई भी त्याग कर सकते हैं। खाने के लिए भोजन की जरूरत नहीं। लेटने के लिए चटाई की भी जरूरत नहीं। पहनने के लिए कपड़े भी नहीं चाहिए। मास्टरजी को कोई शिकायत नहीं होगी। उनके लिए जिंदा रहना मात्र पर्याप्त है—मेरी छाती की सांस ही मेरा सबसे बड़ा आनंद है।

श्मशान की ओर बढ़ने वाले पलीतों ने मास्टरजी को शिथिल कर दिया। इतने अधिक लोगों का मरना उनसे देखा नहीं गया। पौ फटने तक वे अपने कमरे में उत्तर से दक्षिण और दक्षिण से उत्तर तक टहलकदमी करते रहे। सूजी आंखों के साथ स्कूल गए। तब उन्हें विवश कर दिया एक समाचार ने—पहली पंक्ति में बैठने वाले सिरिल के पप्पा सवेरे चेचक से धराशायी हो गए। पिछली रात जो पलीते मास्टरजी ने देखे थे, उनमें से एक सिरिल के पप्पा का था। उनके शरीर में शिथिलता व्याप्त होने लगी। फिर उस दिन मास्टरजी पढ़ा नहीं सके।

"पादरी का सेवक मरा नहीं। उससे पहले उन लोगों ने उसे ले जाकर गाड़ दिया।"

स्कूल से लौटते समय गाड़ीवान केलन ने कहा। यह सुनते ही मास्टरजी और भी चौंके। उनका चेहरा सूख गया।

मास्टरजी और अन्य बुद्धिजीवी दोस्तों के हर दिन शाम को जाकर बैठने का ठिकाना था विज्ञानपोषिणी वाचनालय। मास्टरजी के परिश्रम का फल है यह वाचनालय। चेट्टियार की पंसारी की दुकान के पास है वाचनालय। शीशे की आलमारियों में फ्रांसीसी साहित्य की उत्तम कृतियों को मिलाकर लगभग पांच सौ पुस्तकें हैं। कुछ बेंच और कुर्सियां भी।

"मास्टरजी आज आप चुप्पी साधे क्यों बैठे हैं ?"

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी को सिर झुकाए चुपचाप बैठा देखकर वासूट्टी ने पूछा।

"पादरी का सेवक कैसे मरा, यह तुम्हें पता है ?"

"मरने से पहले ही ले जाकर गाड़ दिया।"

मास्टरजी ने अपनी पीली-पीली हथेलियां मसलीं। उनकी आंखें गीली थीं।

वासूट्टी पुस्तकें समेटकर रख रहा था। उन दोनों के अलावा पप्पन नामक युवक भी था। वह कूर कोंप्लमान्तेर का विद्यार्थी था। मूंछें निकलने की उम्र।

"वासूट्टी, हमारा यों बैठा रहना ठीक नहीं। कुछ न कुछ करना है।"

"क्या मरने की सलाह दे रहे हैं, मास्साब आप ? टीका लगाने के लिए जाते समय वे छिपे-छिपे घूमते हैं। फिर बीमार पड़ने के अलावा और हो ही क्या सकता है ? भुगतें।"

"ऐसा मत कहो वासूट्टी। टीका लगाने से लोग अपनी अज्ञानता के कारण इंकार करते हैं।"

मास्टरजी के कहने का मतलब क्या है, यह समझे बिना वासूट्टी उनके पास जाकर बैठ गया।

"हमें भी समुद्री-तट वाले प्रदेश में जाना है। हमसे जो कुछ बन पड़े, करना है।"

वासूट्टी यह सुनकर चौंक पड़ा। समुद्र-तट वाले सारे प्रदेश में चेचक ही चेचक है। वहां चलें ? वह सोच भी नहीं पाता।

"वह केलप्पन किसी को बाकी नहीं छोड़ेगा। वह सबको जीते जी ले जाकर गाड़ देगा।"

रोगियों की सेवा करना ही केलप्पन का काम है। बंधु-बांधवों से उपेक्षित बीमारों को आग से झुलसे केले के पत्तों पर लिटाकर काढ़ा आदि देना उसका काम है। नाक तक पिए हुए केलप्पन ने ही सिरिल के पप्पा को ले जाकर जीते जी गाड़ दिया था।

"वासूट्टी, तुम नहीं आते तो न आओ, मैं जाऊंगा। मैं साम्यवादी हूं। साम्यवादी मनुष्य-स्नेही होता है। यह देखकर मुझसे यों ही रहा नहीं जाता।"

अखबार पढ़ने वाले पप्पन ने सहसा सिर उठाया। उसकी आंखें चूल्हे जैसी जल रहीं थीं।

"आपके साथ मैं भी आऊंगा, मास्साब !"

मास्टरजी का चेहरा चमक उठा।

"कम-से-कम तुम तो हो पप्पन।"

उसी दिन वे समुद्र-तट वाले प्रदेश में गए। बीमार पड़े झोंपड़ों में जाकर देखा। पानी के लिए तरसने वालों को पानी पिलाया। मरने से पहले ही केलप्पन द्वारा चटाई में लपेटकर रखे वेलु मरक्कार को बचाया।

"तुम आग से खेल रहे हो।"

समुद्र-तट वाले प्रदेश में मास्टरजी के जाने की खबर पाकर अषियूर से कुञ्ञूट्टी मामा भागे-भागे आए।

"उठकर चलने की ताकत तुममें है अनन्तन ? पहले तुम अपना स्वास्थ्य देखो।

उसके बाद मनुष्यों से स्नेह के लिए काफी जीवन पड़ा है।"

"मेरी और दूसरों की जान में क्या अंतर है, मामाजी ?"

मास्टरजी पीछे नहीं हटे। दूसरे दिन से उन्होंने स्कूल से छुट्टी ले ली। रोज समुद्र-तट वाले प्रदेश में गए। साथ में पप्पन भी था।...

कुछ दिन बीत गए। मय्यषी नदी पार करके आने वाली घटाओं ने पानी बरसाया। मय्यषी धोकर साफ की गई। पत्तों और डालों से साफ पानी की बूंदें टपक पड़ीं। भरे पड़े खेतों में सूरज की रोशनी फैल गई। गिरजाघर के ऊपर वाला क्रूस चमचमा उठा।

"फिर भी उस कुञ्जनन्तन को तो दाद देनी ही पड़ेगी।"

कुरम्बी अम्मा ने नाक पर उंगली रखी। गांव के लोग कुञ्जनन्तन मास्टरजी को अचंभे की दृष्टि से देखने लगे।

पहली बारिश के होते ही मास्टरजी बीमार पड़ गए। उनकी हथेलियां विष-डंसे जैसी नीली हो गईं। तलश्शेरी से रोज डाक्टर आया। मास्टरजी का स्कूल जाना भी बंद हो गया।

जब दासन मास्टरजी के घर पहुंचा तो वे चारपाई पर आंखें मूंदे लेटे थे। चारपाई पर कुछ किताबें बिखरी पड़ी थीं।

"तुम स्कूल नहीं गए ?"

"जा रहा हूं।"

"घोड़ागाड़ी पर क्यों नहीं गए ?"

"आपसे मिलने के बाद जाऊंगा, ऐसा सोचा।"

दासन मास्टरजी के पास जाकर खड़ा हो गया। उनकी रोमझड़ी छाती उठती-गिरती रही।

"रात में मैं पलक तक नहीं झपका सका।"

लीला कमरे में घुस आई।

"सब कुछ अपनी करनी है। कहने से क्या फायदा ?"

वे भी मास्टरजी का कुसूर निकाल रही थीं।

"दासन, तुम जाओ। घंटी बज चुकी होगी।"

आंखें खोले बिना मास्टरजी ने कहा। थोड़ी देर और वह वहां खड़ा रहा। फिर किताबें लेकर स्कूल चला गया।

एक-दो हफ्ते बीत गए। मास्टरजी अब भी बीमार हैं। स्कूल छूटने के बाद दासन रोज मास्टरजी के घर जाता। पप्पन और वासूट्टी भी वहां होते।

कभी-कभी कणारन भी होता। मय्यषी में सबसे पहले खद्दर पहनने वाला व्यक्ति है कणारन। हब्शी की तरह काला और सफेद बत्तीसी वाला एक नौजवान। मास्टरजी के कमरे में वे तरह-तरह की चर्चाएं करते रहते।

उनमें से किसी के न होने पर लीला दीदी और चंद्रिका मास्टरजी के कमरे में आ बैठतीं।

"तुमने चाय पी, दासन ?"

"पीकर ही आया हूं।"

"थोड़ी-सी और पिओ।"

वे उसे चौके में साथ ले जाती। देहरी पर एक पाटा रखकर दासन बैठता। चाय बनाते समय लीला दीदी पुराने जमाने की सिंगापुर जाने की कहानियां सुनातीं। चंद्रिका के पिता वहां की एक 'शिपिंग कंपनी' में काम करते हैं।

"लीला दीदी, आप आगे सिंगापुर नहीं जाएंगी ?"

"उसके लिए मैं बूढ़ी हो गई हूं न, बेटे ?"

वे व्यंग्य-भरे ढंग से मुस्कराईं। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की बड़ी बहिन होने पर भी देखने में वैसी लगती नहीं थीं।

"जहाज पर चढ़ने में मां डरती हैं।"

दीवाल की धोक लगाए, सिर झुकाए खड़ी चंद्रिका ने कहा। उसके जरा हिलने पर पायल बज उठी।

शिपिंग कंपनी में काम करने वाले चंद्रिका के पिता को बहुत ज्यादा यात्रा करनी पड़ती है। साल में पूरे तीन सौ पैंसठ दिन यात्रा में ही बीतते हैं, ऐसा कहा जा सकता है। पहले लीला दीदी के सिंगापुर न जाने का कारण यही था। अब एक दूसरा कारण भी है।

"मैं चली जाऊं तो मेरे कुञ्ञनन्तन की देखभाल कौन करेगा ?"

तीन साल के बाद हाल में भरतन गांव में आया। मद्रास में जहाज से उतरकर रेलगाड़ी में मय्यषी आया। छोटे कद का मोटा आदमी है भरतन। पतलून और बूश्शर्ट है उसकी पोशाक। कलाई में सोने की जंजीर वाली घड़ी। तीन कुलियों द्वारा लादकर लाई गईं उसकी पेटियां। भरतन का आना एक नजारा ही था।

"यह कौन है ?"

अहाते में घुसते समय दासन बरामदे में खड़ा था। भरतन पहचान नहीं पाया।

"यह तो अपने दामू मुंशीजी का बेटा है न ?"

लीला ने याद दिलाई। भरतन ने दासन की पीठ थपथपाते हुए कहा, "जब मैंने तुम्हें देखा था, तब तुम इतने से थे।" उसने हाथों की मुद्रा बनाकर उसका कद बताया।

"बच्चे झटपट बड़े हो जाते हैं, कुञ्ञनन्तन। कोई भी पहचाना नहीं जाता।"

घर में घुसते ही उसने पतलून और बूश्शर्ट उतारकर लुंगी पहन ली। भरतन बड़ा रसिक है। बहुत ज्यादा बोलता और हंसता है। अपनी गोरी तोंद हिलाते हुए उसके हंसने में अजीब शोभा होती थी।

"सर्तिफिका में तुम्हीं अव्वल थे, है न ?"

"जी हां।"

"ब्रवे में भी तुम्हें अव्वल आना है।"

भरतन दासन के गले में बाहें डाले चला। साथ में कुञ्जनन्तन मास्टरजी भी थे।

रियूद लग्लीस में क्लेमां साहब की शराब की दुकान पहले जैसी आज भी है। अब भी पुलिस वाले वहां जाकर पीते और गप्पें मारते हैं।

शराब की दुकान के सामने पहुंचने पर भरतन रुक गया। उसने दासन और मास्टरजी को अदल-बदलकर देखा।

"मेरे बेटे होने की उम्र ही है तुम्हारी। कुञ्जनन्तन तुम्हारे मास्टरजी हैं। फिर भी सकुचाओ नहीं, चाहो तो आ जाओ।"

दासन घबराया-सा खड़ा रहा। अभी तक शराब छुई तक नहीं। कभी-कभी शाम को सुनसान पड़े समुद्र-तट पर अकेला बैठा करता था। समुद्र में बहुत दूर जन्म-मृत्यु के रहस्यों को छिपाए चमचमाती पड़ी सफेद चट्टान पर निगाह जमाए यों ही बैठा रहता। समय बीतने का पता ही नहीं चलता। अंधेरे में घर लौटते समय कभी-कभी इच्छा होती, "मुझे पीनी है। बेहोश होने तक पीनी है।"

लेकिन कभी भी पी नहीं। स्वयं प्रतिज्ञा करता, "नहीं। दामू मुंशीजी का परिवार अधभुखा रहे और उस समय मैं शराब पिऊं ? नहीं..."

"आ जा..."

भरतन न्योता दे रहा है। कुञ्जनन्तन मास्टरजी अलग हटकर उसके चेहरे के भाव पर ध्यान लगाए हैं।

"नहीं पीनी है, भरतन दादा। मैं चलूं।"

शराब की दुकान के सामने से हटते ही तसल्ली हुई। अंदर ही अंदर भगवान से मना रहा था—यह ताकत हमेशा मेरे अंदर बनी रहे...हमेशा।

दस

सारी दुनिया उलट-पुलट रही थी। हिटलर ने वेरसाय संधि की शर्तों का उल्लंघन किया। वैसे एक दूसरे लोक महायुद्ध की ज्वालाएं फैलने लगीं। भारत में सब जगह आंदोलन ही आंदोलन। गांधीजी का असहयोग आंदोलन जोर-शोर से होने लगा। विनोबा भावे जेल में। कांग्रेस पार्टी में सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्त्व में गरम दल वाले हटकर खड़े हैं।

मय्यषी में भी राष्ट्रीय आंदोलन की लहरें उठने लगीं। पुरानी 'यूथ लीग' भंग कर दी गई। मय्यषी की स्वतंत्रता को लक्ष्य बनाकर 'महाजन सभा' नामक एक संस्था बनाई गई। कणारन था उसका नेता।

"मास्साब, मास्साब..."

दावीद साहब के बंगले में रात बिताने के बाद सवेरे अपने घर वापस जाते समय कुञ्ञिचिरुता मास्टरजी के घर के सामने आ खड़ी हुई।

"क्या है कुञ्ञिचिरुता ?"

मंजन करते हुए अहाते में घूम रहे थे मास्टरजी। बाएं हाथ में लार में भीगा मंजन करने का चूर्ण। कुञ्ञिचिरुता अहाते में घुसी।

"गोरे चले जाएं, ऐसा आपने कहा क्या, मास्साब ?"

"कहा।"

कुञ्ञिचिरुता का चेहरा फीका पड़ गया।

"उन्हें कहां जाना है, मास्साब ?"

"गोरे अपने-अपने देश चले जाएं।"

"सभी गोरों को जाना है मास्साब ?"

"सभी को।"

"दावीद साहब को भी ?"

"हां दावीद साहब को भी।"

कुञ्ञिचिरुता का चेहरा कागज जैसा पीला पड़ गया। तभी कुञ्ञनन्तन मास्टरजी अपनी गलती समझ सके। दावीद साहब और कुञ्ञिचिरुता का आपसी

संबंध अपनी चरमसीमा तक पहुंच चुका है। वह कुञ्ञिचिरुता से शादी करने जा रहा है, यह अफ़वाह फैली हुई है।

लीला कॉफी बना रही थी चौके में। लेकिन कुञ्ञिचिरुता कॉफी का इंतजार कर नहीं सकी। मास्टरजी से विदा लेकर वह बाहर निकली। कभी भी न मिटने वाली उसकी मुस्कान उस दिन गायब हो गई।

"कुञ्ञिचिरुता चली गई ?"

कॉफी लेकर आई लीला ने चारों ओर देखा।

"वह चली गई।"

"तुम यों अनाप-शनाप कहकर उसे डरा रहे हो। बेचारी कुञ्ञिचिरुता..."

"आज नहीं तो कल दावीद साहब को भी जाना पड़ेगा। दावीद साहब को ही नहीं, सारे के सारे गोरों को।"

"धीमी आवाज में बोलो। कहीं कोई सुन न ले, मेरे भगवान !"

लीला डर गई। मास्टरजी के चेहरे पर एक शिकन तक नहीं आई वे अचानक भारी चिंताओं में डूब गए।

गोरे मय्यषी छोड़ जाएं, यह आशय किसी के गले से नीचे नहीं उतरा। आजादी की चेतना कुछ इने-गिने चिंतकों में ही प्रज्वलित हो रही थी। उनकी गिनती उंगलियों पर की जा सकती थी।

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी ने एक दिन दासन के घर में दामू मुंशीजी से कुछ बातें कही थीं।

"आजादी ? यह क्या बला है मास्साब ?"

मुंशीजी की समझ में नहीं आया। आजादी शब्द का मतलब तक उन्हें पता नहीं। मय्यषी के बाहर भारत प्रज्वलित हो रहा है। लेकिन यह आंदोलन किसके लिए है ? मुंशीजी यह नहीं जानते। अपनी दमे की बीमारी और घरेलू समस्याओं में डूबे हुए हैं मुंशीजी। वे अखबार नहीं, कचहरी के कागजात ही पढ़ा करते हैं। अपनी छाती से निकलने वाली खांसी की आवाज ही सुना करते हैं। नहीं तो पत्नी की 'चावल नहीं, चीनी नहीं' रोजमर्रे की शिकायतें।

मय्यषी के लोगों में अधिकतर मुंशी जैसे हैं। उनमें आजादी की लौ कैसे जगाई जाए। मास्टरजी की समझ में नहीं आया।

"यहां के लोग भैंसे हैं। उनके कानों में हम कैसे वेद पढ़ें ?"

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी शिथिल हो गए। वासूट्टी अलमारी में किताबें रख रहा था। रोज की तरह पप्पन अखबार में आंखें गढ़ाए बैठा है। मास्टरजी का कहना सुनकर उसने सिर उठाया।

"वेद पढ़ने से कोई फायदा नहीं। बुलाने पर जाएंगे नहीं। इसलिए मार-मारकर उठाना है।" पप्पन सुभाषचंद्र बोस का आराधक है। कभी-कभी हवा में यों कहते सुना जाता—

"मैं भी एक 'लिबरेशन आर्मी' बनाऊंगा। आई. एन. ए. जैसी एक 'आर्मी' !"

वह कभी-कभी कणारन से बहस करता। कणारन सौ फीसदी गांधी-भक्त है। एक बार वह कंधे पर खद्दर का झोला लटकाए मय्यषी छोड़कर चला गया। डंडी जाकर नमक सत्याग्रह में भाग लिया और जेल गया।

कणारन अच्छे-खासे धनी परिवार में पैदा हुआ था। उसने सातवें दर्जे तक पढ़ा है। चाहता तो कुञ्ञनन्तन की तरह कणारन भी अध्यापक बन सकता था। लेकिन नौकरी या घरेलू कामों में उसने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। उसे खानदान से जोड़ने वाली एकमात्र कड़ी उसके पिता थे।

"कणारन, तुम्हारे मन में क्या है ? जो भी हो, तुम मुझे बताओ, बेटे !"

दुमंजिले मकान की चहारदीवारी में हमेशा चिंता में डूबे कणारन ने उसे दुःखी कर दिया।

"तुम्हें पैसा चाहिए, बेटे ?"

"नहीं, पिताजी !"

"शादी करनी है ?"

"नहीं।"

कणारन ने सिर हिलाया। पैसा और शादी की कणारन को जरूरत नहीं। फिर उसकी उम्र में उसे क्या चाहिए, यह सोचकर पिता अचंभे में पड़ गया।

पिता के मर जाने पर कणारन स्वतंत्र हो गया। वसीयतनामा के अनुसार उसे मिले खेत, घर और पारक्कल की तीन दुकानों के कमरे बहिन के नाम लिखवा दिए। डंडी जाते समय फीके रंग वाला झोला लेकर बाहर निकल पड़ा।

रहने के लिए एक बड़ा घर है। फिर भी वहां जाया नहीं करता। 'महाजन सभा' के दफ्तर में बेंच पर अंगोछा बिछाकर सोया करता।

वासूट्टी की कहानी इसकी उलटी है।

"आवारा होके घूमो। पैर टूटा एक बूढ़ा यहां पड़ा है, इसकी चिंता किए बिना घूमो फिरो।"

रस्सी की खाट पर लेटा पोक्कनच्चन बड़बड़ाता। नारियल के पेड़ पर चढ़ना ही उसका काम था। बरसात के समय पैर फिसल जाने से ऊंचे नारियल के पेड़ से गिर पड़ा। दोनों पैर टूट जाने के कारण पोक्कनच्चन फिर पेड़ पर चढ़ा ही नहीं। चौबीसो घंटे रस्सी की खाट पर लेटा रहता है। खाट के पास रखे मुंहटूटे घड़े में पेशाब वगैरह करता है।

वासूट्टी खजाने में नौकरी करता था। एक दिन दफ्तर जाने का समय हो जाने के बाद भी वह चारपाई पर मुंह ढंके लेटा देखा गया।

"मैं नौकरी से इस्तीफा दे रहा हूं। गोरों की नौकरी अब मुझे नहीं करनी है।"

वासूट्टी ने घोषणा की। पोक्कनच्चन और कल्लू अम्मा गाज गिरने जैसे बैठे

के बैठे रह गए। कुछ देर तक वे कुछ बोले-चाले नहीं। आखिर कल्लू अम्मा की जबान हिली, "और कुछ नहीं तो पैर टूटा पिता है तेरा। नादान बहनें हैं। यह याद रख, बेटे।"

वासूट्टी कुछ बोले-चाले बिना बाहर की घनघोर बारिश देखता बैठा रहा।

"जा। थोड़ा-सा दलिया पीकर जा।"

कल्लू अम्मा ने पास आकर वासूट्टी को दफ्तर भेजने की कोशिश की। लेकिन वह टस से मस न हुआ। वह निश्चय कर चुका था—चाहे कुछ भी हो, मैं अब गोरों की नौकरी करने जाऊंगा ही नहीं। निश्चय ही नहीं।

धीरे-धीरे चूल्हा जलना बंद हो गया। वासूट्टी की छोटी बहनें भूख के मारे तिलमिलाने लगीं। रस्सी की खाट पर पड़ा-पड़ा पोक्कनच्चन हमेशा कोसता रहता। कल्लू अम्मा सब कुछ सुनती-देखती रहती।

"हाय राम ! इस बंदे के सिर पर गाज क्यों नहीं गिराते तुम।"

बरामदे में घुटने पेट से लगाए बैठी वे रोईं।

वासूट्टी के कान पर जूं तक नहीं रेंगी। वह सब कुछ उसने पहले ही समझ रखा था। गुप्त बैठकों और बहसों में भाग लेता वह घूमता-फिरता रहा।...

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी अपनी तंदुरुस्ती की परवाह किए बिना 'स्टडी क्लास' लेते रहे। धीरे-धीरे आजादी की आवाज मय्यषी में इधर-उधर सुनाई पड़ने लगी।

दासन की ब्रवे परीक्षा सिर पर मंडराने लगी। उस साल उसे मिलाकर कुल छह विद्यार्थी थे परीक्षा देने के लिए। मय्यषी में सबसे ऊंची परीक्षा है ब्रवे। परीक्षा का समय आने पर गांव में वह एक चर्चा का विषय बन जाती।

"इस साल ब्रिगादी का बेटा ही अव्वल आएगा।"

"सेक्रत्तेर करुणन का बेटा शेखरन है न ?"

"वह कुछ पढ़ता-लिखता नहीं। वह उल्लू है।"

"सेक्रत्तेर करुणन के बेटे को परीक्षा पास होने के लिए बुद्धि की जरूरत है क्या ?"

तीसरे नंबर वाले ताड़ी के ठेके के मालिक उण्णिनायर आंखें मींचकर हंसा। सेक्रत्तेर करुणन बड़े फ्रांसीसी साहब के दाहिने हाथ हैं न ? शासन करने वाले हैं न ?

परीक्षा में बैठने वाले दिन-रात एक करके पढ़ने लगे। मास्टरों के लिए बहुत व्यस्तता का समय। छुट्टी लेकर वे बच्चों को पढ़ाने में जुट गए।

दासन पर ही परीक्षा का भूत सवार नहीं हुआ। सरकारी वाचनालय बिब्लियोतेक प्यूब्लिक के खुलने के इंतजार में रोज सवेरे वह उसके सामने खड़ा रहता। वाचनालय खुलते ही उत्सुकता से अखबार पढ़ता। मध्य पौरस्त्य देशों में युद्ध जोर पकड़ रहा है। लार्ड वेवल के नेतृत्त्व में भारतीय सेना इटली से मुठभेड़ कर रही है। अमेरिका युद्ध के मैदान में कूदने वाला है।

"बर्मा हाथ से निकल जाएगा, मास्साब ?" दासन ने पूछा।

"जापान वाले बर्मा हथिया लें तो हमें चावल मिलेगा क्या ?"

युद्ध के बारे में वह कुञ्ञनन्तन मास्टरजी से बहुत देर तक बातें करता रहता। हाथ लगने वाली सारी की सारी पत्र-पत्रिकाएं पढ़ा करता। वैसे युद्ध के बारे में मास्टरजी जितनी ही जानकारी उसे भी थी।

युद्ध ने दासन को व्याकुल कर दिया। मानव एक-दूसरे की हत्या क्यों कर रहा है, इस पर उसका मासूम मन चकित रह गया।

"साम्यवादी समाज में ही युद्ध नहीं होगा। सार्वलौकिक साम्यवाद का आना ही युद्ध का परिहार हो सकता है", कुञ्ञनन्तन मास्टरजी कहते।

युद्ध की वेदना से भरपूर सिर लिए ईसा मसीह की तरह, सिद्धार्थ की तरह दासन घूमता-फिरता रहा। मास्टरजी-ने उसे सलाह देने की कोशिश की, "तुम युद्ध के बारे में क्यों सोचते फिरते हो ? वह सब बातें हम बड़े-बूढ़े सोच-समझ लेंगे। तुम जाकर पढ़ो।"

"पढ़ेंगे नहीं तो आप अव्वल नहीं आ पाएंगे, दासन दादा" पायल रुनझुनाती चंद्रिका वहां आ धमकी।

"दासन दादा, आपने मेरी नई माला देखी ?" उसने ब्लाउज के अंदर से गेहूं के दाने जैसी सोने की माला निकालकर बाहर की। लाकेट पीपल के पत्ते की आकृति का है। उसमें कृष्णकन्हैया का चित्र। सिर पर मोरमुकुट। एक हाथ में बांसुरी।

"मुझ पर फबती है ?"

"हां।"

"कितने तोले की है, बता सकते हैं।"

"पांच।"

"इतनी छोटी माला के लिए...।"

मजाक उड़ाते हुए वह हंसी। माला केवल तीन तोले की थी।

"मुझे मणिमाला ही पसंद है। लेकिन मां ने कहा कि गेहूं के दाने जैसी माला ही अच्छी है।"

"मणिमाला तुम्हारी शादी के समय।"

लीला दीदी ने यह कहा था।

"तुम्हें गहने बनाकर देने की क्या जरूरत है ? तुम पहनोगी क्या ? संदूक में रखकर पूजने के लिए हैं न ?"

चंद्रिका के पास ढेर सारे गहने हैं। भरतन हर बार आते समय नए-नए गहने बनवा देता। लेकिन वह कोई भी गहना पहने नहीं दीखती। वह पैरों में केवल पायल ही पहनती है, उसे कभी नहीं उतारती। वह चांदी की बनी है।

बरामदे में बैठकर चंद्रिका और दासन ने बातचीत की। चंद्रिका ही ज्यादा बोली थी—सामान्य तौर पर किसी के सामने मुंह न खोलने वाली, हमेशा पैरों की उंगलियां देखते चलने वाली।

"दासन, जाओ। जाकर पढ़ो।"

शाम हो जाने पर मास्टरजी ने उसे जबर्दस्ती भेज दिया। सेक्रत्तेर करुणन के घर के ऊपर बत्ती जल गई। शेखर का जोर-जोर से पढ़ना सुना जा सकता है।

घर वापस आने पर भी दासन को पढ़ने का मन नहीं हुआ। चिराग के आगे हाथ में किताब लिए बैठते समय युद्ध की चिंताएं उसके मन में लौट आईं।

"यह क्या है बेटे ? तुम कोई सपना देख रहे हो क्या ?"

बैठक में आरामकुर्सी पर लेटे मुंशीजी उस पर अपनी आंखें टिकाए थे। दमे की बीमारी बढ़ जाने के कारण शाम को जल्दी ही घर वापस आ जाते थे। कानों के साथ पूरे सिर पर गुलूबंद बांधकर आरामकुर्सी पर लेटे रहते। खाना खाने के वक्त ही वहां से उठते। पहले की तरह रात में बैठकर दस्तावेज लिखने की आदत नहीं रही।

पिता की आवाज सुनकर दासन ने आंखें किताब में गड़ा दीं। वह पढ़ने लगा। लेकिन थोड़ी देर बीतते ही फिर से वह अपनी चिंताओं में बहने लगा।

"दूसरे बच्चे खाना-पीना-सोना सब कुछ छोड़कर पढ़ाई में जुटे हैं। तुम ? फेल होने का विचार है क्या ?"

मुंशीजी उठकर आ गए। दासन फेल हो, यह तो वे स्वप्न में भी सोच नहीं सकते थे।

"मैं फेल नहीं होऊंगा, पिताजी।"

"फेल नहीं होगे, यह कहना भर काफी नहीं है। पढ़ना है। कुछ दिनों से मैं इस पर गौर कर रहा हूं। क्या है तुम्हारे मन में ? किसके बारे में तुम यों सोचते फिरते हो ?"

दासन ने जवाब नहीं दिया। उसने फिर से किताब में आंखें गड़ा लीं।

मुंशीजी फिर से आरामकुर्सी पर जा लेटे। उनका मन बेचैन हो उठा। दासन को क्या हुआ ? हर समय चिंता में डूबा रहता है—पढ़ने बैठते समय, खाने बैठते समय, क्या हो गया मेरे बेटे को ?

कुञ्जनन्तन मास्टरजी से मिलते समय मुंशीजी ने यह बात बताई। मास्टरजी ने उन्हें धीरज बंधाया।

"दासन को कुछ भी नहीं हुआ है। आप उसके बारे में बेचैन न हों।"

"वह पास हो जाएगा, मास्साब ?" मुंशीजी ने पूछा।

"तो फिर और कौन पास होगा।"

"किसी तरह से वह ठौर-ठिकाने लग जाता तो अच्छा होता।"

"पास हो जाए तो दासन से तुम क्या करवाना चाहते हो ?"

पाण्डुचेरी भेजकर पढ़ाना है—बक्कालारा के लिए। उसके लिए मेरे पास क्या रखा है ? फिर भी उसे मैं पढ़ाऊंगा। उसके लिए फाका ही नहीं, भीख मांगने तक को मैं तैयार हूं मास्साब।"

"ठीक है। तो दासन को पाण्डुचेरी भेजने का इंतजाम अभी से कर लो।"

मास्टरजी मुस्कराए। मुंशीजी तसल्ली से वापस चले गए।

एक दिन सेक्रत्तेर करुणन ने मुंशीजी को रास्ते में रोक लिया। घोड़ागाड़ी में से अपना 'विग' लगा सिर बाहर निकालकर उन्होंने पूछा, "तेरे बेटे की पढ़ाई कैसी चल रही है।"

शेखरन और दासन एक दर्जे में ही तो हैं। मुंशीजी का बेटा उसके बेटे को पछाड़ देगा, उन्हें इसका भय था।

"सर्तिफिका में तेरा बेटा ही अव्वल आया था न ?"

"हां, मोसिये।"

मुंशीजी अदब से खड़े रहे।

"हूं।"

सेक्रत्तेर ने जरा हुंकारते हुए सिर अंदर कर लिया। वे अपने बाल काले जाल से बांधकर रखते। उसके ऊपर टोप लगाते।

गाड़ी चलकर टीले से उस पार आंखों से ओझल हो गई।

चिराग के सामने स्वप्न देखते बैठे दासन के पास जाकर मुंशी ने कहा, "तुम्हारे फेल हो जाने पर मैं जिंदा नहीं रहूंगा, बताए देता हूं।"

इतना कहकर वे अपनी आरामकुर्सी पर जाकर लेट गए। फिर कुरम्बी अम्मा की बारी थी। चुटकी भर सुंघनी सूंघने के बाद वे दासन के पास जाकर खड़ी हो गईं। पढ़ने में दासन की लापरवाही उनकी निगाह में भी आ चुकी थी। मुंशीजी का सारा कहना उन्होंने सुन भी लिया था। कुरम्बी अम्मा का मन बेचैन हो उठा। दासन का पढ़कर पास होने और सरकारी नौकर बनने का स्वप्न वे हमेशा देखा करती हैं न ? लेस्ली साहब की तरह कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए घोड़ागाड़ी में घूमना-फिरना देखने का वे इंतजार कर रही हैं न ?

"दासन, जरा पढ़ ले, बेटे।"

तब भी चिराग के सामने सिर झुकाए बैठा था दासन। चिराग का धुआं और कालिख लगने से उसकी आंखें लाल-लाल हो गई थीं। दस बज गए। ग्यारह बज गए। बारह बज गए। कुञ्चक्कन द्वारा जलाई गई बत्तियां तेल खतम हो जाने से बुझने लगीं। बड़े फ्रांसीसी साहब की दावत के बाद टीले पर से घोड़ागाड़ियां एक के बाद एक चली गईं। संख्या में एक गाड़ी कम है आजकल। सरषाम आम रेत्रेत कुञ्जिकण्णेन की गाड़ी।

सरषाम आम रेत्रेत कुञ्जिकण्णेन आगे कभी बड़े फ्रांसीसी साहब की दावत में भाग नहीं ले सकेंगे।

आधी रात की खामोशी। समुद्र भी चुप्पी साधे पड़ा है। एक पत्ता तक नहीं हिलता। दासन चुपचाप पढ़ रहा था। अचानक काठ के संदूक पर लेटी कुरम्बी अम्मा का फूट-फूटकर रोना।

"जरा-सी सुंघनी नहीं दोगी, कुरम्बी ?"

बैठक की बेंच जरा हिल उठी। सीढ़ियों पर पड़ने वाले जूतों की आवाज। घोड़े की गरदन की घंटी बज उठी। पहिए चरमराए। दूर-दूर होते जाने वाली घोड़े की टापों की आवाज। कुरम्बी अम्मा फूट-फूटकर रो पड़ीं।

मुंशीजी के घर का चिराग पौ फटने तक जलता रहा। मुर्गा के बांग देते समय दासन ने जरा झपकी ली। तुरंत ही जाकर फिर से पढ़ने लगा...

दासन और शेखरन ही उस साल पास हुए। दासन को बहुत अच्छे अंक मिले थे। उसकी सफलता ने लोगों को अचरज में डाल दिया।

कचहरी में बैठकर दस्तावेज लिखते समय मुंशीजी को खबर मिली। कलम वहीं रखकर वे घर की ओर चल दिए। चले नहीं, भागते-भागते गए।

"फेलीसितास्योम।"

एडवार्ड साहब ने मुंशीजी को बधाइयां दीं। वे कूर कोम्प्लमांतेर के प्रिंसिपल हैं, दासन के अध्यापकों में से एक हैं।

रास्ते-भर गांव के लोगों ने मुंशीजी को बधाइयां दीं। टीले पर इकट्ठे लोग परीक्षा-फल की चर्चा कर रहे थे।

मुंशीजी का सिर ऊंचा हो गया। बीमारी और परेशानियों से झुकी पीठ सीधी हो गई। अभिमान और आह्लाद से उसका शरीर थरथराने लगा। गला रुंध गया। तीस-चालीस साल जिंदा रहने के बाद जीवन में पहली बार आज वह कुछ बन सका। कल तक वह कुछ भी नहीं था। दस्तावेज लिखकर होने वाली तुच्छ आमदनी से जीवन बिताने वाला एक मुंशी। अब तो अचरज और आदर के साथ लोग उसकी ओर देखते हैं। मेयर चेक्कु मूप्पर का पोता जहां असफल हुआ, वहां मेरा बेटा सफल हो गया है। सेक्रत्तेर करुणन के बेटे तक को मेरे बेटे ने पछाड़ दिया है। उस बेटे का बाप हूं मैं...

घर की ओर चलते-चलते मुंशीजी की धंसी आंखों में आंसू उमड़ आए।

दूसरे दिन सवेरे दासन को बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर बुलाया गया। 'किसलिए बुलाया है' यह सोचकर दासन अचंभे में पड़ गया। बधाइयां स्वयं ही देने के लिए बुलाया है क्या ? यदि ऐसा है तो यह प्रथा के प्रतिकूल है। कूर कोम्प्लमांतेर के किसी विद्यार्थी को बंगले पर बुलाना—आज तक हुआ ही नहीं है।

"मुंशीजी का बेटा जा रहा है।"

शेखरन की चाय की दुकान में बैठे किसी व्यक्ति ने कहा। सभी की आंखें दासन पर टिक गईं। धोती उचकाए, सिर ऊंचा किए वह बंगले की ओर चल दिया।—सब लोग देख लें। अस्सी प्रतिशत अंक पाकर ब्रवे परीक्षा पास करने वाला मुंशीजी का बेटा हूं मैं—गरीबी में दिन काटने वाले मुंशी दामू का बेटा...

बंगले पर पहरा देने वाले संतरी रास्ते से हट गए। उद्यान के बीच वाली पगडंडी से होता हुआ वह आगे बढ़ा। बंगले के बरामदे में भी एक संतरी है।

फर्श पर लाल रंग की तुर्की कालीन। आईने जैसी चमकने वाली गद्दीदार कुर्सियां। दीवार पर वानगोग का 'लिशां दियू ब्ले' नामक विश्वविख्यात चित्र। एक कोने में चौथे रिपब्लिक के प्रेसिडेंट की बड़ी प्रतिमा।

"मेत्ते वू।"

सेक्रत्तेर करुणन ने कुर्सी की ओर इशारा किया। वे टोप नहीं लगाए थे। माथे पर लटकने वाला काला जाल। उसके द्वारा दिखाई गई कुर्सी पर दासन बैठ गया—दावीद साहब, मेयर चेक्कु मूप्पर वगैरह जिस कुर्सी पर रोज आकर बैठते थे।

अंदर के प्रवेश-द्वार का परतदार रेशमी परदा जरा-सा हटा। कालीन पर पड़ने वाले बूटों की आवाज। सेक्रत्तेर एक ओर हटकर अदब से खड़े रहे। हुक्के से निकलने वाला धुआं कमरे में भर गया।

"मोसिए दासेन..."

अदब से खड़े करुणन ने दासन का परिचय दिया। पल-भर की खामोशी। बंगले के बाहर समुद्र की लहरों के टकराने की आवाज। समुद्र जैसा गंभीर शब्द उठने लगा—

"लेत्ता स्रेषुईद त्रां स्यूक्से।"—(तुम्हारी सफलता पर राज्य आनंद प्रकट कर रहा है।)

"इल्फो पूर्स्वीव्रतेसेत्यूद।" (तुम पढ़ाई जारी रखो।)

"वा अ पोन्तिश्शेरी।" (उसके लिए पाण्डुचेरी जाओ।)

"लेत्ता ताक्कोर्द यून बूर्स।" (राज्य तुम्हें आर्थिक सहायता देगा।)

"लेत्ता सोक्यूप दसेरमेद त्वा।" (आज से राज्य तुम्हारा ख्याल रखेगा।)

लाल परदा हाथों से खोला गया। कालीन के ऊपर से जूतों की आहट दूर होती गई।

बड़ा फाटक पारकर बाहर आने पर आनंद की बेहोशी छाई हुई थी।

ग्यारह

दासन पाण्डुचेरी जाने की तैयारी करने लगा।

"तेरे चले जाने पर मुझे सुंघनी कौन खरीदकर देगा ?"

कुरम्बी अम्मा ने पूछा। काफी दिनों से दासन ही रोज सुंघनी खरीदकर देता था। पहले तो एक पैसे की थी सुंघनी। फिर पूरी न पड़ने पर वह दो पैसे की हो गई। टीले पर के चेट्टियार की दुकान से गिलटी कागज की पुड़िया में बंधी सुंघनी।

"दादी, तुम्हारे लिए सुंघनी लाकर देने को मैं हूं न ?"

गिरिजा ने पूछा। वह पढ़ना छोड़कर घर में बैठी है। हाल ही में वह रजस्वला हुई है। उसके बाद स्कूल गई ही नहीं। खानदानी लड़कियां ऋतुमती होने के बाद स्कूल नहीं जाया करतीं। स्कूल ही नहीं, घर से बाहर भी अधिक नहीं जातीं।

"तुम सयानी हो गई हो न ? तुम टीले पर जाकर सुंघनी ला पाओगी क्या ?"

"बाहर निकलने पर मुझे कोई पकड़ ले जाएगा क्या ?"

"सयानी लड़कियों को घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए। घर में ही सिमट कर रहना है।"

सिमटकर रहने का स्वभाव है गिरिजा का। कहीं भी नहीं जाती। जाती भी तो चंद्रिका के घर तक ही। वह चंद्रिका की सहेली है।

"सुंघनी लाकर देने के लिए कोई न हो तो परवाह नहीं। तुम जाओ मेरे बेटे ! पढ़-लिखकर बड़े आदमी बनकर आ जाना।"

कुरम्बी अम्मा ने दासन को छाती से चिपटा लिया। सूखे हाथ उसके कंधे पर डाले बेंच पर बैठते समय उसकी आंखें धीरे-धीरे गीली हो गईं। एक-दो साल दासन से मिल नहीं पाएगी, यह सोचने पर उसका दिल दुःखने लगा। उसके पैदा होने के बाद एक दिन भी वे उससे अलग नहीं रही है। जब बच्चा था तो दिन-रात उसे गोद में बिठाकर दुलारती और कहानियां सुनाती रही। उसके अंगुल-अंगुल-भर बढ़ने की वे नाप-जोख करती रहीं। उसका बढ़कर मर्द बनना वे आह्लाद से देखती रहीं। ब्रवे में उसके अव्वल आने पर वे आनंद से चीख पड़ी थीं...

"पढ़-लिखकर बड़े आदमी बन जाने पर कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए चलते समय तुम इस दादी को भूल तो नहीं जाओगे ?"

किसी को भी नहीं भूलूंगा, दादी। आप सब लोगों के लिए ही मैं जी रहा हूं।—दासन ने अपने आपसे कहा। उसके कंधे पर पड़ी बांहें कसती गईं।

"मुझे तेरी धन-दौलत कुछ नहीं चाहिए, बेटे। मृत्यु-शैय्या पर लेटते समय सुंघनी खरीदने के लिए दो पैसे देना काफी है। वह तू देगा, दासन ?"

"दादी को मैं हमेशा सुंघनी लाकर दूंगा—जब तक मेरे दम में दम है।"

कुरम्बी अम्मा ने अपने हाथ से गीले गाल पोंछ डाले। दासन ने एक लोहे के संदूक में धोती, कमीज सब रख लिए। गिरिजा और चंद्रिका ने उसकी मदद की।

पिछले दो-तीन दिन से चंद्रिका दासन के घर में ही है। आज बड़े तड़के ही आ पहुंची। आंखें खोलते ही सबसे पहले नजर उसी पर पड़ी। भोजन-कक्ष में मेज के सहारे खड़ी वह मां से बातें कर रही है। नहाने के बाद लापरवाही से बांधे बाल। गीली आंखों में बहुत सारा काजल।

"दासन दादा !"

और लोगों की आंख बचाकर वह कमरे में घुस आई। धोती और बनियान पहने वह चारपाई पर बैठा था। पाण्डुचेरी और पढ़ने के लिए जाने वाले कालेज की चिंताओं से मन सराबोर था। चारपाई के एक कोने के सहारे खड़ी उसने दासन को देखा।

"क्या बात है, चंद्री ?"

"आप खत भेजेंगे, दासन दादा ?"

"किसको ?"

जवाब दिए बिना वह सिर झुकाए खड़ी रही। गीले बालों में खोंसे शंखपुष्पों पर उसकी निगाह पड़ी। जरा-सा पैर हिलाने पर पायल रुनझुना उठी।

"आप जाकर कब वापस आयेंगे, दासन दादा ?"

"पता नहीं।"

"कालेज बंद होने पर आइएगा।"

"कोशिश करूंगा।"

भोजन-कक्ष में किसी की आहट सुनकर वह जल्दी बाहर चली गई। दोनों पायलें एक साथ बज उठीं। उसके चले जाने पर दासन को दुःख हुआ। मैं प्रेम में विश्वास नहीं करता, ऐसा याद आया।

संदूक में जरूरी चीजें सम्हालकर रख लीं। कुल दो कमीजें और धोतियां ही हैं। अभी तक एक कमीज से ही काम चलाता था। बाहर निकलते समय ही कमीज पहना करता। मार्ग-व्यय के लिए बड़े फ्रांसीसी साहब ने एक छोटी रकम भेज दी। उसी से कमीज, धोती आदि सब खरीदे थे।

संदूक में आधे से ज्यादा किताबें थीं। साथ कुञ्ञनन्तन मास्टरजी का दिया

एक लंबा लिफाफा। सुब्बरामन को देने के लिए है वह। मय्यषी की आज की राजनैतिक गतिविधियां, आजादी के आंदोलन की समस्याएं—ऐसी बहुत सारी बातें उस चिट्ठी में हैं, यह दासन को पता है।

आजादी के आंदोलन के लिए काम करने वाला पाण्डुचेरी का एक प्रोफेसर है सुब्बरामन। दासन ने नहा-धोकर कपड़े बदले। उसी समय कुञ्जिचिरुता उस रास्ते से गुजरी। दासन के जाने का समाचार पाकर आ पहुंची।

"पाण्डुचेरी से आते समय मेरे लिए क्या लाओगे ?"

"जो चाहो सो।"

कुञ्जिमाणिक्यम के लिए वैश्रवणन चेट्टियार द्वारा भेंट किए गए रेशमी कपड़े ? गहने ?

"कुछ नहीं चाहिए बेटे। पढ़कर बड़े-आदमी बन जाने पर भूल मत जाना, इतना ही काफी है।"

कुञ्जिचिरुता बैठक की बेंच पर बैठ गई। कौसू अम्मा द्वारा आगे बढ़ाई थाली से एक पान लेकर कत्था-चूना लगाकर मुंह में रख लिया।

"मुझे जरा पाण्डुचेरी देखने की इच्छा है। भगवान ने चाहा तो मैं भी एक दिन तुम्हारे पास आऊंगी दासन।"

"पाण्डुचेरी ही नहीं, फ्रांस जाने की इच्छा हो तो भी तुम्हारे लिए कौन-सी बड़ी बात है, कुञ्जिचिरुता। तुम्हारे लिए दावीद साहब तो हैं न ?"

"भगवान दया करे तो मैं फ्रांस में भी जाऊंगी, कुरम्बी अम्मा !"

"उसमें क्या संदेह है ?"

कुञ्जिचिरुता ने पान चबाया। उसके लाल-लाल ओठ और भी लाल हो गए। पान खाने पर उसका पूरा का पूरा चेहरा दासन को लाल-लाल लगा।

"जाकर बड़े आदमी बनकर आओ।"

विदा लेते समय कुञ्जिचिरुता ने दासन को आशीर्वाद दिया। उसके पहली बार स्कूल जाते समय उसने आकर दासन को आशीर्वाद दिया था। मिठाई खरीदने के लिए दुअन्नी भी दी थी। दासन को अब भी यह साफ-साफ याद है।

हंसिनी की तरह सड़क से जाने वाली उसको दासन देखता खड़ा रहा। समय बीतता जा रहा है। कुञ्जिचिरुता में ही कोई परिवर्तन नहीं आया है। हमेशा वह सोलह साल की ही लगती है।

केलन की घोड़ागाड़ी घर के सामने आकर खड़ी हो गई।

दासन ने संदूक हाथ में ले लिया। उसने एक-एक करके सबसे विदा मांगी। कौसू अम्मा परेशान थी। निगाह के परे दूर किसी अनजाने देश में जा रहा है। जरा-सा बुखार आ जाने पर कौन देगा उसे दलिया बनाकर ?—मेरे बेटे की देखभाल करने के लिए कौन है वहां ?

"कौसू, तुम रोओ नहीं। कहीं जा रहा है, आंसू बहाते विदा नहीं करना है।"

मुंशीजी ने उसे जताया। कौसू अम्मा ने दुपट्टे के छोर से आंखें पोंछीं।

"कुछ भूल-भाल तो नहीं गया ?"

"नहीं पिताजी !"

"तो चलें।"

बायां पैर रखते हुए घर से निकला था—अनजान में। पहली बार स्कूल जाते समय भी ऐसा ही हुआ था। किसी बुराई का सूचक।

मुंशीजी और दासन घोड़ागाड़ी में जाकर बैठ गए। बरामदे में सब कतार में खड़े हैं। आंखें पोंछने वाली मां-दादी। दुःख होने पर भी उसको छिपाए हंसती खड़ी गिरिजा। उससे सटी हुई उदास चेहरे वाली चंद्रिका। सिर झुकाए खड़ी होने पर भी उसकी आंखें घोड़ागाड़ी पर ही टिकी हैं।

घोड़ागाड़ी चरमराती हुई आगे बढ़ी। पाण्डुचेरी दूर है—निगाह से परे। मैं तुम लोगों से विदा ले रहा हूं।

बारह

पुलिस वाले अंत्रु ने तड़के उठकर पट्टियां बांधी, टोपी आदि पहनी। साढ़े पांच बजे बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर ड्यूटी थी।

अंधेरा अभी हटा भी नहीं। गिरजाघर का फाटक और उसका क्रूस कोहरे से ढका हुआ था। रियूद रसिदाम्स के पास सफेद समुद्र पड़ा था। समुद्र पर पहरा देने वाले चवोक के पेड़ फीके खड़े थे। दूर पर पुल पार करके परछाईं की तरह कंधे पर बोझ लिए कहार आ रहे थे।

बंगले के सामने पहुंचते ही पुलिस वाला अचानक ठिठक गया।

लिबरते–

आजादी–

दीवारों पर एक बड़ा पोस्टर। लाल स्याही से आकर्षक ढंग से लिखा गया एक बड़ा विज्ञापन।

समझ में आ जाने पर पहले तो पुलिस वाले अंत्रु आगबबूला हो गया। आजादी, आजादी... कहते हुए कुछ लोग घूम-फिर रहे हैं। यह बात पुलिस वाले अंत्रु को पता है। लेकिन इस तरह की धृष्टता दिखाने की हिम्मत उन्हें हुई कैसे ! गुस्से से उसकी ठोढ़ी कांपने लगी।

बंगले के सामने एक ओर पुलिस वालों के पहरा देने के लिए एक कमरा है। उसमें पुलिस वाला पलनी बंदूक पकड़े ऊंघ रहा है। अंत्रु की आहट सुनकर वह हड़बड़ाकर जाग पड़ा।

"गया, गया।..."

पलनी को विश्वास नहीं आया। लेकिन पोस्टर खुद देखकर समुद्री हवा के बावजूद वह पसीना-पसीना हो गया। सारी रात वह पहरा दे रहा था। उसकी नाक के नीचे किसी बदमाश ने ऐसा किया। कोम्मीसार के कानों तक यह खबर पहुंच गई तो नौकरी गई समझो।

"अंत्रु सोवे म्वा· ? (अंत्रु मुझे बचा दोगे ?)"

पुलिस वाला पलनी गिड़गिड़ाया। उसकी बड़ी-बड़ी सफेद मूंछें थरथराती रहीं।

"मेरी घर वाली है। बच्चे हैं। मेरी रक्षा करो मोसिए अंत्रु।"

सबकी आंख बचाकर विज्ञापन हटा दें तो पलनी बच जाएगा। लेकिन अंत्रु ने एक न सुनी। सोचते-सोचते उसका गुस्सा बढ़ता गया। कोई भी क्यों न हो, यह धृष्टता दिखाने वाले बदमाश को एक सबक तो सिखाना ही है। पुलिस वाले पलनी की अनुनय-विनय की परवाह किए बिना वह ब्रिगादिए वैंकय्या के घर की ओर चल दिया।

ब्रिगादिए पुलिस स्टेशन के ऊपर वाले कमरे में रहता है। जम्हाई लेते हुए बाहर आए वैंकय्या को अंत्रु ने सारी बातें बता दीं। ब्रिगादिए के सूजे चेहरे पर सुर्खी आ गई।

"चल..."

अपनी पिस्तौल कमर में बांधकर वैंकय्या जीप में कूदकर चढ़ गया। पीछे-पीछे पुलिस वाला अंत्रु भी। धूल उड़ाते हुए रिमूद ला प्रिसोम के ऊपर छाए कुहरे को चीरती हुई जीप कोम्मीसार लापोर्त साहब के बंगले की ओर बेतहाशा भागी।

"कहां जा रहे हैं ये यमदूत, इतने तड़के ?"

धर्मशाला के बरामदे में जुआं मारती बैठी कल्लू जीप की आवाज सुनकर चौंक पड़ी। उसके पास पेट से पैर सटाए पड़ा पीलपांव वाले अन्तोणी ने सिर उठाकर देखा।

उन दिनों मय्यषी के अधिकतर पुलिस वाले पाण्डुचेरी और कारिक्कल से आए तमिल वाले थे। वे आमतौर पर वज्रमूर्ख होते थे। पौ फटते ही ताड़ी पीने निकल पड़ते। गाना गाते और औरतों का पीछा करते समय काटते।

ब्रिगादिए वैंकय्या वैसा आदमी नहीं था। वह चीते जैसा भयावना था।

"वो, वो तो यमदूत है", कल्लू कहा करती है।

ब्रिगादिए जैसा स्वभाव ही है कोम्मीसार लापोर्त साहब का भी। उसके जहाज से उतरने वाले दिन ही एक अनिष्ट घटना घटी।

पीलपांव वाले अन्तोणी की एक बुरी आदत है। धर्मशाला से लगा हुआ पाखाना होने पर भी पीलपांव वाला अन्तोणी उसमें नहीं जाता। लापोर्त साहब के जहाज से उतरने वाले दिन वैंकय्या के साथ वे मय्यषी घूम-फिरकर देखने के लिए निकल पड़े। गोरे साहब ने पुनीत मरियम का सुंदर गिरजाघर देखा। मेयर का दफ्तर और पले द ष्रूयूस्तीस देखा। अंत में वे रियूद रसिदाम्स पहुंचे। बाईं ओर कतार में बने बंगले। दाईं ओर समुद्र की ओर बहने वाली मय्यषी नदी। सामने 'चोल' वृक्षों से भरे उद्यानों के बीच में बड़े फ्रांसीसी साहब का बंगला। समुद्र-तट पर लाल फूलों से भरे शिरीष के पेड़।...

मय्यषी की सुंदरता ने गोरे साहब का मन मोह लिया। समुद्र-तट से होकर चलते-फिरते समय लाल-लाल फूल निरंतर सिर पर झड़ते रहे।

"षारमां षारमां (खूबसूरत खूबसूरत)..."

समुद्र, नदी, फूलों और मंद पवन के आस्वादन में विभोर हो चलते समय लापोर्त साहब ने एक नजारा देखा—नदी-तट पर बीड़ी पीता उकड़ूं बैठा पीलपांव वाला अन्तोणी।

गोरे साहब की भौंहें चढ़ गईं। लमार्तीन की कविताओं, मने की चित्र-रचनाओं के देश से आनेवाले गोरे साहब वह गंदापन देखते खड़े नहीं रह सके। क्या हुआ, यह वैंकय्या के समझने के पहले ही गोरे साहब का पैर अन्तोणी की ओर उठ चुका था।

एक चीख-पुकार के साथ पीलपांव वाला अन्तोणी डगमगाता उठ खड़ा हुआ। पीलपांव घसीटता हुआ अन्तोणी वहां से भाग खड़ा हुआ। कोम्मीसार के हुक्म के मुताबिक पुलिस वालों ने अन्तोणी को पुल के उस पार भगा दिया।

लेकिन पीलपांव वाला जाए तो जाए कहां ? वह मय्यषी में पैदा हुआ और वहीं पला। उसका गांव है वह। उसी दिन अन्तोणी पुल पार करके मय्यषी में वापस आ पहुंचा।

लापोर्त साहब की आंखों के सामने आए बिना अब लुक-छिपकर रह रहा है वह।

कोम्मीसार की जीप बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले के सामने आकर रुकी। दीवाल पर चिपका पोस्टर उन्होंने देखा।—आगे आने वाले तूफान का पोस्टर। गोरे साहब ने उसे हजारों टुकड़ों में फाड़-फाड़कर अरब सागर के ऊपर उड़ा दिया।

पोस्टर चिपकाने वाले बदमाश की खोज में ब्रिगादिए वैंकय्या और अनुयायी सड़क पर निकल पड़े। उन दिनों मय्यषी के लोग पुलिस वालों से ज्यादा गुंडों से डरते थे। बड़े क्रूर होते थे वे, खासकर अच्चू।

पोस्टर की घटना गांव में चर्चा का विषय बन गई।

"मैं बताऊं कौन है ?" अच्चू को ताड़ी पिलाने वाले उण्णिनायर ने पूछा।

"कौन है ?"

"उस कुञ्जनन्तन मास्टरजी के अलावा और कौन हो सकता है ?"

अच्चू को भी मास्टरजी पर संदेह था। लेकिन आजकल चलने-फिरने में भी विवश वह चारपाई पर पड़ा है। बाहर निकलता ही नहीं, यह भी कहा जा सकता है।

"उठकर चलने-फिरने में भी असमर्थ वह ?"

"वो नहीं तो उसके संगी-साथी। और नहीं तो कौन ?"

पुलिस वाले अंत्रु ने कहा। अच्चू ने जरा जोर से हुंकार भरी। अंत्रु का कहना सच है। अच्चू यह जानता है। गांव में दंगा करवाने पर उतारू हैं मास्टरजी और उसके संगी-साथी। उनमें से ही किसी ने पोस्टर चिपकाया होगा।

गिलास खाली करके अच्चू और पुलिस वाला अंत्रु उठ खड़े हुए। उनके बाहर निकलते समय उ़ण्णिनायर ने कहा–

"अच्चू, जो भी हो, उसकी हड्डी-पसली एक कर देना, सुना।"

अच्चू ने जोर-जोर से हुंकार भरी। वह बहुत ही कम बोलता है। गोरे लाल चेहरे पर हमेशा गंभीरता ही रहती है। हमेशा लाल-लाल रहने वाली आंखें। धोती उचकाकर सिर ऊंचा करके चलते समय ऐसा लगता था मानो पैरों के तले की जमीन दबती जा रही हो।

अच्चू और पुलिस वाला अंत्रु कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के घर की ओर चले। तब तक पोस्टर वाली घटना ऊंचे अफसरों तक पहुंच चुकी थी। कोम्मीसार, सेक्रत्तेर आदि अफसरों ने उसके राजनीतिक पहलू पर विचार-विमर्श किया था। अच्चू और अंत्रु उसमें राजनीतिक पहलू नहीं देख पाए थे। उनकी दृष्टि में यह एक धृष्टता थी–मय्यषी के पुलिस वालों और गुंडों की अवहेलना। इसे याद करते समय अच्चू का खून खौल उठता है।

पुलिस वालों और गुंडों की निगरानी में हैं आज वे लोग, यह मास्टरजी और पप्पन को पता है। लीला कहा करती हैं–

"अनन्तन, सम्हलकर रहना। वह अच्चू बिल्कुल बेरहम है।"

"कब्र में पैर रखे मेरा वे क्या कर पाएंगे। पुलिस वालों और गुंडों को आग-बबूला करने के लायक वे बहुत कुछ कर रहे हैं। बरामदे में रखी मार्क्स और लेनिन की तस्वीरें ही इसके लिए पर्याप्त हैं। पोस्टर वाली घटना ने सचमुच उन्हें आग-बबूला कर दिया।

"मास्साब, आप ही के बारे में हमें चिंता है।"

"आज देश को मेरे जैसे बीमारों की जरूरत नहीं, पप्पन ! तुम्हारे और उत्तमन जैसे नौजवानों की है। अब मुझसे हो ही क्या सकता है ? आज या कल का इंतजार करने वाले..."

"मास्साब, आप ऐसी बातें न किया करें। आप अभी बहुत साल तक जिंदा रहेंगे।"

मास्टरजी की बात सुनकर मलयन उत्तमन का चेहरा फीका पड़ गया–मंत्रवादी और विष-वैद्य मलयन कुरुम्बन का बेटा। सांप बनकर आए वैश्रवणन चेट्टियार से कुञ्ञिमाणिक्यम को बचाने की कोशिश करने वाला मलयन कुञ्ञिरामन उसका परबाबा है।

मलयन उत्तमन कूर कोम्प्लमांतेर में पढ़ रहा है। उसे भी थोड़ा बहुत मंत्र फूंकना आता है। विष उतार भी सकता है। इसके नाम पर पप्पन उससे झगड़ता भी है।

"तुम क्या कोई साम्यवादी हो ?"

"इसमें क्या शक ?"

"साम्यवादी बनने के लिए पहले मार्क्सवादी बनना है। मार्क्सवादी बनना हो तो भौतिकवादी बनना है। क्या तुम भौतिकवादी हो ?"

"इसमें शक ही क्या है ?"

उत्तमन की भौंहें चढ़ गईं। पप्पन ने उसे पछाड़ने की कोशिश की, "भौतिकवाद और मंत्रवाद दोनों एक साथ नहीं चल सकते।"

तब मास्टरजी ने बीच-बिचाव किया, "पप्पन, लेकिन जहां तक उत्तमन का सवाल है, मंत्रवाद उसका पेशा है, विश्वास की बात नहीं।"

चाहे कुछ भी हो, मलयन उत्तमन को पुश्तैनी पेशे में विश्वास नहीं था। पीढ़ियों से उसके परिवार में विष-वैद्य और मंत्रवादी हैं। पीढ़ियों से वे ही मीतल के मंदिर में देवी का मुखौटा लगाते हैं। उत्तमन की दृष्टि में, वह सब पेट की खातिर ही है।

मास्टरजी, पप्पन आदि के बातचीत करते समय अहाते से एक सवाल आया, "यहां कोई है नहीं क्या ?"

अच्चू की आवाज उन लोगों ने पहचान ली। अनजाने ही उत्तमन जरा चौंका। मास्टरजी और पप्पन अच्चू का इंतजार कर रहे थे—वह आएगा, यह उन्हें पता था।

अच्चू बरामदे में चढ़ आया। पीछे-पीछे अन्द्रू भी।

"यहां कोई नहीं है क्या ?"

अच्चू ने दोहराया। लीला बाहर नहीं आई। अंत्रु के सामने आ खड़ी होने की ताकत मय्यषी की किस औरत में है ?

"अच्चू, क्या खास बात है ?"

मास्टरजी धोती सम्हालते हुए बाहर आए। पप्पन और उत्तमन बाहर नहीं निकले। पप्पन ने कमीज की बांहें ऊपर चढ़ा लीं। वह तैयार हो रहा था। लड़ने के लिए अच्चू आया है तो आज ढंग से जरा हाथापाई हो ही जाए।

लीला दरवाजे की ओट में छिपी खड़ी रही। दिल धड़क रहा था। उसने मन ही मन भगवान को पुकारा।

"एक खास बात जानने के लिए हम आए हैं।"

अच्चू ने मास्टरजी को सिर से पैर तक जरा देखा। छोटे-छोटे पके बाल और धंसी आंखें। पीले पड़े गाल। मौत की खाट से उठकर आने जैसे लगते थे। फिर भी अच्चू का मन पसीजा नहीं।

"मास्साब, तुमसे एक बात पूछने आया हूं, सही-सही बताना।"

"कौन-सी बात है भैय्या अच्चू !"

"बड़े फ्रांसीसी साहब की दीवार पर कागज किसने चिपकाया था ?"

अच्चू की आवाज तीखी हो गई।

"मुझे पता नहीं।"

"मास्साब, सही-सही बताना ही तुम्हारे लिए अच्छा है। तुम्हारा यह खिलवाड़ अच्छाई के लिए नहीं है। मुझे तुम समझ नहीं सके। बीमार हो, कलेजा खराब है, यह सब कुछ मैं देखूंगा नहीं। मार-मारकर मुंह के दांत मैं तोड़ दूंगा।"

"बड़े फ्रांसीसी साहब की दीवार पर काग़ज चिपकाने पर तू कौन होता है पूछने वाला ? तुझे कौन-सा अधिकार है अच्चू ? कागज किसने चिपकाया, इसका मुझे पता नहीं। पता हो भी तो मैं तुझे नहीं बताऊंगा। पूछने का अधिकार रखने वाले आकर जब पूछेंगे तो मैं बता दूंगा—निकल जा बाहर—" धोती सम्हाले हुए तूफान की तरह वे अंदर चले गए। गुस्से से उनकी सांस चढ़ गई—"बदमाश, पूछने के लिए आया है।"

वे चारपाई पर जाकर लेट गए।

अपमानित अच्चू नंगी कटारी की धार पर हाथ फेरते हुए किंकर्तव्यविमूढ़-सा पल-भर खड़ा रहा। फिर कुछ बड़बड़ाता हुआ चला गया। साथ में अंत्रु भी गया।

"हे राम !" लीला ने तसल्ली की सांस ली।

"अधमरे मुझ पर अब वह कोई वार नहीं करेगा। यह मुझे पता था।" मास्टरजी ने हवा में कहा।

लीला मास्टरजी के पास चारपाई पर आकर बैठ गई। छोटे भाई की छाती सहलाते हुए उसने पूछा, "किसने पोस्टर चिपकाया है, यह मुझे तो बता सकते हो न ?"

"देखो, वह सामने खड़ा है।"

मास्टरजी ने पप्पन की ओर इशारा किया। दांतों तले कसकर बीड़ी दबाए खड़ा पप्पन मुस्करा दिया। लीला ने अचरज से उसकी ओर देखा।

"तुम इतने हिम्मत वाले हो ?"

"चाहूं तो मैं बड़े फ्रांसीसी साहब की पीठ पर भी चिपका दूंगा।" वह दुबारा हंस दिया।

तेरह

मलाबार और तिरुवितांकूर में छिपे तौर पर काम करने वाले राजनीतिक कार्यकर्ता, कातिल, चोर आदि सब लोग मय्यषी की शरण में आते थे। भारत के पुलिस वाले वहां जाकर उन्हें पकड़ नहीं सकते थे। ऐसे मय्यषी की शरण में आने वाले अत्याचारियों में एक था अच्चू। वह किस गांव का है, मय्यषी के लोगों में से किसी को पता नहीं है। मय्यषी के लोगों के जीवन-नाटकों की दृक्साक्षी कुरम्बी अम्मा तक को नहीं।

एक दिन दोपहर के पहले कुरम्बी अम्मा बैठक में पैर पसारे बैठी सुंघनी सूंघ रही थीं। रसोईघर में कौसू खाना पकाने में जुटी थी। मुंशीजी कचहरी से वापस आने ही वाले थे।

उधर से एक नौजवान निकला। खूब मोटा-ताजा, नाटे कद वाला, गौर वर्ण, धोती घुटनों के ऊपर तक उठाए।

मय्यषी के बच्चे-बच्चे की जीवनी जबान पर धरे रहने वाली कुरम्बी अम्मा ने पूछा, "कौसू, वह कौन है ?"

रसोईघर की धुएं की कालिखसनी लबियों वाली खिड़की से देखते हुए कौसू ने कहा, "मुझे पता नहीं, मांजी ! कोई परदेसी जैसा लगता है।" कुरम्बी अम्मा हाथ से आंखों पर ओट लगाए सड़क की ओर ही देखती रहीं।

"अरे, वो तो इधर ही आ रहा है।"

अजनबी अहाते के फाटक से अंदर घुस रहा है। कुरम्बी अम्मा अनजाने ही फर्श से उठ खड़ी हुई। कौसू अचरज से देखती रही। उसके हाथ में नंगी कटारी देखकर वे भौंचक्की रह गईं।

"तुम कौन हो ?"

"अच्चू।"

"कौन-सा अच्चू ?"

"सो सब अभी तुम्हें जानने की जरूरत नहीं, बुढ़िया।"

अच्चू बेंच सरकाकर उस पर बैठ गया। कुरम्बी अम्मा उसकी बात सुनकर

सकपका गईं। उसका जबर्दस्ती बैठना भी उन्हें अच्छा नहीं लगा।

"भात हो तो जरा परोसकर लाओ।"

"तुम कौन हो, यह तो बताया नहीं।"

"मैं कोई भी होऊं, मैंने मांगा तो भात है न ?"

"खूब रही। राह चलने वाले ऐरे गैरे नत्थू खैरों को खाना खिलाने वाली कोई धर्मशाला है यह?"

"जबान सम्हालकर चलाओ। बुढ़िया हो, यह मैं नहीं सोचूंगा।"

"सम्हालकर जबान चलाओ तुम। बुढ़िया हूं मैं! बुढ़िया कौन है रे ?"

कुरम्बी अम्मा की नाक के नथुने फड़फड़ाने लगे। उसे गुस्सा आ गया। जाने कहां से आ जाने वाला! कैसी बदतमीजी से बात कर रहा है!

"मांजी, जरा चुपचाप बैठो" कौसू ने झांका।

उसकी आवाज सुनकर अच्चू ने उस ओर देखा।...भीम का रौद्र भाव !

"हाथ धो लो।"

कौसू ने गंगासागर में पानी लाकर बरामदे में रख दिया। हाथ-मुंह धोकर अच्चू अंदर गया। कौसू ने चौके में पाटा डाल दिया था। उसके सामने थाली रखी थी।

अच्चू ने तीन जनों का भात खा लिया। डकारते हुए जाकर मुंह धोया। उसके बाद धोती खोलकर उसे बेंच पर बिछाकर लेट गया। धोती के नीचे लाल कपड़े का जांघिया पहने था।

मुंशीजी के आने के पहले ही अच्चू सो गया था। मुंह खोले खर्राटे मारने की आवाज सड़क पर से सुनी।

अच्चू के बारे में मुंशीजी ने पहले ही सुन रखा था। वे कुछ भी कहे बिना अंदर चले गए।

"तुम क्यों चुप्पी साधे जा रहे हो। मारकर भगा दो इस बदमाश को यहां से।"

कुरम्बी अम्मा से सहा नहीं गया। बदतमीजी की भी एक हद होती है न ?

"उसे कोई मारकर भगा नहीं सकता।"

"कौन है वह, दामू बेटे।"

"कहीं से आया हुआ है। कहने से क्या फायदा—पुलिस वालों के साथ घूमता-फिरता है। उसका कोई भी कुछ बिगाड़ नहीं सकता। तुम जाकर चुपचाप किसी कोने में बैठ जाओ, मांजी।"

बातचीत सुनकर कहीं अच्चू जाग न जाए, मुंशीजी को यही भय था। अच्चू को मय्यषी में आए दो-तीन दिन ही हुए थे। फिर भी पुलिस वालों और गुंडों का जिगरी दोस्त बन गया था वह। पिछले दिन चौथे नंबर वाले ताड़ी के ठेके में अच्चू

ने बहुतों की हड्डी-पसली एक कर दी। नंगी कटारी लेकर ही चलता है। सब कुछ मुंशीजी को पता है।

"यहां कौन रहता है ?"

अच्चू ने आंखें खोलीं। उसने धोती उठाकर लपेट ली।

"मैं ही दामू मुंशी।"

मुंशीजी ने अदब से कहा, "मुझे जानते हो ?"

"हां, जानता हूं।"

"न जानते हो तो सुन लो—अच्चू। अच्छा बर्ताव करो तो मैं अच्छा हूं। गलती की तो..."

अच्चू ने अपनी कटारी ऊपर फेंककर पकड़ ली।

वह उठकर बाहर चला गया।

उसी दिन एक बलात्कार हुआ। मय्यषी के लोगों के लिए वह कोई बड़ी खबर नहीं थी। लेकिन इस बार अच्चू ने ऐसा किया था। इसी कारण से ताड़ी के ठेकों और धर्मशालाओं में वह बात चर्चा का विषय बन गई थी।

कुली कुमारन जब घर पर नहीं था, तभी मौका देखकर अच्चू वहां जा पहुंचा। कुमारन की बेटी कमला ही घर पर थी। अच्चू ने उसे सिर से पैर तक जरा देखा। अचानक उसका भाव बदल गया। उसकी आंखों में युग-युगांतरों की काम-पिपासा जाग उठी। अगाध गर्तों के ऊपर से पहाड़ की चोटी पर चढ़ने वाला पर्वतारोही। रणभूमि में उतरने वाला सैनिक। पौरुष के मूर्धन्य पर पहुंचने के पल में, मरणक्षेत्र के घोड़े की तरह वह खड़ा-खड़ा हांफने लगा...

गड़ांसी लेकर बदला लेने के लिए आए कुमारन को मारपीट कर गिरा दिया। समुद्र की ओर पीठ किए अच्चू ने ललकारा, "इस गांव की सारी की सारी औरतों के साथ बलात्कार करूंगा। कौन है पूछने वाला। आगे बढ़..."

कोई आगे नहीं आया। ताड़ी के ठेके से बाहर निकले पुलिस वाले ताली बजाकर हंस पड़े।

"वही मर्द है"; धर्मशाला के बरामदे में जुंएं मारती बैठी कल्लू ने ऐलान किया।

अच्चू का कोई घर नहीं था। परिवार नहीं था। नंगी कटारी लिए घूमता-फिरता रहा। भूख लगने पर सामने पड़ने वाले घर में जाकर हुक्म देता—"खाना परोसो।"

खाना न परोसने की हिम्मत किसमें है ?

नींद आने पर पहले दीख पड़ने वाले घर में घुस जाता। बरामदे में पड़ी बेंच या आरामकुर्सी पर जाकर लेट जाता। नहीं तो हुक्म देता—"चटाई और तकिया इधर दे।"

कौन-सा घर है, किसका घर है, सो कुछ भी देखता नहीं। मुंशीजी के घर

से कितनी ही बार उसने खाना खाया। कितनी ही रातों में दरवाजा खटखटाकर बुलाया। आवाज सुनकर कोई कुछ नहीं कहता। कौसू अम्मा चटाई और तकिया दे देती।

ऐसे अच्चू मय्यषी में स्थायी रूप से रहने लगा। धीरे-धीरे अच्चू की जड़ जम गई। थोड़े अरसे में ही अच्चू मय्यषी की तकदीर का एक हिस्सा बन गया।

जमाने द्वारा मय्यषी में प्रदर्शित नाटक का एक मुख्य अभिनेता था अच्चू।

चौदह

मलयन कुरम्बन मर गया। मरते समय सत्तर साल से ऊपर का था। बारह साल की उम्र से शुरू किया था उसने देवी का मुखौटा लगाना और मंत्र फूंकना।

मीतल मंदिर के देवता अब किसके पैरों से नाचेंगे ? काली खप्पर वाली अब खून कैसे पिएंगी ?

आधी रात की खामोशी में और कड़ी धूप वाली दोपहरियों में प्रापंचिक रहस्यों की ओट से परदेवता बाहर निकलकर अदृश्य हो घूमते-फिरते हैं। मय्यषी के लोग साल में एक बार ही उनका दर्शन करते हैं—कुरम्बन के देवी का मुखौटा लगाकर नाचते समय।

देवता अब किसके माध्यम से अवतरित होंगे ? किसके पैरों से नाचेंगे ?

"सांप के डंसने पर अब कौन विष उतारेगा ?"

यह कुञ्चक्कन का सवाल था। मय्यषी में बहुत सारे सांप हैं—खासतौर पर बरसात के मौसम में। कुञ्चक्कन को दो बार सांप काट चुके हैं—एक बार खेत में और दूसरी बार बत्ती के खंभे पर। दोनों बार उसको बचाने वाला था मलयन कुरम्बन।

"भूत-प्रेत चढ़ने पर अब कौन उतारेगा ?"

कुञ्चक्कन के साथ बैठे-बैठे ताड़ी पीने वाले बेटे कुञ्आणन ने पूछा। उसकी समस्या भूत-प्रेतों की है। कुञ्आणन भूत-प्रेतों में विश्वास रखता है।

"कुरम्बन का लड़का है न—वो उत्तमन ? बाप के चले जाने पर बेटा। यही तो प्रथा है न ?"

मेज में खड़िया से हिसाब लगाते-लगाते उण्णिनायर ने कहा।

"वो तो साम्यवादी है। साम्यवादी के विष उतारने से उतरेगा क्या ? भूत-प्रेत भागेंगे क्या ?"

कुञ्आणन को संदेह हुआ।

"तो भी वो बड़ा फुर्तीला है—वो उत्तमन।"

तगड़े हाथ-पैर। घुंघराले बाल। कोयले जैसा काला। उत्तमन सचमुच फुर्तीला है।

कुञ्चक्कन और कुञ्आणन के बैठे-बैठे ताड़ी पीते समय मलयन कुरम्बन का शव लिए लोग उस रास्ते से निकले। एक-दो जगह टूटी पट्टी वाली अरथी को ढोने वाले पूरब से आए मलयन लोग हैं। लोगों के बीच में कुञ्ञनन्तन मास्टरजी, वासूट्टी और पप्पन भी थे। अरथी की परछाईं में सिर झुकाए उत्तमन चल रहा था। धूप से उसके कनफूल और आंखों में आंसू चमक रहे थे।

अरथी ढोने वाले लोगों को देखकर कुरम्बी अम्मा अहाते में आकर खड़ी हो गईं। कुरम्बन द्वारा देवी का मुखौटा लगाकर किए जाने वाले नाचों के चित्र उनके मानस-पटल पर प्रकट होकर तिरोहित हो गए।—नारियल की कोंपलों से बने कपड़े पहने पांच आदमियों के बराबर ऊंचाई पर मुकुट लगाए गुलिकन[1] के चित्र। टोकरी और छड़ी पकड़े मंडप के सामने नाचने वाले कुट्टीचात्तन[2] का चित्र। देवी के मेले में तलवार से सिर पर वार करके प्रवचन करने वाले का चित्र।

जहां तक कुरम्बी अम्मा याद कर पाती हैं, ये सभी मुखौटे लगाकर नाचने वाला कुरम्बन ही था।

अरथी कुरम्बी अम्मा की आंखों के सामने से गुजर गई। पैरों से सिर तक सफेद कफन ओढ़ाया गया कुरम्बन। बाल झड़े, सफेद सिर का एक हिस्सा ही देख सकी।

"वो भी चला गया..."

कुरम्बी अम्मा ने अनजाने ही गहरी सांस छोड़ी।

पिता की ठंडी पड़ी देह को लिए खड़ी चिता पर उत्तमन ने आग लगा दी। आग भभक उठने पर कुरम्बन चिता पर उठकर बैठ गया। फिर टेढ़ा-मेढ़ा होकर धीरे-धीरे चिता में ही गिर गया।

"चलो चलें।"

चिता के सामने खड़े-खड़े सिसक-सिसककर रोने वाले उत्तमन के कंधे पर मास्टरजी ने हाथ रखा।

"चोर और काला बाजार चलाने का अभिनय करके मरने वाले भी होते हैं। तेरा पिता देवता का अभिनय करके मरने वाला व्यक्ति है। हम इस बात पर संतोष करें।"

लोग जा चुके थे। मास्टरजी, पप्पन और वासूट्टी ही बाकी थे। चिता के बुझने तक वे वहां रुके नहीं। उत्तमन को साथ लिए वे चल दिए। उत्तमन को उसके घर तक पहुंचा देने के बाद वे मास्टरजी के घर जा पहुंचे।

---

1. राहु, केतु जैसा एक अशुभ ग्रह है गुलिकन। उसके दोषों के निवारण के लिए उसका मुखौटा लगाकर पहाड़ी लोग नाचा करते हैं।
2. मंत्रवादियों का एक अधम देवता।

"मलयन कुरम्बन के साथ देवता भी मर जाते तो..."

पप्पन ने हवा में कहा। केवल पुलिस वाले और गुंडे ही उसके शत्रु नहीं हैं—देवता लोग भी हैं। देवताओं से वह घृणा करता है। देवताविहीन संसार ही उसकी स्वप्नभूमि है।

"यदि मुझमें सामर्थ्य होती तो मैं सारे के सारे देवालयों को पुस्तकालयों में बदल डालता।" वह कहा करता था।

"उत्तमन देवी का मुखौटा लगाएगा, ऐसा तुम्हें लगता है। वह यह नहीं करेगा।"

वासूट्टी ने शंका प्रकट की।

"मुखौटा नहीं लगाएगा तो उसके परिवार को भूखों मरना पड़ेगा।"

"अरे यार, एक प्रगतिवादी विचार वाला आदमी देवी का मुखौटा कैसे लगाएगा ?"

"वासूट्टी, जीवन में हम कैसे-कैसे मुखौटे लगाते हैं, उससे तो कहीं अच्छा ही है देवताओं का मुखौटा लगाना।"

"फिर भी मास्साब, उसके लिए कम-से-कम ईश्वर पर विश्वास होना तो जरूरी है न ?"

"ईश्वर पर विश्वास न होने पर भी चाहो तो तुम पुजारी बन सकते हो। वासूट्टी, हमारी निगाह में भक्ति में न आने वाला एक पहलू है—पेशा। उत्तमन उसे पेशे के रूप में स्वीकार कर ले।"

उस दिन की उनकी चर्चा उत्तमन के भविष्य के बारे में थी।

कुरम्बन के मरने के बाद सहज में ही परिवार का भार उत्तमन के कंधों पर आ पड़ा। तेरहवीं के अगले दिन उसकी बूढ़ी मां ने कहा, "अब तू पढ़ने मत जा।"

यह सुनने पर उत्तमन को गुस्सा आया। लेकिन मां की भीगी आंखें देखकर उसने अपने को काबू में कर लिया।

"तुम पढ़ने गए तो इस घर में चूल्हा नहीं जल पाएगा।"

उत्तमन को यह पता था। अब करना क्या है, उसे इसका कुछ भी पता नहीं। पढ़-लिखकर कोई अच्छी नौकरी करने की इच्छा थी उसकी। अचानक हुई मृत्यु ने उसके सारे कार्यक्रम उलट-पुलट दिए।

"तुम कुछ बोलते क्यों नहीं, बेटे।"

आखिर उत्तमन ने मां के चेहरे पर देखे बिना सामने फैले पड़े सूखे खेतों पर निगाह डालते हुए कहा, "देवी का मुखौटा लगाने और जहर उतारने का काम मेरे बस का नहीं।"

बाप-दादाओं के मार्ग से हटकर चलने की कोशिश कर रहा है वह। मंत्रवादियों की पीढ़ी की इतिश्री करने का निश्चय कर लिया है उसने।

उत्तमन के निश्चय ने उसकी बूढ़ी मां को चौंका दिया।

"यह परिवार भूखों मरेगा। देवता लोग कुपित होंगे।"

"कुपित होने के लिए देवता हैं कहां ?"

उत्तमन के सवाल ने मां को स्तब्ध कर दिया। धरती पर मानव नहीं हैं, ऐसा कहने पर शायद वह विश्वास कर सकती है। देवता नहीं हैं ऐसा कहने पर उसे विश्वास हो ही नहीं सकता।

मीतल के मंदिर के देवता उग्ररूपधारी हैं। स्नेह करने पर स्नेह का प्रतिदान करेंगे। गलती करने पर खानदान का सर्वनाश कर डालेंगे। परदेवताओं द्वारा तहस-नहस किए गए खानदान मय्यषी में हैं, सौभाग्य भर-भरकर दिए गए खानदान भी हैं। लंगड़ा कुञ्चक्कन एक जीता-जागता उदाहरण है।

घर में चूल्हा जलना बंद हो गया।

"मेरे पेट में चूहे कूद रहे हैं। मैं किसी के साथ चली जाऊंगी", उत्तमन की नवयुवती बहिन देच्चू ने धमकी दी।

उत्तमन ने जिद्द पकड़ ली। चाहे भूखों मरना क्यों न पड़े, मंत्र फूंकने या मुखौटा लगाने का काम नहीं करेगा। आखिर उत्तमन की मां कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की शरण में गई।

"मास्साब, वह आपका कहना ही मानेगा..."

मास्टरजी के पैरों के पास वह जमीन पर बैठ गई।

"घर में चूल्हा जले तीन दिन बीत गए। अब बेचने के लिए घर में कुछ भी बाकी नहीं रहा। आप हमारी रक्षा करें, मास्साब। मैं और मेरी बेटी भूखों मर जाएंगी।..."

वह मास्टरजी के पैरों के पास बैठी-बैठी रोती रही।

मास्टरजी ने उत्तमन को बुलवाया। पप्पन उसे बुला लाया।

"मंत्र फूंकने का काम नहीं करना है तो और कोई काम कर। अपनी मां को भूखों मारना अच्छा नहीं है, उत्तमन।"

"मैं कौन-सा काम करूं ?"

"जाकर बीड़ी बनाने का काम कर। नहीं तो फावड़ा लेकर खेतों में काम कर।"

"मुझे वो सब करने नहीं आता।"

"तो जो आता हो वही कर। जिंदगी भर देवताओं का मुखौटा लगाने वाले मलयन कुरम्बन के परिवार को भूखों नहीं मरने देना है।"

उत्तमन बिना कुछ कहे सिर झुकाए चला गया। दूसरे दिन सवेरे जागकर उसने तालाब में जाकर नहाया। धोती बदली। चंदन लगाया। बरामदे की आरामकुर्सी पर जाकर बैठ गया—जिस पर बैठकर मंत्र फूंककर मलयन कुरम्बन धागा दिया करता

था। धूप तेज हो जाने पर खेतों से होते हुए कुञ्ञाणन को आते देखा।

"क्या है ?"

"शाम को..."

कुञ्ञाणन बरामदे में घुस आया। चेहरा बुखार चढ़े जैसा पीला पड़ा था।

"शाम को ?"

"उण्णिनायर के ताड़ी के ठेके के बंद हो जाने के बाद मैं घर जा रहा था। अपना हाथ भी न दीखने वाला अंधेरा छाया था। पड़ाव तक पहुंचते-पहुंचते गिरजाघर में बारह घंटे बजे। चलते समय पीछे से एक पुकार आई—अबे कुञ्ञाणन !"

कुञ्ञाणन की आंखों के आगे तारे छूटने लगे।

"अनसुना करके मैं आगे बढ़ा। फिर से वही पुकार—अबे कुञ्ञाणन ! मुड़कर देखा. तो..."

"मुड़कर देखा तो ?"

"भालू साहब।"

खड़े होने में असमर्थ होकर वह घुटने पेट से लगाकर जमीन पर बैठ गया। उसके पीले पड़े गाल थरथराने लगे। फिर कुछ भी बोल नहीं सका।

कितने ही साल पहले पीटर द्वारा जीते जी जला दिए गए भालू साहब—उत्तमन को हंसी आ गई। लेकिन हंसना मना है। हंस दिया तो मलयन कुरम्बन का परिवार भूखों मरेगा। उत्तमन ने एक हाथ लंबा काला धागा लेकर मंत्र फूंककर कुञ्ञाणन के हाथ में बांध दिया।

"अब तुम जाओ। भालू साहब नहीं सताएंगे।"

कुञ्ञाणन ने कंधे पर पड़ी तौलिया लेकर चेहरे का पसीना पोंछ डाला। मारकीन की कमीज की जेब से एक आना निकालकर दक्षिणा दे दी।

खेतों से होकर दूर जाते हुए कुञ्ञाणन को उत्तमन देखता खड़ा रहा—उनके द्वारा ठगा जाने वाला पहला आदमी।

बरामदे में जुंएं निकालती बैठी बहन की ओर वह सिक्का फेंकते हुए उत्तमन ने कहा, "अब किसी के साथ जाने की जरूरत नहीं, देच्ची दीदी ! तुम्हें तसल्ली हो गई न ?"

उत्तमन ने पढ़ाई बंद कर दी। फिर मलयन कुरम्बन के घर में रोज चूल्हा जलने लगा। इसी तरह मीतल मंदिर में 'तिरा' नामक उत्सव पास पहुंचा।

मय्यषी के दो प्रमुख त्यौहार हैं—पुनीत कन्या मरियम के गिरजाघर का मेला और 'तिरा'। कोरियों का मंदिर होने पर भी मुसलमानों के अलावा और सभी जातियों के लोग 'तिरा' देखने आया करते हैं। मुसलमानों को मंदिर में घुसने की मनाही थी।

"हमें कोई एतराज नहीं।" मीतल के मुखिया चोई मूप्पन कहा करता : "कुट्टी चात्तन को पसंद नहीं।"

मीतल मंदिर के मुख्य देवताओं में एक है कुट्टी चात्तन।

"चोई मूप्पन के पिता रामन मूप्पन द्वारा खानदान पर शासन करने का समय..."

कुरम्बी अम्मा ने कहना शुरू किया। गिरिजा सुन रही थी। कुरम्बी अम्मा की सूखी उंगलियां उसके खुले पड़े बालों में जुंएं खोज रही थीं। गिरिजा जवान हो गई है। फिर भी कुरम्बी अम्मा उसे अभी तक किस्से-कहानियां सुनाया करतीं—खासतौर पर गिरिजा के सिर से जुंएं निकालते समय। कुरम्बी अम्मा के कहानी सुनाते समय उसका मन स्वप्न-भूमियों में चक्कर लगाता रहता। उसकी आंखों के सामने, मजबूत छाती और हाथ-पैरों पर बड़े-बड़े रोम वाला, बीड़ी और पसीने की बू फैलाने वाला उसका मर्द ही रहता है।

"सुन रही हो बिटिया ?"

बीच-बीच में कुरम्बी अम्मा पूछतीं। गिरिजा यांत्रिक ढंग से हामी भरती।

चोई मूप्पन के पिता रामन मूप्पन द्वारा खानदान पर शासन करने का समय। मूप्पन का केई नामक एक मुसलमान दोस्त था जिसके टीलों पर नारियल के बाग और सीमाओं पर चहारदीवारी थी। मुसलमान केई सहृदय और धनी था।

'अरे मूप्पन, हमें इस साल तुम्हारा 'तिरा' जरा देखना है।'

खानदान के अहाते में बैठे मूप्पन और केई कच्चे नारियल का पानी पी रहे थे।

'वह देवताओं के प्रति अपराध होगा न, केई।'

'नायर और ईसाई तुम्हारे मंदिर में घुस सकें, चमार और चंडाल तुम्हारा 'तिरा' देख सकें, तो हमें भी जरा देखना है।'

केई के कहने में न्याय है न ? मूप्पन ने सोच-विचार किया। मय्यषी के भंगी तक हर साल आकर 'तिरा' देखते हैं न ?

'तुम चुप्पी साधे क्यों बैठे हो ?'

'जैसी तुम्हारी मर्जी, केई !'

'तुम बात बदलोगे तो नहीं ?'

'नहीं, यार।'

उस दिन आधी रात को सिर्फ लंगोट पहने कंबल के अंदर लेटा मूप्पन सो रहा था। धुंधली चांदनी। मंदिर के मंडप का घी का दीया घी खतम हो जाने से बुझ चुका था। अचानक मूप्पन जाग पड़ा। खिड़की के उस ओर से कोई उसे बुला रहा है। सिर उठाकर देखने पर खिड़की के बाहर चांदनी में टोकरी और छड़ी लिए कुट्टी चात्तन खड़ा है। मूप्पन उठकर धोती पहनकर खिड़की के पास जाकर खड़ा हो गया।

'बंदा...'

मूप्पन भक्तिवश हो खड़ा-खड़ा कांपने लगा। उसके खानदान की पीढ़ियों से रक्षा करने वाला परदेवता सामने...।

'रामन... !'

खिड़की की लबियों के बीच से कुट्टी चात्तन की आंखें अंगारे जैसी जल उठीं।

'खानदान का सर्वनाश कर डालूंगा। खबरदार !'

कुट्टी चात्तन पीठ दिखाते हुए खड़ा हो गया। पहना हुआ पीला रेशमी कपड़ा हवा में उड़ने लगा। परदेवता जरा कूक मारकर चलता हुआ ओझल हो गया। दूर होते जाने वाले घुंघरुओं की झंकार। दूर बंद पड़े मंडप के अंदर परदेवता का घुसना मूप्पन देखता खड़ा रहा।

मूप्पन वायदे से मुकर गया। फिर मुसलमान केई मरते दम तक मूप्पन से बोला चाला नहीं। ''

कुरम्बी अम्मा ने कहानी समाप्त कर दी।

गिरिजा सपने में अपने आपको भूली बैठी थी। रजस्वला होने वाले दिनों में चारपाई पर आलस में पीठ के बल लेटते समय सावन के तीसरे पहरों में कंबल के अंदर ऊंघते समय बीड़ी और पसीने की उसकी जानी-पहचानी गंध...

एक के बाद एक करके फूटे पटाखों ने गिरिजा को जगा दिया। मीतल के मंदिर में पताका-आरोहण संपन्न हो चुका है। उत्सव आरंभ होने वाला है। मलयन कुरम्बन के मरने के बाद का पहला 'तिरा'।

"इस साल मुखौटा कौन लगाएगा ?"

"उत्तमन के अलावा और कौन है ?"

उण्णिनायर के ताड़ी के ठेके पर बैठे कुञ्चक्कन, कुञ्ञाणन वगैरह ने 'तिरा' के बारे में चर्चा की। मलयन कुरम्बन के मर जाने पर बेटा मलयन उत्तमन को मुखौटा लगाना है। पीढ़ियों से चली आने वाली प्रथा है यह।

"लेकिन, वह मुखौटा लगाएगा ?"

"नहीं लगाए तो उसे भुगतना पड़ेगा। गुलिकन से खिलवाड़, छेड़खानी नहीं करनी है।"

उत्तमन मंत्र फूंकने और विष उतारने का काम कर रहा है तो भी वह मुखौटा लगाएगा क्या ? मय्यषी के लोगों को संदेह हुआ। मुखौटा न लगाने पर गुलिकन गांव को तहस-नहस कर डालेगा। लेकिन एक दिन उत्तमन ने ऐलान किया—

"मैं मुखौटा लगाने जा रहा हूं। लेकिन मैं व्रत का अनुष्ठान नहीं करूंगा।"

मुखौटा लगाने वाले को व्रत का अनुष्ठान करना है। मांस-मछली हाथ से छूना तक नहीं चाहिए। स्त्री-संपर्क भी नहीं करना है। ये दोनों वह करेगा, ऐसी उत्तमन ने घोषणा की। उसी दिन वह पारक्कल जाकर पत्ते की टोकरी में मछली ले आया। वह देखकर उत्तमन की मां और बहन पर मानो बिजली गिर पड़ी। मंदिर

में पताका-आरोहण का समय था।

"उत्तमन, तू मुझे मार डाल रे !" मां सिसक-सिसककर रो पड़ी।

"मैं गुलिकन और कुट्टी चात्तन से डरता नहीं हूं, मां। देवताओं को बनाने वाले हम मलयन लोग हैं। हम मुखौटा न लगाएं तो उनका अस्तित्व नहीं।"

उत्तमन की मां ने कान बंद कर लिए।

"उसके लिए मैंने कौन-सा महापाप किया, हे मेरे भगवान !"

उत्तमन का कहा उनसे सहा नहीं गया।

मछली चौके में रखकर उत्तमन बरामदे में आ बैठा। उसने एक-दो बीड़ी पी। शाम हो जाने पर भी मछली पकाने की गंध आती नहीं दीखी। उसने चौके में जाकर देखा। चूल्हे के पास घुटने पेट से लगाए बैठी देच्ची रोती-रोती नाक पोंछ रही थी। उत्तमन ने फिर इंतजार नहीं किया। उसने स्वयं मछली पकाकर खाई।

उत्तमन का जी उतने से भी नहीं भरा। दूसरे दिन वह धर्मशाला में गया। शाम का समय—पूजा की घंटियां बजने और घी के दीये जलने का समय था।

"कल्लू !"

"यह कौन, उत्तमन ?"

कल्लू को खुशी हुई। मलयन होने पर भी फुर्तीला नौजवान। उसके रोजमर्रे के गाहक पुलिस वाले ताड़ी पीकर बेहोश होकर आया करते हैं। उत्सव का समय होने से मुखौटा लगाने वाले मलयन लोगों में देवताओं का सान्निध्य होगा। कल्लू के साथ लेटने के लिए आने वाला देवता है न ?

"तुम यह सब खूब सोच-विचार करके ही करते हो न, भैय्या।"

कल्लू ने चटाई से धोती लेकर पहन ली। उत्तर दिए बिना उत्तमन धर्मशाला से निकलकर चला गया। बिखरे बालों को बांधते हुए कल्लू ने कहा, "वो है मर्द।"

मलयन उत्तमन का मछली खाना और कल्लू के पास जाना गांव भर में फैल गया।

"यह गांव बरबाद हो जाएगा। आग बरसेगी।"

मय्यषी के लोग घबरा उठे। गांव के नेता चन्तुअच्चन मीतल के मुखिया मूप्पन से मिले। मूप्पन को सब कुछ पता चल गया था।

"उत्तमन को मुखौटा लगाने नहीं देना है। जान-बूझकर आफत मोल नहीं लेनी है।"

चन्तुअच्चन का सारा कहना मूप्पन ने शांत होकर सुना।

"यदि उत्तमन का करना गलत है तो देवता उसे दंड देंगे।" मूप्पन को इतना ही कहना था।

पताका-आरोहण के बाद पहले दो दिन मुखौटे नहीं लगाए जाते। पूजा और आराधना ही हुआ करती है। तीसरे दिन रात को मुखौटे लगाना शुरू होता है।

उस दिन संध्या होने के पहले मंदिर और पास-पड़ोस मय्यषी के लोगों से भर गया। चंद्रिका और गिरिजा भी वहीं आपस में मिलीं।

"तुम्हारा लहंगा नया है क्या ?"

गिरिजा ने चंद्रिका द्वारा पहना हुआ नीला रेशमी लहंगा हाथ से पकड़कर देखा।

"नया है, पिताजी ने भेजा है।"

उस बीच सिंगापुर से आने वाले एक मुसलमान के हाथ भरतन ने बहुत सारे कपड़े भेजे थे।

चंद्रिका और गिरिजा चूड़ियों की दुकानें देखती हुई घूमती फिरीं। बहुत सारे रंगों वाली कांच की चूड़ियां। गिरिजा ने लालसा से चूड़ियां देखीं। चूड़ियां खरीदने के लिए चवन्नी मांगी तो मुंशीजी गरजने लगे थे।

"यहां तो चावल खरीदने के लिए एक पैसा तक नहीं है। चूड़ियां फिर कहां से...?"

चंद्रिका ने आधी दर्जन काली कांच की चूड़ियां खरीद लीं। चूड़ियां बेचने वाले चेट्टी ने ही उसके हाथों में चूड़ियां पहना दीं। उसके बाएं हाथ में सोने की जंजीर वाली घड़ी है। इसलिए दाहिने हाथ में छहों चूड़ियां डलवा लीं।

चूड़ियों की दुकान से बाहर निकलते समय कुछ याद करते हुए चंद्रिका ने पूछा, "दासन दादा की चिट्ठी आती है क्या ?" नया लहंगा या ब्लाउज पहनते समय, नई चूड़ियां पहनते समय अनजाने ही उसे दासन की याद आ जाती है।

"एक महीना हुआ खत आए।"

चंद्रिका कुछ भी बोले बिना सिर झुकाए गिरिजा के साथ चलती रही। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी को दासन नियमित रूप से खत लिखा करता था। सबकी आंख बचाकर वह दासन की चिट्ठियां पढ़ लिया करती थी। सब फ्रांसीसी भाषा में होती थीं। अंग्रेजी स्कूल में पढ़ने वाली चंद्रिका को वह भाषा बिल्कुल नहीं आती थी। फिर भी दासन की चिट्ठी के एक-एक शब्द की जांच-पड़ताल करती। एक बार उसने एक चिट्ठी में अपना नाम देखा। उसकी छाती धड़क उठी। बहुत सिर खपाने पर भी दासन दादा ने उसके बारे में क्या लिखा है, यह समझ न सकी। मास्टरजी से पूछने की हिम्मत नहीं थी। उसको जानने की उत्कंठा से उसकी तीन रातों की नींद हराम हो गई।...

हर जगह उजाला। 'केलिकोट्ट'[1] का तालनिबद्ध स्वर। कतार में खड़े नगाड़े वाले और 'कोलकली'[2] वाले। उनके पीछे सजाए गए हाथी। घी के दीपों के प्रकाश

---

1. केरल में उत्सवों के आरंभ में ढोल, मजीरा, नगाड़े आदि बाजे बजाकर लोगों को उत्सव की सूचना देने वाली ताललय युक्त ध्वनि-विशेष को 'केलिकोट्ट' कहते हैं।
2. हाथों में लिए डंडों को बजाकर नगाड़े के स्वर में स्वर मिलाते हुए किया जाने वाला एक नृत्य विशेष।

में पीले कपड़े पहने, बाल खोले हुए, तलवार खोले भगत...

उस दिन आधी रात को उत्तमन गुलिकन का मुखौटा लगाने वाला है। नाट्यशाला में औरतों के बीच कुरम्बी अम्मा और कुञ्चिचिरुता बैठी हैं। अहाते में बनाए गए एक विशिष्ट पंडाल में मेयर चेक्कु मूप्पर, दावीद साहब, कोम्मीसार, लाप्पोर्त साहब, सेक्रत्तेर ब्रगादिए वैंकय्या आदि भी बैठे हैं। दावीद साहब की आंखें नाट्यशाला में सुनहली गोट वाली रेशमी धोती पहने बैठी कुञ्चिचिरुता पर बीच-बीच में जा टिकती थीं।

भीड़ में कुञ्ञनन्तन मास्टरजी, पप्पन और वासूट्टी भी खड़े थे।

नारियल के पत्तों से बने नेपथ्य में उत्तमन चटाई पर लेटा था। एक बूढ़ा मलयन उसके चेहरे पर रंग लगा रहा था। उत्तमन चटाई पर उठकर बैठ गया। एक मलयन के बच्चे ने उसके पैरों में घुंघरू बांध दिए। बोतल खोलकर एक घूंट ठर्रा से गला सींचकर एक कूक लगाई। पहली कूक। वह केवल उसका ही स्वर नहीं था। चिता में जल जाने वाले मलयन कुरम्बन, मलयन कुञ्चिकुट्टी और पीढ़ियों से मुखौटे लगाकर नाचने वाले कितने ही प्रपितामह मलयनों का स्वर।

मलयन का लड़का लबिये पर टंगा दीपक लिए नेपथ्य से बाहर आया। पीछे-पीछे उत्तमन भी। नगाड़ा बजाता हुआ एक बाजे वाला भी उनके साथ आया। मय्यषी में सभी जगह अंधेरा छाया हुआ था। आकांक्षा-भरी खामोशी !

मंडप के सामने नगाड़े और तुरही बजाने वाले कतार में खड़े हो गए। उत्तमन ने तीनों मंडपों में चढ़कर प्रणाम किया। सात सीढ़ियों वाले चबूतरे पर चढ़कर खड़ा हो गया। दो लोगों ने सफेद कपड़े से परदा तान दिया। मुकुट धरना किसी को देखना नहीं चाहिए। बांस और नारियल के कोमल पत्तों से बनाए गए पांच लोगों की ऊंचाई वाले मुकुट को चार लोग पकड़कर लाए थे। वह भारी मुकुट उत्तमन के कंधे पर सीधा बांध दिया गया।

पटाखे दगने लगे। नगाड़े बज उठे। सामने का परदा हटाया गया। परदेवता का साक्षात्कार करने पर बढ़ई रामन चबूतरे के सामने बेहोश होकर गिर पड़ा।

सहारा देने वाली लकड़ियों को जमीन पर टेकता हुआ समतोलन करता गुलिकन धीरे-धीरे चबूतरे की सीढ़ियां एक-एक करके उतरा। सिर पर का बड़ा मुकुट डांवाडोल होने लगा। लोगों ने भक्तिपूर्वक रास्ता दे दिया। नगाड़े वालों और लबिया पर टंगे दीप वालों की अगवानी के साथ मंडपों के पास पहुंचा गुलिकन धीरे-धीरे पग धरने लगा। मंदिर के अहाते में मुकुट की परछाईं लंबाई में नाच उठी।

पग धरने में तेजी आ जाने पर सहारे की लकड़ियां छोड़ दी गईं। घी के दीपों के पीले प्रकाश में बड़ा मुकुट लगाए गुलिकन नाचने लगा। नाच ने धीरे-धीरे तांडव का रूप धर लिया। आसमान पर झूलने वाला मुकुट लगाए किया जाने वाला नाच। तांडव नृत्य के चरम सीमा पर पहुंचते ही उत्तमन मंडप के सामने पेट के बल गिर पड़ा।

बजने वाले नगाड़े अचानक निःशब्द हो गए। दर्शक स्तब्ध रह गए।

घी के दीपों की रोशनी और परछाइयों से मिले-जुले मंदिर के अहाते पर गर्दन टूटकर, गिर जाने वाला उत्तमन छटपटाने लगा।

"इस बंदे को माफ कर दो...।"

परदेवताओं के अधिष्ठान-मंडप के सामने बैठकर मूप्पन रोया।

उत्तमन की मृत्यु के उपरांत उसकी मां और भाई-बहन मय्यषी छोड़कर कहीं चले गए। उसके साथ पीढ़ियों से मुखौटा लगाकर नाचने वाले कितने ही मलयनों के जन्म और मृत्यु का साक्षी बना वह परिवार गायब हो गया।

उत्तमन की दुर्मत्यु के बारे में बहुतों ने बहुत-कुछ कहा। देवताओं ने दंड दिया है, ऐसा मय्यषी के लोगों ने विश्वास किया। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी को केवल इतना ही कहना था—

"उसने पहली बार मुखौटा लगाया था। नाचने का अभ्यास नहीं था। उसने इस पर ध्यान नहीं दिया।"

पंद्रह

दासन 'बक्कलोरया' नामक परीक्षा पास हो गया। वैसे पांडुचेरी की पढ़ाई समाप्त हो गई।

दासन के वापस आने वाले दिन तो उसके घर में एक उत्सव ही था। पिछली रात को किसी ने पलक तक नहीं झपकाई।

कुरम्बी अम्मा ने कम-से-कम सौ बार कहा होगा कि "मेरा बेटा बड़ा आदमी बन गया होगा। कोट-पतलून और टोपी पहने होगा।"

बस्ती भर में दासन एक चर्चा का विषय बन गया था। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के घर में बैठे हुए वासूट्टी और पप्पन—सबने दासन के बारे में बातचीत की।

"वह बड़ा आदमी बन गया होगा !"

पप्पन ने कुरम्बी अम्मा की बात दुहराई। यह सुनकर वासूट्टी ने भौंहें सिकोड़ीं।

"गोरों के कालेज में पढ़ने से कोई बड़ा बनता है क्या ?"

"वासूट्टी, गोरों के शासन से ही हमारा विरोध है। उनकी संस्कृति और शिक्षा-पद्धति का हम विरोध क्यों करें ?"

"गोरों की संस्कृति को स्वीकारना और इधर दासन का विरोध करना एकबारगी कैसे संभव है ?"

"मैं कर सकता हूं। तुम्हारी बात मैं नहीं जानता।"

"तो फिर तुम निरे काठ के उल्लू हो। तुम त्रिशंकु स्वर्ग में हो।"

वासूट्टी के चेहरे पर घृणा दीख पड़ी। जहां जाओ, वहां सबके सब दासन की तारीफ करते हैं। गोरों की अधीनता में पढ़-लिखकर उन्नत उपाधि पाने वाला दासन—वासूट्टी को गुस्सा आ गया।

"चाहता तो मैं भी उसी की तरह पढ़ सकता था। पढ़कर क्या मिलता ? गोरों के पैर मैं चाट नहीं सकता।"

वासूट्टी का गुस्सा पप्पन समझ रहा है। दासन से उसे विरोध क्यों हो ? वह किसी से ईर्ष्या करने वाला नहीं है।

मास्टरजी कुछ भी कहे बिना चिंता में डूबे बैठे थे। वे दासन को पप्पन और वासूट्टी से ज्यादा जानते थे।

"वासूट्टी, तुम गुस्सा मत करो। दासन को आने दो। तुम सब उसको अभी तक समझ नहीं पाए हो। जरा सब्र करो।"

"मास्साब, आप कहना क्या चाहते हैं ?"

"सब्र करो, वासूट्टी ! तुम समझ सकोगे।"

सिर के नीचे दोनों हाथ रखे मास्टरजी छत पर आंखें गड़ाए लेटे रहे। दासन जिस दिन आने वाला था, उस दिन वासूट्टी और पप्पन रेलवे स्टेशन पर जा पहुंचे। मुंशीजी वहां पहले से ही पहुंच चुके थे। सेक्रत्तारिया का एक अधिकारी पुरुषू भी स्टेशन पर आया था। वह वहां क्यों आया है, वासूट्टी और पप्पन ने आपस में विचार किया। पुरुषू सेक्रत्तेर करुणन का दाहिना हाथ है।

प्लेटफार्म पर खड़े अच्चू और पुलिस वाला अंत्रु कुछ बातें कर रहे हैं।

पोर्टर कुञ्ञिकण्णन ने घंटी बजाई। मंगलापुरम मेल आने वाली है। इस बीच कुञ्चक्कन और पीलपांव वाला अन्तोणी भी स्टेशन पर आ पहुंचे थे।

रेलगाड़ी प्लेटफार्म पर आकर रुकी।

तीसरे दर्जे के डिब्बे से हाथ में बोरे का एक झोला लिए दासन बाहर आया। सफेद धोती और आधी बांह की कमीज पहने था। बहुत दुबला हो गया था। चेहरे पर पहले से अधिक गांभीर्य और शांति थी।

सबसे पहले उसकी आंखें पिता के चेहरे पर पड़ीं। गंजी खोपड़ी के बचे-खुचे बाल भी पक गए थे। कमान की तरह झुकी पीठ।

"अब आपकी तबीयत कैसी है पिताजी ?"

दासन पिता के पास जाकर खड़ा हो गया।

"खांसी और दमा ही है। रात को पलक झपका पाऊं तब न ?"

"डॉक्टर क्या कहता है ?"

"दवा से यह अच्छा नहीं होगा, बेटे। ठीक होने वाली बीमारी नहीं है यह..."

"ऐसा मत कहो।"

दासन ने अपना हाथ पिता के कंधे पर रख दिया। मुंशीजी ने दासन का झोला लेने के लिए हाथ बढ़ाया।

"मैं ही पकड़े रहूंगा, पिताजी।"

"यही है ? संदूक कहां गया ?"

"उसका कुंडा टूट गया। लेकर नहीं आया।"

दासन ने हंसने की कोशिश की। पिता के चेहरे के भाव-परिवर्तन पर उसने गौर किया। मुंशीजी ने अपने बेटे को सिर से पैर तक जरा देखा।

वे प्लेटफार्म से बाहर की ओर चल पड़े। पीछे-पीछे वासूट्टी, पप्पन वगैरह भी।

"हमारी याद है ?"

पप्पन ने पूछा।

याद है, ऐसा है क्या ? मास्टरजी के नाम लिखे खतों में उनके बारे में लिखना भूलता ही नहीं था। फिर यह सवाल किसलिए ?"

"मास्साब की तबीयत कैसी है ?"

"पहले की तरह उठकर चलते-फिरते हैं, बस इतना ही। ऐसे कितने दिन चलेंगे, कौन जाने...!"

वे रेलवे स्टेशन से बाहर आए।

"हम लोग भी हैं यहां...", कुञ्चक्कन ने याद दिलाया। पीलपांव वाले ने उसकी आड़ में खड़े होकर सिर खुजलाया। दासन ने जेब से अठन्नी निकालकर उसके हाथ पर रख दी।

"दोनों लोग बांट लो।"

वे हाथ जोड़ते हुए चलते गए।—एक लंगड़ाता हुआ और दूसरा पीलपांव घसीटता हुआ।

बाहर सरकारी कार में पुरुषू बैठा हुआ था। दासन को आता देखकर वह कार से उतरा। बंद लिफाफा दासन के आगे बढ़ाते हुए उसने फरमाया—

"द ला पार द मोसियो..."

"बड़े फ्रांसीसी साहब का संदेश है लिफाफे में।" लिफाफा दासन को देने के बाद पुरुषू दुबारा कार में बैठकर धूल उड़ाता चला गया।

दासन ने लिफाफा खोला। सभी की आंखें दासन के चेहरे पर टिक गईं। मुंशीजी की छाती तेजी से धड़कने लगी। बड़े फ्रांसीसी साहब का सेवक संदेश लाया था। कोई न कोई खास बात जरूर होगी।

बड़े फ्रांसीसी साहब के हस्ताक्षर वाला पत्र। दासन की इस नयी सफलता पर वे आह्लाद प्रकट करते हैं। दासन को बधाइयां देते हैं। फ्रांस में उच्च शिक्षा के लिए वजीफा या सेक्रत्तारिया में कोई नौकरी। इनमें से जो भी चाहे स्वीकार कर सकता है। दूसरे दिन बंगले पर जाने का निर्देश भी था उस खत में।

पत्र पढ़ते ही दासन की आंखों की हंसी गायब हो गई। उसका चेहरा अधिक गंभीर हो गया। पत्र मोड़कर जेब में रख लिया।

"खत में क्या है बेटे ?"

जानने की उत्कंठा से मुंशीजी का दम घुटने लगा।

"मुझे फ्रांस भेज देंगे, नहीं तो सेक्रत्तारिया में कोई नौकरी दे देंगे, ऐसा लिखा है।"

मुंशीजी खुशी से बेहोश-से खड़े रहे। होश आने में उन्हें थोड़ी देर लगी। उनकी आंखें दूर पर दीख पड़ने वाले गिरजाघर के क्रूस पर जा टिकीं।...

रेलवे स्टेशन के बाहर वाले लंबे रास्ते से वे चलने लगे। धूप तेज होती जा रही है। दोनों ओर लुने हुए खेत। खेत के उस पार बाईं तरफ मलयन उत्तमन का

टूटा-फूटा घर दीख रहा था।

"उत्तमन के मरने की खबर तुझे मिली थी न ?"

"मास्साब ने लिखा था। बड़े दुःख की बात है।"

काला, नाटा शरीर। कानों में काले चेहरे पर फबने वाले कनफूल। वह चेहरा दासन के सामने पल-भर के लिए स्थिर रहा।

राहगीरों ने आदर से दासन की ओर देखा। दरवाजों और खिड़कियों की ओट से कितनी ही आंखों की जोड़ियां उसकी ओर अग्रसर हुईं। दासन ने वह सब नहीं देखा। वह बड़े फ्रांसीसी साहब की चिट्ठी के बारे में सोच-विचार कर रहा था।

इतनी उम्मीद नहीं की थी। और कोई मौका होता तो खुशी होती...।

अब दासन संतोष कर सकता है क्या ? वह अपना रास्ता चुन चुका है। वह संतोष का मार्ग नहीं है।...

क्षुब्ध मन वाला दासन पिता के साथ-साथ चलता रहा। पप्पन और वासूट्टी विदा लेकर चले गए। दासन की कलाई पर मुंशीजी की पकड़ कसती गई। उसकी आंखें भीगने लगीं। मुंशीजी के परिवार की किस्मत बदलकर लिखी जा रही है न ? दस्तावेज लिख-लिखकर अब उसे कमर तोड़ने की जरूरत नहीं। आगे से उसे गरीबी झेलनी नहीं है। वह पुण्यात्मा है। नहीं तो दासन उसका बेटा बनकर पैदा क्यों हुआ ?

मास्टरजी के घर की ओर जाने वाले रास्ते के मोड़ पर पहुंचने पर दासन ने पिता की पकड़ धीरे-धीरे छुड़ाते हुए कहा, "मैं जरा मास्साब से मिलकर आता हूं।"

"बाद में मिलना ? तरसती आंखों से तुम्हारे इंतजार में एक घर में बैठी है।"

"मां से कह दीजिए कि मैं अभी आता हूं।"

दासन मास्टरजी के घर की ओर जाने वाले रास्ते से आगे बढ़ा और मुंशीजी अंगोछा सिर पर डाले घर की ओर। जल्दी चलना है, कौसू से हालचाल बताना है। हमारा बेटा फ्रांस जा रहा है—मेरा-तेरा बेटा। कौसू ! यह खुशी हम कैसे सह पाएंगे !

दासन के पहुंचते समय मास्टरजी चारपाई पर पीठ के बल लेटे ऊंघ रहे थे। सूखकर कांटा बना शरीर। चेहरे की दाढ़ी पक गई है। चारपाई के पैताने लीला दीदी बैठी हैं।

"चंद्रिका के पिता का कहना है कि आपरेशन के लिए वेल्लूर ले जाना है।"

"भरतन दादा कब आएंगे ?"

"अभी पांच-छह महीने और हैं।"

"तब तक मास्साब जिंदा रह पाएंगे क्या ?"

लीला दीदी ने कुर्सी आगे बढ़ा दी। दासन बैठा नहीं। मास्टरजी को आवाज

देकर जगाना उसने ठीक नहीं समझा। शाम को फिर आ सकता है।

मां इंतजार करती होंगी। झोला लेकर बाहर निकला। प्रोफेसर सुब्बरामन द्वारा दिए गए कागज उसमें हैं। शाम को आते समय दे देगा।

बरामदे की ओर बढ़ते समय जानी-पहचानी पुकार सुनी, "दासन दादा।"

वह अनजाने ही खड़ा का खड़ा रह गया।

धीरे-धीरे पास आती हुई पायलों की रुनझुन। दरवाजे की देहरी पर सिर झुकाए वह खड़ी रही।

दासन ने सिर उठाकर देखा। कितनी सुंदरता—कटि की बंकाई और विस्तार बढ़ गए हैं। बांधे हुए अधखुले बाल कमर तक लटके हैं।

"दासन दादा, आप आए कब ?"

"सीधा यहीं आया हूं।"

कुछ देर की खामोशी। दरवाजे पर माथा टिकाए वह खड़ी रही।

"तुम अब किस दर्जे में पढ़ती हो ?"

"दसवें दर्जे में।"

दरवाजे की ओर मुड़कर खड़ी हो उसने नाखूनों से कुछ रेखाएं खींचीं।

"दासन दादा..."

"हूं ?"

दरवाजे पर चलने वाली उंगलियां रुक गईं। सिर और भी झुक गया। उसने धीमे स्वर में कहा, "मैं रजस्वला हो गई।..."

उसकी आंखें जरा छटपटाईं।

दासन अचंभे में पड़ गया था। फिर भी वह प्रकट किए बिना हंस दिया।

"आठ महीने और चौदह दिन हो गए।"

"महीने और दिन का हिसाब लगाती रही तुम, मेरे आते समय मुझे अचंभे में डालने के लिए ?"

"दासन दादा, आप मेरे लिए कुछ लाए हैं ?"

"तुम्हें क्या चाहिए, चंद्री ?"

अपराध-बोध के साथ पूछा था। चंद्रिका के लिए ही नहीं, वह किसी के लिए भी कुछ भी नहीं लाया है। झोले में पहनने वाले कपड़े और कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के लिए संदेश हैं।

"मैं चलूं, चंद्री ?"

"हूं।"

उसने चेहरा उठाया। काजल लगी आंखें छटपटा रही हैं।

"शाम को आऊंगा।"

उसने सिर हिलाया।

क्षुब्ध मन। अनेक तरह की चिंताएं तरंगों जैसी मन में फैल रही हैं। उसके बीच चंद्रिका। बहुत कुछ सोचता-विचारता चलता रहा। घर जा पहुंचा। मां, पिता, गिरिजा सब बैठक में इंतजार करते बैठे हैं।

आते देखकर मां ने दौड़कर बांहों में भर लिया।

"एक चिट्ठी भेजने में क्या हर्ज था। मैं तुम्हारे लिए कितनी बेचैनी सहती रही।..."

दासन की पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्होंने शिकायत की।

पांच-छह महीने से घर पर चिट्ठी नहीं लिखी थी। जान-बूझकर ऐसा नहीं किया था। पढ़ाई और राजनीति के चक्कर में पड़ने का समय। कुल चार घंटे सो पाने के दिन।

कुरम्बी अम्मा दासन को टकटकी लगाए देख रही थी। सफेद धोती और आधी बांह की कमीज देखकर उन्हें घोर निराशा हुई। इसके लिए ही पांडुचेरी गया था क्या ? गोरों के कालेज में पढ़ा-लिखा था ?

"कोट-पतलून और टोपी कहां है, दासन ?"

दुःख से कुरम्बी अम्मा की आंखें डबडबा आईं। लेस्ली साहब की तरह बूट और टोप के साथ आकर घुसेगा, ऐसा ही अभी तक सोच रखा था न ? वह सब देखने के लिए ही आज तक इंतजार किया था न ?

"एक दिन मैं कोट-पतलून पहने, टोप लगाए साहब बनकर आऊंगा, इतना काफी नहीं है ?" दासन ने दादी को तसल्ली देने की कोशिश की।

"टोप वगैरह लगाकर चलने वाला है दासन, मांजी" कौसू अम्मा ने गर्व से कहा।

"बड़े फ्रांसीसी साहब दासन को फ्रांस भेज रहे हैं", मुंशीजी ने पत्नी को सूचित किया। खुशी से उसका भी दम घुट रहा है अब।

कुरम्बी अम्मा ने डिबिया खोलकर चुटकी-भर सुंघनी सूंघी।

दासन नहा-धोकर खाने बैठा। गिरिजा ने खाना परोसा। चंद्रिका की तरह वह भी बड़ी हो गई है।

"तुम तो बड़ी हो गई हो, बहना। मैं तो तुम्हें पहचान ही नहीं पाया।"

गिरिजा ने लजाते हुए मुंह मोड़ लिया।

"अब किसी की खोज करनी है ?"

सुंघनी के नशे में आंखें बंद किए बैठी कुरम्बी अम्मा ने कहा। मुंशीजी ने जवाब दिया, "मैंने एक आदमी को खोज रखा है।"

"कौन है ?"

"दावीद साहब।"

"बाप रे ! उसके लिए क्या कुञ्चिरुता राजी होगी ?"

पिता, मां और दादी ने एक साथ ठहाका मारा। गिरिजा लाल चेहरे के साथ दरवाजे के पीछे ओझल हो गई।

शाम को धोती और कमीज बदलकर चलते समय मुंशीजी ने याद दिलाया, "मिस्सी से मिलना भूलना मत, बेटे।"

मिस्सी हमेशा दासन का हालचाल पूछा करती थी।

दासन के वापस आने की बात का उन्हें पता है। आज भी दासन के लिए उन्होंने अपनी मशहूर 'केक' बनाकर रखी होगी न ?

बहुत समय के बाद रियूद लग्लीस से होता हुआ चला।

आदर से देखने वाले लोग। कोई ठाठ-बाट नहीं। उन्होंने आपस में कहा– कोई घमंड नहीं। देखने पर लगेगा क्या, कि गोरों के कालेज में पढ़कर आया है ?

"वही है मर्द। बड़ी परीक्षा पास हो जाने से क्या हमारी खाल सफेद हो जाएगी ? हम गोरे बन जाएंगे क्या ?"

शेखरन की चाय की दुकान पर बैठे किसी ने कहा।

दासन पहले मिस्सी के बंगले पर गया।

मिस्सी को देखने पर पहचानने में कठिनाई हुई। पुराने मिस्सी का प्रेत था वह। एंड़ी तक पहुंचने वाली काली पोशाक। चूहे की पूंछ जैसे लाल बाल एक धागे से सिर पर ऊपर बांध रखे हैं। कमान की तरह झुका शरीर।

क्या यह नीली आंखों और सुनहले बालों वाली वही सुंदरी है जो किसी समय लेस्ली साहब का हाथ पकड़े समुद्र-तट पर हवा खाने के लिए जाती थी?

"मुझे आंखों से ठीक से दिखता नहीं, बेटे।"

उन्होंने दासन के सिर और गालों पर टटोलकर देखा। आंखों की रोशनी कम हो जाने पर भी उन्होंने दासन के लिए 'केक' बनाकर रखी थी–हमेशा की तरह खूबसूरत केक। दासन को केक खिलाती हुई वे उसके पास बैठी रहीं।

"गस्तोन भाई..."

दासन ने पूरा नहीं किया। गस्तोन साहब के बारे में किसे क्या पूछना है ? बेचारी मिस्सी के दिल को क्यों दुःखाया जाए ?

गस्तोन साहब बंगले के ऊपर वाले अपने बंद कमरे में थे। समय बीतता जा रहा है। साहब अब भी अपने कैदखाने में ही हैं। बाहर निकले दशाब्दियां बीत गईं। शायद वे अब कभी भी बाहर नहीं आएंगे। अपने कैदखाने में ही साहब कदाचित आखिरी सांस लेंगे...

मिस्सी के बंगले में बैठे-बैठे ही दासन ने पातार समुद्र-तट पर बैठे हुए पप्पन और वासूट्टी को देखा। रिपब्लिक स्मारक के नीचे बैठे वे बीड़ी पी रहे हैं।

"अब तुम्हारा कार्यक्रम क्या है ?"

वासूट्टी ने एक बीड़ी बढ़ाई। उसे सुलगाकर धुआं उड़ाते हुए दासन उनके

पास बैठ गया।

"फ्रांस जाने वाले हो, है न ?"

"मुझसे अभी कुछ मत पूछो, वासूट्टी।"

सवेरे बड़े फ्रांसीसी साहब की चिट्ठी मिलने के बाद से खोपड़ी में आग लगी हुई है। एक ओर बीमारी और घर-गृहस्थी की मुसीबतों से असमय पर बूढ़े हो जाने वाले पिता और दूसरी ओर अपने जीवन की धुरी बने आदर्श।

"तो अब तुम फ्रांस जा नहीं रहे हो क्या ?"

वासूट्टी ने अचरज प्रकट किया।

"तो सेक्रत्तारिया की नौकरी ही तुम्हें करनी है, है न ? खूब रही। तुम भी दूसरे एक सेक्रत्तेर करुणन बन सकते हो..."

"वासूट्टी, तुम मुझे समझ नहीं पाए हो।"

और कुछ कहना नहीं चाहा। सांझ ढलने तक पातार समुद्र-तट पर बैठा रहा। रात में मास्टरजी के घर से लौटते समय उसने अपने घर में उसके बारे में ही बातचीत होते सुना।

मां पूछती हैं,

"फ्रांस में जाकर दासन क्या पढ़ेगा ?"

"डाक्टर बन जाए। यहां किसी के बीमार पड़ जाने पर देखने के लिए कोई है क्या ?"

सपनों को ज्यादा रंगीले बना रहे हैं वे। दासन अंदर घुसा। उसकी ओर उठी दो जोड़ी निगाहों में कितना अधिक आनंद है।...मां-बाप को इतना अधिक संतुष्ट और कभी देखा है क्या ?

लेकिन यह संतोष अधिक दिन नहीं जिएगा। वह उसे तहस-नहस करने जा रहा है। उनकी कीमती खुशी वह उनसे छीन लेगा। बदले में वह उन्हें आंसू देगा।

बहुतों को मिट्टी में मिलना है। यह मय्यषी की तकदीर है। दूसरों को रुलाने से अच्छा अपने मां-बाप को रुलाना है क्योंकि उनके आंसू उसके भी आंसू हैं।

"सवेरे दस बजे ही बड़े फ्रांसीसी साहब से मिलने जाना है न ?"

"भाई, आपकी धोती और कमीज पर मैंने लोहा कर रखा है।"

बिना कुछ बोले सिर झुकाए बैठकर खाना खाया। कुरम्बी अम्मा ने दासन के पास जाकर उसके सिर पर हाथ फेरा।

"तू जहाज पर बैठकर जाएगा न ? सातों समुंदर पार करके..."

पूरी रात सो नहीं सका। कितनी बीड़ियां सुलगाईं, कोई हिसाब नहीं। सवेरे निंदासी आंखों से पिता के सामने जाकर शांत भाव से कहा, "मैं फ्रांस नहीं जा रहा हूं, पिताजी..."

मुंशीजी भौचक्के रह गए।

"सेक्रत्तारिया की नौकरी भी न करने का निश्चय किया है।"

शांति भंग किए बिना बातचीत की। एक प्रतिमा की तरह बैठे पिता ने सब कुछ सुना। एक अजीब-सी खामोशी वहां जम गई। कुछ देर के बाद अंदर से मां की सिसकियां सुनाई पड़ीं।

आंसुओं का अनंत प्रवाह प्रारंभ हो रहा है। मुझे शक्ति प्रदान करो...

सोलह

दासन ने बड़े फ्रांसीसी साहब से मिलना नामंजूर कर दिया, यह जानने पर बस्ती वालों ने दांतों तले उंगली दबा ली। ऐसा धैर्य और साहस आज तक और किसी ने नहीं दिखाया ? बड़े फ्रांसीसी साहब को जरा देखने के लिए और उनके मुंह से निकला एक शब्द सुनने के लिए मय्यषी के लोग ललचाते रहते हैं।

"उसे ठिकाने लगाने का इंतजार कर रहे थे मुंशीजी। वे यह सब कैसे सहेंगे ?"

लीला को भी बड़ा दुःख हुआ। मुंशीजी के हालातों से वह खूब वाकिफ थी।

"दासन का निर्णय मुंशीजी के परिवार के लिए एक बहुत भारी नुकसान है। लेकिन इस बस्ती के लिए वह एक निधि है।"

कुञ्अनन्तन मास्टरजी की मौत की परछाई पड़ी आंखों से खुशी छलकती दीख रही थी।

"कुञ्अनन्तन, बस्ती वाले तुम्हारे सिर पर ही दोष मढ़ेंगे। कहेंगे कि दासन से तुमने ही ऐसा करवाया है।"

"ऐसा अपराध सिर पर मढ़वाने में मुझे खुशी ही है।"

"कुञ्अनन्तन, तुम सच-सच बताओ, क्या दासन ने तुम्हारे कहने से ही किया है ?"

"नहीं। वह तो मुझसे भी ज्यादा शिक्षित और समझदार है।"

लीला कुछ कहे बिना खड़ी रही।

"दासन आगे भी अचंभे में डालने वाले काम कर दिखाएगा। लीला दीदी, वह इस बस्ती की तकदीर बदल डालेगा। आप यह देख सकेंगी।..."

मुंशीजी के बारे में सोचते समय मास्टरजी का मन दुःखी हो जाता। फिर भी दासन के निर्णय पर आह्लादित हुए। वे अब चैन से आंखें मूंद सकते हैं। उसने जो शुरू किया है, दासन उसे आगे बढ़ाएगा। वह उसके पद-चिह्नों पर चलेगा।

दासन के निर्णय पर सबसे अधिक आह्लादित होने वाला दूसरा व्यक्ति था वासूट्टी। दासन के संबंध में उसके मन में जो कुछ आशंकाएं थीं वे सब दूर हो गईं।

वासूट्टी और पप्पन दासन की खोज में उसके घर जा पहुंचे। मुंशीजी के घर में कोई चहल-पहल नहीं, मानो कोई मर गया हो। मरघट जैसा। मुंशीजी की आरामकुर्सी खाली पड़ी है।

"यहां कोई है नहीं क्या ?" अहाते में खड़े वासूट्टी ने पुकारकर पूछा। कुछ देर तक किसी ने जवाब नहीं दिया। आखिर गिरिजा ने दरवाजे के पीछे खड़ी होकर बताया, "भाई यहां नहीं हैं।"

"कहां गए ?"

"पता नहीं।"

गिरिजा की पलकों और गालों पर आंसू सूख जाने के निशान थे। दासन सवेरे चला गया है। खाना खाने नहीं आया। आया होता तो भी क्या खाना खाया होता ? उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला।

वासूट्टी और पप्पन ने दासन की कई जगह खोज की—दासन के आमतौर पर बैठने की जगहों पर रिपब्लिक स्मारक के नीचे, समुद्र-तट पर, वाचनालय में ...कहीं भी नहीं दिखा।

"वह कहीं बैठा-बैठा अपने मन की आग बुझाने की कोशिश कर रहा होगा।" पप्पन ने कहा, "हम उसे यों ही छोड़ दें।"

वे फिर दासन की खोज में नहीं निकले।

उस दिन एक और व्यक्ति भी दासन को खोज रहा था—चंद्रिका। उसने पहली बार दुपट्टा पहना था। सफेद लहंगे पर लाल दुपट्टा। माथे पर काली टिकुली। फीते से बंधे खुले बिखरे बाल। आईने के सामने खड़े होने पर उसने दासन को याद किया।

छतरी और किताबें लेकर स्कूल चल पड़ी। मंदिर के सामने पहुंचने पर मन ही मन मनाया, "रास्ते में दासन दादा मिल जाएं, हे भगवान !—"

रियूद लागार से वह रियूद लग्लीस पर पहुंची। वह मय्यषी की एक प्रमुख सड़क है—तलश्शेरी और वडकरा को मिलाने वाली सड़क। पुनीत कन्या मरियम का गिरजाघर और विज्ञानपोषिणी वाचनालय वहीं पर हैं।

वाचनालय के सामने पहुंचने पर अनजाने ही आंखें उस ओर खिंच गईं। नहीं, दासन दादा नहीं हैं।

सिर उठाए बिना दोनों ओर निगाह डालते हुए चंद्रिका चलती रही। नंगी कटारी लिए धोती उचकाए आने वाला अच्चू। कंधे पर सीढ़ी और हाथ में मिट्टी के तेल का पीपा लिए लंगड़ाकर चलने वाला कुञ्चक्कन, बड़े तड़के ही ताड़ी के ठेके पर जाने के कारण नशे में चूर डगमगाते चलने वाले पुलिस वाले।...वैसे बहुतों को उसने देखा। केवल दासन ही नहीं दीखा।

रियूद ला प्रिसोम पर चंद्रिका का स्कूल है। स्कूल के पास पहुंचने पर उसने

चाल धीमी कर दी। पातार समुद्र-तट पर दासन दादा होंगे क्या ?

मुरझाया चेहरा लिए वह कक्षा में गई।

दोपहर को स्कूल से लौटने पर उसने पूछताछ की, "मांजी, दासन दादा आए थे ?"

"नहीं, बिटिया !"

चंद्रिका ने कुएं के पास जाकर हाथ-मुंह धोकर नाममात्र को खाना खाया। खाने का मन नहीं हुआ। दो बजे फिर स्कूल पहुंचना था। कड़ी धूप थी। गिरिजाघर के ऊपर वाला क्रूस तलवार की धार जैसा चमचमा रहा था।

वाचनालय के सामने पहुंचने पर आंखों से एक बार और खोजबीन की। वाचनालय खाली पड़ा था। इस कड़ी दोपहरी में कौन वहां आकर बैठेगा ?

शाम को स्कूल छूटने पर रोजमर्रे के खिलाफ वह रास्ता बदलकर चली। पातार समुद्र-तट पर दासन से मिल सकेगी, ऐसी आशा की। रियूद रेसिदाम्स पर पहुंचने पर दिल धड़कने लगा। रिपब्लिक स्मारक के नीचे पप्पन और वासूट्टी बैठे थे। लेकिन जिससे मिलना चाहती थी, केवल वही नहीं था।

फिर वह दासन के घर की ओर चल पड़ी। गिरिजा से मिलने आई है, ऐसा बहाना कर सकती है। दासन दादा वहां जरूर होंगे—उसने उम्मीद की। पातार समुद्र-तट और वाचनालय में थे नहीं। फिर जा कहां सकते हैं ?

चंद्रिका की आवाज सुनकर गिरिजा बाहर आई। रूखा-सूखा चेहरा। हंसने की कोशिश करते हुए उसने पूछा, "तुम दुपट्टा कब से डालने लगीं ?"

"आज से।"

तिरछी निगाह से दासन के कमरे की ओर देखा। चारपाई पर उलटी खुली पड़ी मोटी किताब। केवल किताब पढ़ने वाला आदमी ही दिखाई नहीं पड़ा।

"तुम बैठो।"

गिरिजा ने कुर्सी की ओर इशारा किया। कौसू अम्मा या कुरम्बी अम्मा को बाहर नहीं देखा। मुंशीजी को भी नहीं। वे कचहरी नहीं गए थे। रंग उतरा छाता दरवाजे पर टंगा था। मुंशीजी के घर में दुःख छाया हुआ था। सांस लेने वाली हवा में आंसू की नमी थी...।

लेकिन चंद्रिका वह सब समझ नहीं पाई। दासन को घर पर भी न देख पाने से उसे रुलाई आई।

बैठी नहीं। उलटे पांव लौट पड़ी। यह देखकर गिरिजा चकित रह गई होगी।

मुरझाए चेहरे और बिखरे बालों के साथ घर लौटी। मां ने पूछा : "कहां गई थी तू ? पांच बज गए हैं।"

"मैं गिरिजा के घर गई थी।"

"तू अब वहां क्यों गई, बिटिया ?"

वह सकपका गई। गिरिजा का घर मरघट जैसा है न ? उनके दुःख को कौन बांट सकता है ?

"दुपट्टा उतार दो, चंद्री।" शाम हो जाने पर मां ने कहा, "घर में दुपट्टा डालने की जरूरत नहीं, लहंगा काफी है। तू उतनी बड़ी तो नहीं हुई न।"

स्कूल से जिस पोशाक में आई थी, वही पहने सड़क पर आंखें गड़ाए बैठी थी चंद्रिका।

कुञ्ञनन्तन मास्टरजी और कणारन अंदर बैठे-बैठे कुछ गंभीर बातें कर रहे थे। कुछ देर बाद वासूट्टी और पप्पन भी आ पहुंचे।

"दुपट्टा डालना कब से शुरू कर दिया ?"

शून्य पड़ी सड़क पर आंखें गड़ाए बैठी चंद्रिका ने पप्पन का सवाल सुना ही नहीं।

"दुपट्टा उतारा नहीं तूने अभी तक ?"

रात में खाना खाने बैठते समय मां ने दुबारा फिर याद दिलाई। तब भी वह कुछ नहीं बोली। धुएं से धूमिल पड़ी नगरपालिका की बत्ती की रोशनी फैली पड़ी है। अंधेरे में आंखें गड़ाए चुपचाप खाना खा लिया।

मास्टरजी का घर दुमंजिला है। चंद्रिका का कमरा दूसरी मंजिल पर है। खाने के बाद वह अपने कमरे में जाकर बैठ गई। गोद में खुली रखी किताब पर ध्यान ही नहीं लगा। नीचे किसी की आहट पाकर चौंककर ध्यान से देखती।

बाहर नगरपालिका की बत्तियां बुझ गईं। दूर कहीं कुकुही ने बांग दी। आखिर वह दुपट्टा उतारकर लेट गई। अंधेरे में तकिये पर गाल सटाए वह रोती रही।

दासन के लिए उसकी आंखों से पहली बार आंसू बहे।

सत्रह

ब्रिगादिए वैंकय्या की तब्दीली हो जाने पर उनकी जगह पर ब्रिगादिए चेट्टियप्पा आए। पांडुचेरी से वह चावल लदे एक माल जहाज में मय्यषी आकर उतरे थे। नए ब्रिगादिए के स्वागत के लिए पुलिस वाले अंत्रु के नेतृत्त्व में कुछ पुलिस वाले और गुंडे बंदरगाह पर आ पहुंचे थे। उनमें अच्चू भी था।

ब्रिगादिए चेट्टियप्पा भारी-भरकम शरीर वाला था। खाकी पोशाक से बाहर निकली हुई तोंद। कोयले की तरह काला रंग। चमचमाने वाले दांत। अंत्रु और अच्चू की पहरेदारी में रोज शाम को चेट्टियप्पा टहलने निकलता। तोंद पर बांधी हुई जरीदार धोती। हलके पीले रंग वाली रेशमी कमीज। इसके अलावा गले में सोने की माला और उंगलियों में अंगूठियां। किस्से कहानियां वाले वेश्रवणन चेट्टियार की याद दिलाता था यह।

चेट्टियप्पा और साथी चलते-चलते रियूद सिमित्तियेर जा पहुंचे। वहीं बैंड बजाने वाले कणारी का घर है। अहाते के नारियल के पेड़ के सहारे खड़ी कणारी की पत्नी नाणी नए ब्रिगादिए को आदर की दृष्टि से देख रही है। पास में ही बेटी देवी भी खड़ी है। दोनों की चढ़ती जवानी है।

कणारी के घर के पास पहुंचते ही ब्रिगादिए की चाल धीमी पड़ गई। उसने पीछे चलने वाले अंत्रु की ओर देखा, "वह औरत कौन है रे ?"

"मदाम कणारी।"

अंत्रु ने आदर से कहा। कणारी कौन है, यह भी अच्चू ने स्पष्ट कर दिया।

चेट्टियप्पा ने मदाम कणारी को सिर से पैर तक जरा देखा। सेवकों के साथ चलते-चलते एक-दो बार चेट्टियप्पा ने पीछे मुड़कर देखा।

उस बस्ती के एकमात्र बैंड वालों के संघ में तुरही बजाने वाला व्यक्ति था, कणारी। वह गोरा या वर्णसंकर नहीं। ऊंचे पद पर काम करने वाला भी नहीं। फिर भी कोट-पतलून पहनकर टोप लगाता था। धोती पहने उसे किसी ने कभी नहीं देखा है। दुबला-पतला कणारी गोरों की पोशाक में एक बुत जैसा लगता था। मय्यषी में कभी कहीं मृत्यु या विवाह होते समय ही कणारी को काम मिलता था। रोज सवेरे अपनी तुरही कंधे पर लटकाकर कणारी बाहर निकलता। सीधा उण्णिनायर

के ताड़ी के ठेके पर जाता। आधी रात को ही लौटता। कुछ देर तुरही बजाने का अभ्यास करता। कुकुही के बोलने तक कणारी की तुरही का कानों को फाड़ने वाला स्वर मय्यषी के लोगों को सुनना पड़ता।

रियूद सिमित्तियेर में एक दुमंजिला मकान किराये पर लेकर चेट्टियप्पा उस दिन से उसमें रहना शुरू किया था। कणारी के तुरही के कठोर शब्द के कारण चेट्टियप्पा रात-भर पलक तक नहीं झपका सके।

क्रोधित चेट्टियप्पा ने सवेरे अंत्रु को हुक्म दिया, "उस बजाने वाले की तुरही लेकर तोड़-फोड़ दो।"

उस रात को कितने ही सालों के बाद मय्यषी के लोगों ने कणारी की तुरही की आवाज़ नहीं सुनी।

विषु का त्योहार बीत गया। बरसात का मौसम आ गया। हवा और धूल ही धूल। किसी का विवाह नहीं हुआ। कोई मरा भी नहीं। एक बूंद ताड़ी के लिए कणारी तरसने लगा। कोई-न-कोई वर्णसंकर या ईसाई परलोक सिधारे, तभी कणारी बच सकता है। मूसलाधार बरसात पर आंखें गड़ाए कणारी बरामदे में बैठा रहा। तुरंत मरने की संभावना वाले लोगों की गिनती कर रहा था वह। तुरंत मरने की गुंजाइश वाले एकमात्र व्यक्ति तोमा साहब हैं। मधुमेह के शिकार बने वे बहुत समय से चारपाई पर पड़े हैं।

"तोमा साहब मर जाएं तो बारह मोमबत्ती।"

गिरिजाघर के ऊपर के बरसात में भीगे क्रूस पर आंखें गड़ाए कणारी ने मनौती की।

मूसलधार वर्षा हुई। अपनी तुरही को छाती से चिपकाए कणारी बरामदे में पेट से घुटने लगाए लेटा रहा। नींद नहीं आई। आधी बोतल ताड़ी पिए बिना नींद आएगी नहीं। वैसे लेटते समय कणारी एक आकाशवाणी सुनता है – तोमा साहब पौ फटने से पहले मर जाएंगे। यों कल चार पैसे हाथ आएंगे।

आकाशवाणी सुनकर कणारी चौंककर उठा। उसने पैबंद लगे पीतल के बटन वाला कोट लेकर पहन लिया। टोपी लगा ली। तुरही लेकर कंधे पर लटका ली।

"नाणी, मैं जा रहा हूं।"

"किधर जा रहे हो, रात के इस तीसरे पहर में। ताड़ी का ठेका क्या अब रात के तीसरे पहर खुलता है ?"

चटाई पर लेटे-लेटे नाणी ने खिल्ली उड़ाई।

"तोमा साहब मर गया है री !"

"किसी के मरने से क्या–औरों को क्या फायदा ?"

तोमा साहब के मर जाने पर कणारी का काम बन जाएगा। लेकिन हाथ में आने वाला पूरा का पूरा पैसा ताड़ी के ठेके पर ही चला जाएगा। फायदा ठेके वाले

को होगा। नाणी चटाई पर करवट बदलकर लेट गई।

"किधर को कणारी ?"

गीली सड़क से हाथ में मिट्टी के तेल का पीपा और कंधे पर सीढ़ी लिए कुञ्चक्कन लंगड़ाता आ रहा है।

"अपने तोमा साहब चल बसे रे !"

"अच्छा रहा। पड़े-पड़े नरक यातना सह रहे थे बेचारे ? कम-से-कम अब तो पुनीत माता ने पास बुलाने की दया की।"

कुञ्चक्कन को तसल्ली हुई।

कणारी अधिक बातें किए बिना बैंड मास्टरजी पत्रोस के घर की ओर चल पड़ा। अंदर दीवार से सटा उसका बड़ा बैंड पड़ा था। उसके ऊपर दीवाल पर चौखट में पुनीत कन्या मरियम की प्रतिमा और कभी न बुझने वाली बत्ती थी।

"क्या है कणारी ? कोई नफे की बात है ?"

पत्रोस के घर में भी चूल्हा नहीं जल रहा है। कणारी को देखते ही उसकी आंखें चमक उठीं।

"अपने तोमा साहब मर गए।"

पत्रोस ने बत्ती के सामने खड़े होकर छाती पर क्रूस खींचा। उसने भी जल्दी-जल्दी कोट-पतलून पहन लिया। बैंड लेकर पीठ पर टांग लिया।

कणारी और पत्रोस दोनों मिलकर बैंड-संघ के अन्य लोगों को भी साथ लिए जल्दी-जल्दी तोमा साहब के घर पहुंचे। पानी तब भी बरस रहा था। पातार समुद्र-तट पर पानी भरा पड़ा था। उसमें अनगिनत शिरीष के लाल-लाल फूल सड़ रहे थे।

जल्दी-जल्दी आ धमकने वाले बैंड वालों को देखकर तोमा साहब का कुत्ता भूंकता हुआ झपटा। तोमा साहब का बेटा षोसेफ साहब बाहर आया।

"क्या ?"

अहाते में कतार में खड़े बैंड वालों को देखकर षोसेफ साहब भौंचक्के रह गए।

"तोमा साहब मरे नहीं क्या ?"

कणारी हकलाया।

षोसेफ साहब हाथ उठाए अहाते में कूद पड़े। खुला हुआ कुत्ता भौंकते हुए शोर मचाने लगा।

फिर वहां क्या हुआ, कणारी को यह याद नहीं।

खबर सुनकर उण्णिनायर ठहाका मारकर हंसा। उसे कणारी से सहानुभूति हुई। कोने में हाथ के बल बैठे कणारी को उस दिन मुफ्त में ताड़ी पिला दी।

शाम को वर्षा बंद थी। भीगी सड़क पर गरम-गरम धूप की किरणें पड़ रही थीं। तब कणारी के घर के सामने ब्रिगादिए चेट्टियप्पा प्रकट हुए। रेशमी कपड़े,

आठ उंगलियों में सोने की अंगूठियां और पैरों में चरमराने वाली चप्पलें।

"मदाम कणारी ! मदाम कणारी...! !"

चेट्टियप्पा ने लय भरे स्वर में पुकारा। नाणी बेटी के सिर से जुएं निकाल रही थी। कंघी के दांतों में फंसे छटपटाने वाले जुओं के बच्चे।

"मोस्से कणारी है क्या ?"

"ब्रिगादिए साहब ?"

नाणी आदर से उठ खड़ी हुई। देवी मां के पीछे छिप गई।

"देवी के पिता यहां नहीं हैं।"

सवेरे तोमा साहब के घर गए कणारी अभी तक लौटे नहीं। नाणी का मर्द होने पर भी आपस में कोई संपर्क नहीं, ऐसा कहा जा सकता है। आपस में वे बहुत कम बतियाते हैं। कणारी बरामदे में ही लेटता है। पड़ोस में जाकर नारियल के पत्ते बुनना, कपड़े धोना आदि काम करके नाणी और बेटी दिन गुजार रही हैं।

चेट्टियप्पा बरामदे पर चढ़ा। वह नाणी से बस्ती की बातें करता रहा। चेट्टियप्पा उस पर मोहित हो गया। जाते समय उसने देवी को पास बुलाकर अपना बड़ा चमड़े का बटुआ खोलकर एक रुपया निकालकर दे दिया।

"पढ़ रही है ?"

"नहीं।"

"पढ़ना चाहती है ?"

"हां।"

देवी पैसा लेकर मां के पीछे दुबक गई। एक रुपये का हरा नोट। उसे विश्वास नहीं हुआ।

दूसरे दिन चेट्टियप्पा ने कणारी को अपने घर बुलवाया। वह डर गया। तुरही बजाना रोकने वाले दिन से कणारी चेट्टियप्पा से डरता था। ब्रिगादिए के पास जाते समय थरथराते पैर एक-दूसरे से टकरा जाते थे।

"तुरही बजाना मना है, ऐसा मैंने तुझसे कहा था ना, उसमें मुझे बड़ा अफसोस है।"

दांतों में हंसी भरे हुए चेट्टियप्पा सीढ़ियां उतरकर आए।

"तुरही बजा।"

चेट्टियप्पा ने निषेधाज्ञा वापस ले ली। कणारी का डर भाग गया। चेट्टियप्पा ने एक बार फिर अपना बड़ा बटुआ खोला। उमंग भरा कणारी उण्णिनायर के ठेके पर जा पहुंचा। उस दिन रात को मय्यषी के लोगों ने फिर से कणारी की तुरही की आवाज सुनी।

एक दिन कुरम्बी अम्मा ने एक नजारा देखा। आगे-आगे रेशमी कुरता पहने चरमराती चप्पलें पहने, तोंद हिलाते हुए ब्रिगादिए चेट्टियप्पा। पीछे-पीछे पीली साड़ी

और चप्पलें पहने तथा बालों में फूल खोंसे नाणी।

"किधर जा रही हो नाणी ?"

"सिलिमा।"

नाणी ने गर्व से कहा।

उन दिनों ही नारंगपुर में सिनेमा आया था।

कुरम्बी अम्मा ने अभी तक सिनेमा नहीं देखा। मय्यषी के कितने लोगों को सिनेमा देखने का सौभाग्य मिला है।

"भाग्यशालिनी !"

कुरम्बी अम्मा ने हाथी-दांत की डिबिया खोलकर एक चुटकी भर सुंघनी लेकर सूंघ ली।

अठारह

दासन खिड़की के पास बाहर देखता खड़ा रहा। ढलती दोपहरी की सुखद धूप में मय्यषी डूबी पड़ी थी। गिरजाघर से शांत-गंभीर घंटानाद गूंज रहा था।

मय्यषी नदी के उस पार वाले घोंसलों की ओर चिड़ियां उड़ती जा रही थीं।

सो-सोकर आंखें सूज गई थी। पांडुचेरी से आए छह महीने बीत गए थे। उसके बाद मुख्य काम या तो सोना था या बीड़ी पीते हुए खिड़की के पास यों खड़े रहना। बहुत कुछ सोचते हुए इस तरह खड़े होने पर घंटे यों ही बीत जाते थे। बीड़ी पीते-पीते छाती दुःखने लगी।

"जो हो गया सो हो गया। दुःखी होने से क्या फायदा !"

एक दिन मां पास आकर खड़ी हो गई। वह बेटे का दुःख देख रही थी। दासन फ्रांस क्यों नहीं गया, इसका कारण कौसू अम्मा को अभी तक पता नहीं। लेकिन एक बात वह जानती थी, "दासन ने यह जो किया, उसके पीछे कोई-न-कोई कारण अवश्य होगा। उसका बेटा गलती नहीं करेगा। इस पर उसे भरोसा था। उसे तसल्ली थी।

"भैया, आप हजामत बनाकर नहाते-धोते क्यों नहीं ? पानी भर दूं ?"

मां के पीछे आई गिरिजा ने पूछा। दासन द्वारा हुए आघात से पहले वही जागी थी। फ्रांस जाकर भैया का बड़ा आदमी बनकर आना वह भी देखना चाहती थी; उसने भी हवाई किले बनाए थे। घर के मरघट बन जाने और माता-पिता के साथ खामोश हो जाने के लिए वह भी मजबूर हो गई। गिरिजा की आंखों ने आंसुओं की झड़ी लगा दी। लेकिन अचानक वह सब कुछ भूल बैठी। उसकी आंखों के आंसू सबसे पहले सूख गए।

"जा, जल्दी नहा-धोकर आ।"

मां ने भी कहा।

"बिना कुछ खाए-पिए घूम-फिरकर कोई बीमारी मोल मत ले लेना, बेटे !"

घूमने की इच्छा होती तो घूमता-फिरता। मनमाने समय पर वापस आता। यों घूमने-फिरने से क्या फायदा ?

यों चार-पांच दिन के बाद दाढ़ी बनाने बैठ गया। गिरिजा ने एक बाल्टी पानी

भर रखा था। मिट्टी की महक और काई की ठंडक वाला पानी। दासन के नहाकर आते समय गिरिजा की कनखियों में हंसी दीख पड़ी।

"भैया, आप बड़े जंच रहे हैं।"

बीड़ी की गंध फैलाने वाले मर्द का स्वप्न देखने वाली वह भैया की आराधना करती आ रही थी। दासन की घनी मूंछें, आंखों का दृढ़ भाव, शांतिपूर्ण बातचीत, ये सब उसे पसंद थे। भैया की पत्नी बनने वाली कितनी भाग्यशालिनी होगी !

तब उसे चंद्रिका की याद आई। गिरिजा उसका मन टोहने लगी थी।

"तुम मेरे भैया से प्यार करती हो ?"

एक दिन पूछना है।

गिरिजा भैया की धोती और कमीज पर इस्तरी कर देती। बीड़ी जलाने के लिए रसोई से आग लाकर दे देती। घर में ही बैठे रहते समय भैया से बीच-बीच में पूछती 'चाय लाऊं' – कौसू अम्मा भी बेटे का विशेष ख्याल रखती। धीरे-धीरे आंसुओं की नमी उस घर से गायब होने लगी।

फिर भी सबके दिलों की तह में वेदना दबी रही। उस वेदना का अंत कभी होगा क्या ? वह बाहर दिखाए बिना मुंशीजी का परिवार दिन बिताता रहा।

धीरे-धीरे दासन के घर में भी रौनक आ गई।

मुंशीजी ही दासन के द्वारा दिए गए आघात से मुक्त नहीं हो पाए। फिर कभी उन्हें हंसते नहीं देखा गया। कुछ दिन बाद जुकाम-बुखार से पीड़ित होकर चारपाई पर पड़ गए। रात-भर दमे से परेशान रहते। सांस लेने में दिक्कत होती। कुछ दिन तो वे झपकी तक नहीं मार सके।

बुखार उतरने से पहले ही मुंशीजी कचहरी जाने लगे। यह देखकर कौसू अम्मा ने डांटा, "बुखार में घूम-फिर रहे हो ? यह तो खूब रही।"

कलाई पर छाता टांगे और कांख में दस्तावेज के कागजात दबाए फाटक से निकलते समय मुंशीजी ने कहा, "मेरी तकदीर में तो आराम बदा ही नहीं।"

"आज और आराम कर लो। कल चले जाना।"

खिड़की के पास दासन खड़ा था। पिता की बात सुनकर उसका मन पीव से भरे फोड़े की तरह टीसने लगा।

दस्तावेजों का बस्ता ढोते झुककर चलने वाले पिता को वह वेदना-विह्वल हो खड़ा देखता रहा। और कर ही क्या सकता था ?

कभी-कभी मन बहक जाता है। तो भी उसने जो किया, वह गलत है, ऐसा दासन नहीं मानता। अच्छी तरह सोच-विचार करने के बाद ही वह निश्चय किया था। पिता का दुःख उसका भी दुःख है। दूसरों की वेदना में दासन हिस्सा ले रहा है। लेकिन दासन की वेदना ?

मय्यषी की वेदना दूर होने पर ही दासन की वेदना भी दूर होगी। उसकी बस्ती का सौभाग्य ही दासन का सौभाग्य है। मय्यषी की आजादी—वह कहां है ? दूर, मृतात्माओं के विहार करने वाली सफेद चट्टान की तरह दूर।...

कल के लिए चावल का एक दाना भी नहीं।...

दासन ने सब कुछ देखा और सुना। जमाना बदल रहा है। मुंशीजी के घर की दरिद्रता में कोई कमी नहीं।

बड़े फ्रांसीसी साहब की उदारता स्वीकार किए बिना भी वह अपने पिता की सहायता नहीं कर सकता है क्या ?

वैसे ओस्सिए नायन के बच्चों चंद्रन और लता को ट्यूशन पढ़ाना शुरू किया। जल्दी ही तीन बच्चे और मिल गए। स्कूल छूटने के बाद पांचों बच्चे आ जाते। साढ़े छह बजे तक पढ़ाता। उसके बाद जल्दी-जल्दी पप्पन के घर जाता। वहां रोज स्टडी क्लास चलता था।

पांचों बच्चे कुल मिलाकर बीस रुपये देते। पहले महीने में पैसा मिलते ही जाकर पिता को दे दिया—पांच, दो और एक रुपये के गंदे नोट।

"यह क्या है ?"

"ट्यूशन पढ़ाने का पैसा है।"

"अपनी मां को दे दो।"

मुंशीजी कहीं दूर निगाह गड़ाए बैठे रहे। उन्होंने पैसा नहीं लिया।

मां को देने पर पंद्रह रुपए ही उसने लिए। रसोई में गिरिजा से यों कहते सुना, "कुछ नहीं तो एक नौजवान है न ? एक चाय पीने या बीड़ी खरीदने के लिए चार पैसे का कोई और चारा है क्या ?"

"अपनी करनी पार उतरनी ?"

दादी का शांत स्वर।

जो भी हो, हाथ में बाकी बचे पांच रुपयों से एक महीने की बीड़ी का खर्चा चलाया। इसके अलावा कभी-कभी दादी के लिए सुंघनी भी लाया।

दूसरे दिन पैसा देकर लौटते समय चंद्रन ने कहा, "मैं कल नहीं आऊंगा।"

"परीक्षा सिर पर है। ट्यूशन में गैरहाजिर मत होओ।"

"अब हम कभी भी नहीं आएंगे।"

"क्यों ?"

"पिता ने मना कर दिया। कहा कि मास्टरजी कम्युनिस्ट हैं।"

उसने सुना तो हंसी आ गई। चंद्रन सीधा-सादा बच्चा है, नहीं तो कह देता, "मैं कम्युनिस्ट नहीं, मानव हूं।"

अगले दिन रास्ते में ओस्सिए को देखते ही वह राह बदलकर चलता बना।

पांच-छह दिनों के बाद दूसरे बच्चों ने भी आना बंद कर दिया।

"शनि की साढ़े साती है। कोई काम नहीं बनेगा। कहने से क्या...!"

ट्यूशन बंद हो जाने पर सबसे अधिक दुःख दादी को हुआ। अब तो एक ही काम बाकी रहा—सोना और बीड़ी पीते हुए खिड़की के पास यों ही खड़े रहना।

उन्नीस

माधवन ने अपनी घोड़ागाड़ी रेलवे स्टेशन की ओर हांकी। वह चल बसे गाड़ीवान केलन का बेटा है। गाड़ी में दासन और चंद्रिका बैठे थे।

"मुझे बड़ी खुशी होती है, दासन दादा।"

"किस बात पर ?"

"दासन दादा, आपके साथ यों अकेले घोड़ागाड़ी पर बैठकर सैर करने में।"

चंद्रिका का कहा सुनने पर डर लगता है। इसका अंत कहां होगा, कुछ पता नहीं।

"आप सोच क्या रहे हैं, दासन दादा ?"

"कुछ भी नहीं।"

"सफेद झूठ। मुझे बताने में हर्ज क्या है ?"

चंद्रिका ने अपने गालों पर गिरी हुई अलकें हाथों से कानों के पीछे खोंस दीं। मुस्कराते हुए यों ही वह दासन को देखती रही।

चंद्रिका का अकेले दासन के साथ रेलवे स्टेशन जाना लीला को पसंद नहीं था।

"तू सोचती है अभी भी तू बच्ची ही है।"

"दासन दादा के साथ ही तो जा रही हूं, किसी ऐरे गैरे के साथ तो नहीं ?"

दासन उसके लिए कोई गैर नहीं है। वे साथ-साथ बड़े हुए थे। एक ही घोड़ागाड़ी पर बैठकर कितने ही साल स्कूल गए थे।

"मेरे लिए तो कुछ नहीं। बस्ती वालों को कोई मसाला मिल जाना काफी है।"

"घोड़ागाड़ी में केवल मैं और दासन दादा ही तो नहीं हैं। माधवन भी है न ?"

उसने बाल संवारे और आंखों में काजल लगाया। रोज की तरह माथे पर एक बड़ी बिंदी भी लगाई। मां की सहमति के बिना ही वह जा रही है।

"तेरी मनमानी-घरजानी कुछ बढ़ती जा रही है", दासन के साथ चंद्रिका के रवाना होते समय लीला ने हंसते हुए कहा।

घोड़ागाड़ी आगे बढ़ी।

उण्णिनायर के ताड़ी के ठेके के सामने पड़ी हुई बेंच पर बैठे-बैठे कुञ्चक्कन, कणारी, अन्तोणी आदि मय्यषी के लोग पी रहे थे। घोड़ागाड़ी ठेका पार करती हुई रियूद लागार से होकर भागती रही। दोनों तरफ पानी-भरे खेत। पानी पर धूप की किरणों में भागने वाली घोड़ागाड़ी की परछाईं दीख पड़ती थी।

रेलगाड़ी 'ब्लाक' हो गई। हरी-हरी छायाओं से उत्पन्न होकर बहकर आने वाली रेल की पटरियां, प्लेटफार्म के आगे-आगे आकर छिन्न-भिन्न होकर कई रास्तों में बंट जाती हैं।

वे गाड़ी का इंतजार करते खड़े रहे।

उस दिन गाड़ी से उतरने के लिए भरतन ही था।

"दोनों आए हो।" दासन और चंद्रिका की ओर बारी-बारी से देखते हुए भरतन हंसा, "मां नहीं आई।"

"नहीं", दासन ने उत्तर दिया।

दोनों के कंधों पर हाथ रखे हुए भरतन बाहर निकले।

इस बार अधिक संदूक वगैरह नहीं हैं। पिछले साल गांव आया था। इस बार कुञ्ञनन्तन मास्टरजी को बेल्लूर ले जाने के लिए ही आया है। मास्टरजी की देखरेख करने के लिए और कोई है ही नहीं। अषियूर के कुञ्ञूट्टी मामा बूढ़े हो गए। वेल्लूर ले जाने की व्यावहारिकता भी मामा में नहीं है। कणारन, वासूट्टी वगैरह सबके सब राजनीतिक कार्यकलापों में डूबे पड़े हैं।

फिर भी एक बार कणारन ने कहा, "तुमको मैं वेल्लूर ले जाऊंगा। दासन भी साथ चलें।"

"वेल्लूर ? क्यों ?"

आपरेशन की बात मास्टरजी को सुनना तक पसंद नहीं है।

मास्टरजी का इलाज करने वाले डाक्टर सीत्ती ने ही पहले-पहल आपरेशन की बात चलाई थी।

"उसका इलाज करते-करते मेरी नाक में दम आ गया।"

उसने दासन से कहा, "कितना अरसा हो गया है इसे शुरू किए ?"

दस-पंद्रह साल हो गए हैं इलाज शुरू किए। आपरेशन के अलावा और कोई चारा नहीं है, यह भी उसने बताया। वेल्लूर ले जाने पर शायद मास्टरजी बच जाएंगे। हाथ से निकली जिंदगी फिर मिल जाएगी। शायद कभी...

माधवन ने घोड़ागाड़ी का दरवाजा खोल दिया। भरतन के बाद चंद्रिका और दासन भी चढ़कर बैठ गए। चंद्रिका पिता के पास नहीं बैठी। भरतन के सामने दासन के पास बैठ गई।

"तुम्हारा काम कैसा चल रहा है, दासन ?"

दासन का उच्चतम श्रेणी में बक्कलोरया पास होना, बड़े फ्रांसीसी साहब की

उदारता को अस्वीकार करना आदि सब भरतन को पता था।

"स्टडी क्लास, रहस्य योग वगैरह चलाकर दिन बिता रहा हूं।"

"इतना ही है ?"

भरतन ने सिगरेट का डिब्बा खोलकर आगे बढ़ाया।

"बहुत सारी योजनाएं हैं। मास्टरजी की बीमारी ही परेशानी की बात है। आपके अगली बार आने तक यहां बहुत कुछ घट चुका होगा।"

"आग से खेलना है, खबरदार रहना। मुझे तुमसे इतना ही कहना है, दासन !"

दासन को यह पता है। अग्नि-परीक्षा के दिन हैं आगे। बहुत कुछ खोना पड़ेगा। बहुत कुछ भुगतना भी पड़ेगा।

"मैं सब कुछ सहने के लिए तैयार हूं।"

"तुम्हारा भला हो, बेटे !"

घोड़ागाड़ी घर के सामने आकर रुक गई।

बाहर घोड़ागाड़ी का आकर रुकना और भरतन का बोलना मास्टरजी ने सुना। वे चारपाई से चिपके पड़े हैं। पढ़ाने का काम कभी का खतम हो चुका है। बाहर निकले काफी समय बीत गया। दाढ़ी बनाना और नहाना न जाने कब से रुक गया है। पीले पड़े चेहरे पर बढ़ी हुई दाढ़ी।

"कुञ्ञनन्तन !..."

भरतन की आवाज सुनने पर मास्टरजी बेचैन हो उठे। वह हड़बड़ाकर क्यों आया है, यह मास्टरजी जानते हैं। उसका आपरेशन कराने के लिए, उसे मार डालने के लिए।

"अब तबीयत कैसी है ?"

भरतन मास्टरजी की चारपाई के पास आकर खड़ा हो गया। पूछने के बाद ऐसा लगा कि पूछना नहीं था। क्या मतलब है उसके सवाल का ? कुञ्ञनन्तन का कंकाल शरीर देखकर वह बहुत दुःखी हुआ। मास्टरजी से सबसे अधिक सहानुभूति रखने वालों में से एक है वह। बीमारी से मुक्त होकर उसे एक चंगे आदमी के रूप में देखने की प्रबल इच्छा है भरतन की।

"डाक्टर आज आएगा ?"

"उसको आए एक हफ्ता हो गया।"

मास्टरजी ने चेहरे पर हंसी लाकर अपनी दीनता छिपाने की कोशिश की। दासन के जाकर बुलाने पर डाक्टर सीत्ती नहीं आए। उसके आने से कोई फायदा नहीं, ऐसा उसने कहला भेजा।

"डाक्टर के लिए भी फिजूल का आदमी बन गया मैं, भरतन दादा !"

मास्टरजी की आवाज रुंधी हुई थी—अदम्य जिजीविषा रखते हुए अपने अस्तित्व में आनंदित होने वाले उस व्यक्ति की यही तकदीर थी...।

शाम को भरतन डाक्टर को लिवा लाया। आपरेशन के अलावा और कोई चारा नहीं, यह उसने दुहराया। भरतन, डाक्टर और दासन बहुत देर तक बातें करते रहे। आपरेशन न करने पर वह दो हफ्ते या एक महीना जी पाएगा। क्या पता, आज ही मास्टरजी आंखें मूंद लें। इतनी खतरनाक है हालत।

"कल ही वेल्लूर ले जाना है। मैं भी साथ चलूंगा। उसके लिए तैयार न हो तो मुझसे अब आकर मिलने की जरूरत नहीं।"

डाक्टर को जो कहना था, कह दिया।

"मास्टरजी सहमत नहीं होंगे—"

और लोगों से ज्यादा दासन मास्टरजी को जानता था। मास्टरजी का विश्वास है कि वे आपरेशन झेल नहीं पाएंगे। इसीलिए वे वेल्लूर जाने से इंकार कर देते हैं।

डॉक्टर के चले जाने के बाद भरतन और दासन दोनों मास्टरजी के कमरे में फिर से गए।

"कुञ्जनन्तन, तुमने हमारी बातचीत तो सुनी ही होगी।"

मास्टरजी ने आंखों से हामी भरी। उनका चेहरा कागज जैसा पीला पड़ गया था। आंखों में मौत का डर।

"कल सवेरे हम लोग वेल्लूर चलें। मैं कार का इंतजाम कर लेता हूं। डाक्टर भी हमारे साथ आएंगे।"

जवाब दिए बिना मास्टरजी आंखें मींचे पड़े रहे।

"कुञ्जनन्तन, तुम कुछ बोलते क्यों नहीं ?"

"मुझे आपरेशन नहीं करवाना है।"

"खूब सोच-विचारकर देखो, मेरे प्यारे कुञ्जनन्तन।"

"मैं सोच-विचारकर ही कह रहा हूं।"

"तुम कब तक यों पड़े रहोगे ?"

"मरने तक।"

"कुञ्जनन्तन, तुम गलत मत समझो। तुम्हारा भला चाहने वाला हूं मैं। तुम्हारी बीमारी दूर हो जाने के लिए मैं कुछ भी करने के लिए तैयार हूं। उसी के लिए मैं समुंदर पार करके आया हूं।..."

"मुझे पता है भरतन दादा !"

"ऑपरेशन के अलावा और कोई चारा नहीं है बीमारी से छुटकारा पाने का।"

"सो भी मुझे पता है।"

"तुम्हें इसके लिए राज़ी होना है। तुम्हारा बाल बांका नहीं होगा। मेरे मन के अंदर से कोई कह रहा है।..."

मास्टरजी ने जवाब नहीं दिया। जो कहना था, वह कितनी ही बार कह चुका

है। कुछ भी बोले बिना भरतन कमरे में दो बार इधर से उधर टहले।

"मैं अधिक मजबूर नहीं करता। यदि तुम आपरेशन के लिए तैयार नहीं होते तो मैं अगले हफ्ते ही जहाज पर चढ़ जाऊंगा।"

अब कुञ्जनन्तन को ज्यादा मजबूर नहीं करना है, ऐसा उसे लगा। मास्टरजी कोई बच्चे नहीं हैं। जिंदगी को जानने-बूझने वाले हैं। पढ़े-लिखे और समझदार हैं।

भरतन फिर वहां रुका नहीं। बरामदे में जाकर शिथिल बैठा रहा।

कमरे में मास्टरजी और दासन ही रह गए।

"तू भी मुझे मजबूर कर रहा है, दासन ?"

"कभी नहीं, मास्साब ! आपकी चिंता मैं समझ रहा हूं।"

"दासन, मैं वेल्लूर जाऊं तो वापस नहीं आ पाऊंगा। आपरेशन न किया जाए तो मैं और भी जी सकता हूं। महीने दो महीने मैं जी सकता हूं। शायद साल-भर जी सकूं। चाहे एक ही दिन क्यों न हो, अधिक जी पाऊं तो उससे बढ़कर और कोई संतोष की बात मेरे लिए नहीं है दासन..."

मास्टरजी हांफने लगे। उनका दम घुटने लगा। आंखें चढ़ गईं।

"मास्साब, अब आप कुछ बोलिए नहीं।"

चारपाई पर बैठकर दासन ने उनकी छाती सहलाई। चंद्रिका भीगी आंखों से मामा को देखती खड़ी रही। दासन और चंद्रिका मास्टरजी के पैताने कुछ बोले बिना बैठे रहे।

भरतन अगले हफ्ते वापस चला गया।

बरसात का एक दिन। दासन लेटा-लेटा पढ़ रहा था। बाहर में चंद्रिका का शब्द सुनाई पड़ा।

"दासन दादा यहां नहीं हैं क्या ?"

दासन उठकर गया। पानी में भीगी चंद्रिका बरामदे में खड़ी थी। पानी पड़ने से माथे की काली बिंदी सारे माथे पर फैली पड़ी थी। बालों से पानी टपक रहा था।

"मामा बुला रहे हैं।"

"किसलिए ?"

"मामा की तबीयत खराब है—कुछ ज्यादा।"

चंद्रिका की आंखों में आंसू हैं या बारिश का पानी। दासन घबड़ा गया। आज सवेरे भी मास्टरजी से मिला था। अब दुबारा बुलवा क्यों रहे हैं ?

छाता लेकर जल्दी-जल्दी बाहर निकला। मास्टरजी के घर दौड़े-दौड़े कैसे पहुंचा, कुछ पता नहीं...

मास्टरजी पहले जैसे आंखें बंद किए लेटे थे। वे परेशान थे। दासन को

मास्टरजी अधमरे से लगे।

"मास्साब !"

चारपाई के पास घुटनों के बल खड़े-खड़े दासन ने धीरे से बुलाया। लीला वहां खड़ी रो रही थी।

मास्टरजी का सिर जरा-सा हिला। उन्होंने धीरे-से आंखें खोलीं। वे बहुत कुछ कहना चाहते हैं, ऐसा लगा। दासन ने कान दिए।

शाम हो गई। अंधेरा बाहर घना होता जा रहा है। तब मूसलधार पानी बरस रहा था। बरसात के घनघोर शब्द के कारण गिरजाघर की घंटिया किसी ने भी नहीं सुनीं।

"अपने आंदोलन के लिए और भी बहुत कुछ करने की इच्छा है मेरी। पर मुझसे अब कुछ होता नहीं। किंतु आंदोलन के संबंध में मुझे कोई आशंका नहीं। तुम तो हो ही।"

मास्टरजी ने रुक-रुककर कहा।

"सर्तिफिका पास होते ही तुम्हें इस आंदोलन में लाने की सोची थी। तुम्हारे पिता के बारे में सोचकर ही उस इच्छा को मैंने दबा लिया था। जब तुम स्वयं ही इस आंदोलन में आगे आए तो मुझे बड़ी खुशी हुई। मेरे द्वारा किए गए आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए तुम हो न, यह सोचकर मैं अब भी प्रसन्न होता हूं।"

"मास्साब, आप ज्यादा बोलिए नहीं।"

मास्टरजी की छाती में समुद्र की तरह ज्वार-भाटा उठ रहा था। सांस लेने में उन्हें परेशानी हुई।

"एक दिन भी मैं हाथ हिलाते घूम-फिर नहीं पाया हूं। जिंदगी का बहुत बड़ा हिस्सा मैंने इस चारपाई पर ही बिताया है। चालीस साल की उम्र हो जाने पर भी मैंने अभी तक अपने हाथ से किसी औरत को छुआ तक नहीं। फिर भी मैं संतृप्त हूं। तुम सुन रहे हो, दासन ?"

"हां, सुन रहा हूं मास्साब !"

"तुम्हें मैंने किसलिए बुलाया है, यह मुझे ही पता नहीं। मुझे तुमसे एक ही बात बतानी है—इस हालत में भी मैं संतुष्ट हूं। मौत ही मेरे इस संतोष को मिटा सकती है।..."

"इस संसार में दुःख और संतोष है क्या, मास्साब ? जिंदगी ही है।"

"हां, जिंदगी..."

मास्टरजी की आंखें धीरे-धीरे मुंद गईं। वे ऊंघने लगे।

दिन कटते जा रहे हैं। अपने बिस्तर पर पड़े-पड़े खिड़की के बाहर ग्रीष्म और बसंत को गुजरते मास्टरजी ने देखा। पहली बार पानी की बूंदें जब गरम मिट्टी पर पड़ीं तो अपने शरीर पर पानी बरसने जैसे वे पुलकित हो उठे। लगातार होने वाली

बरसा के संगीत में उन्होंने नये ताल और स्वरों की अनुभूति की। पानी बरसने के बाद चमकने वाले सूरज की गर्मी में भीगे पेड़-पौधों और मिट्टी के साथ मास्टरजी भी पुलकित हो गए। सूरज की किरणों के पड़े बिना ही वे सूर्य के चैतन्य में डूब गए। वैसे ऋतुएं बीतती जा रही हैं।

मय्यषी नदी के ऊपर सूर्य के उदित होने वाले एक प्रभात में उनके अपने अस्तित्व का बोध सान्द्र हो गया। वे जी रहे हैं, इस विचार से वे पुलकित हो उठे। अस्तित्व का आनंद तरंगों की तरह उनके ऊपर लहरें मारने लगा। मास्टरजी का दम घुटने लगा और मुंह से झाग गिरने लगी।...

मरने के बाद भी मास्टरजी की आंखें बंद नहीं हुईं। मृत्यु से शाश्वत प्रतिषेध के रूप में आंखें खुली ही पड़ी रहीं।

बीस

आषाढ़ बीत गया। सावन आ गया। सावन की अमावस्या के दिन मुंशीजी पितरों को बलि नहीं दे सके। वे बीमार पड़े थे। मुंशीजी हर समय बीमार रहते हैं। स्थायी दमा रोग के अलावा और भी कोई-न-कोई बीमारी बनी ही रहती है—या तो पीठ में दर्द नहीं तो जुकाम, वैसे ही कुछ न कुछ।

"बलि मैं दे पाऊंगा, ऐसा मुझे नहीं लगता। पितर लोग मुझे माफ करें।" अमावस्या के दो दिन पहले मुंशीजी ने कहा।

"तू नहीं दे सके तो दासन बलि दे देगा।" कुरम्बी अम्मा ने राय दी।

और कोई पुरुष तो उस घर में है नहीं। दासन ने अभी तक बलि नहीं दी है।

सबके कहने पर वह सहमत हो गया।

अमावस्या के एक दिन पहले ही रसोई में भीड़-भाड़ हो गई। पितरों के लिए तरह-तरह के व्यंजन पकाए गए।

तड़के उठकर गिरिजा ने स्नान किया। गीले बालों के साथ पत्ते के टुकड़ों में खीर और गंगासागर में पानी लिए वह दक्खिनी कमरे में पहुंची। वही है पितरों का कमरा। केलुअच्चन को इसी कमरे में प्रतिष्ठित किया गया है। गोबर से लिपे फर्श के नीचे केलुअच्चन का अस्थि-संचय मिट्टी के घड़े में गड़ा हुआ है।

"बाबा का मन में ध्यान कर लो, बिटिया !"

कुरम्बी अम्मा दक्खिनी कमरे के पास जाकर खड़ी हो गई। खीर और पानी जमीन पर रखते समय गिरिजा ने बाबा का मन में ध्यान किया—उसकी यादगारी से पहले ही केलुअच्चन विषदंश से मरे।

कमरे से बाहर निकली गिरिजा ने किबाड़ बंद कर दिए।

फिर वह एक दूसरे पत्ते में खीर और जलती हुई मशाल लेकर दक्खिनी अहाते में गई। बीरन, पेना, भण्डारम आदि के लिए नैवेद्य बाहर ही रखा करते हैं। मशाल भी जरूरी है। वे सब अकालमृत्यु के शिकार बने लोग हैं। पानी में डूबकर मरे लोगों को बीरन, खुदकुशी से मरने वालों को पेना और चेचक से मरने वालों को भण्डारम

कहकर पुकारते हैं।

कुरम्बी अम्मा और दासन स्नान करके गीले कपड़े पहने बलि देने के लिए आए। अहाते में उन्होंने चूल्हा बनाया और हल्दी पड़ा भात पकाया। भात पत्ते पर परोसा। दूब और तिल बिखेरा। पत्ते के पास घुटनों के बल खड़े होकर उन लोगों ने ताली बजाकर कौओं को बुलाया।

बलि अर्पित करने वाले दिन सफेद चट्टान से पितरों की आत्माएं समुद्र पार करके आती हैं। बलि के कौओं के रूप में आकर वे हल्दी पड़ा भात और तिल खाती हैं।

"एक भी कौआ दिखाई नहीं पड़ रहा है, दादी !" बरामदे में खड़ी-खड़ी बलि देखने वाली गिरिजा ने कहा। रोज सवेरे अहाते और कुएं पर बैठकर शोर मचाने वाले कौए सबके सब आज कहां चले गए।

घुटनों के बल खड़ी कुरम्बी अम्मा ने बार-बार ताली बजाकर बुलाया।

"कौआ आएगा।" दासन ने कहा, "कौओं के लिए आज व्यस्तता का दिन है न ?"

प्रायः सभी हिंदुओं के घरों में बलि दी जा रही होगी। टीले पर से एक कौए को उड़कर आते देखा। लेकिन रास्ते में किसी और की ताली की आवाज सुनकर उस ओर चला गया।

"आठ बज गए, हे राम !"

कुरम्बी अम्मा परेशान हो गईं। कहां हैं पितर लोग ? वे आते क्यों नहीं ?" अपने दुबले-पतले हाथों से ताली बजा-बजाकर उन्होंने बुलाया।

बलि देना छोड़कर दासन सीढ़ी पर जा बैठा। भीगी धोती पहनने से ठंड लगने लगी।

"आ जा, आ जा।..."

आसमान की ओर देखते हुए शिथिल हाथों से लगातार ताली बजाते हुए कुरम्बी अम्मा बुलाती रहीं।

"आ जा, आ जा, आजा रे।..."

कुरम्बी अम्मा का मन दहलने लगा। उन्हें रुलाई आ गई। बार-बार उन्होंने तालियां बजाकर बुलाया। कुरम्बी अम्मा का स्वर उच्च से उच्चतर हो गया।

धूप चढ़ आने पर न जाने कहां से एक कौआ उड़ता हुआ आ गया। हल्दी पड़ा भात और तिल खाकर मदोन्मत्त आंखों से उसने कुरम्बी अम्मा की ओर जरा देखा। दुबली-पतली गर्दन में जहां-तहां झड़े रोओं वाला एक बेचारा कौआ !

"आ जा, आ जा..."

आनंदित हो कुरम्बी अम्मा ने बुलाया। कौए ने गर्दन जरा टेढ़ी करके देखा। एक पंख उठाकर चोंच से उसके अंदर खुजलाया। अंत में वह कुरम्बी अम्मा के

सामने पड़े पत्ते के पास आकर बैठ गया।

"आ तो गए। कम-से-कम अब आने की सूझी तो।"

कुरम्बी अम्मा ने अपने सामने बैठे कौए को गौर से देखा। उसने पत्ते के एक किनारे से एक कौर भात खा लिया। फिर पैरों से भात और दूब चारों ओर बिखेर दिए। फिर कुछ दाने चुग लिए।

बिना पलक झपकाए कौए को देखती खड़ी कुरम्बी अम्मा की आंखें भर आईं।

"क्या हुआ दादी ?"

कुरम्बी अम्मा फूट-फूटकर रो पड़ीं।

"तेरे बाबा हैं ये, बिटिया !"

गर्दन के झड़े रोमों वाला वह दुबला-पतला कौआ क्या सचमुच केलुअच्चन था ?

मीतल मंदिर के तिरा उत्सव की तरह ही एक बड़ा उत्सव है पुनीत कन्या मरियम के गिरिजाघर का प्रतिष्ठा-पर्व। आश्विन के महीने में पड़ता है यह पर्व। भादो के शुरू होते हुए गिरिजाघर के ऊंचे फाटक के ऊपर रस्सी पर लटकाई गई काठ की पेटी पर खड़े होकर कुञ्जिकुट्टि अच्चन को चूना पोतते देखा जाता।

गिरिजाघर पर चूना पोतना शुरू होते ही प्रतिष्ठा-पर्व की तैयारियां शुरू हो जाती हैं।

आम के नीचे पड़ी कुर्सी पर चोगा पहने हुए पादरी गोद में टोपी रखकर बैठ गए। पास में पादरी का सेवक हाथ में कागज पकड़े खड़ा है। वे गिरिजाघर के आसपास हाट और दुकानों के लिए जगह नीलामी करके दे रहे थे।

लोहे के खंभे के पास एक दुकान—दस फीट लंबी और आठ फीट चौड़ी। सेवक ने कागज देखकर बोलना शुरू किया। उत्तर से आए चूड़ी बेचने वाले चेट्टी लोग, कोषिक्कोड से आए हलुआ बेचने वाले, जादू दिखाने वाले, जुआ खेलने वाले, चित्रपट दिखाने वाले—इन सबकी ओर देखते हुए सेवक बोला :

"दस रुपये।"

"सवा दस।"

चूड़ी बेचने वाले चेट्टी ने कहा।

"साढ़े दस।"

जादू दिखाने वाला—

"चवन्नी और।"

चित्रपट दिखाने वाला...वैसे होते-होते चौदह रुपये तक पहुंच गया। वहां तक पहुंचाने वाला सबसे पहले नीलामी बोली बोलने वाला चूड़ी वाला चेट्टी था।

"चौदह रुपया—एक। चौदह रुपये—दो। और कोई नहीं ?

चूड़ी बेचने वाले चेट्टी ने उत्कण्ठा से चारों ओर देखा। जादू दिखाने वाले और

चित्रपट दिखाने वाले के चेहरों पर खामोशी। पादरी अपनी कुर्सी पर जरा उचककर बैठे।

लोहे के खंभे के पास वाली जगह चूड़ी वाले चेट्टी के नाम।

पंद्रह अक्तूबर की दोपहरी को एक पटाखा दगने के साथ पर्व शुरू हो गया। दूसरे दिन दो और तीसरे दिन तीन पटाखे दागे जाते हैं। अंतिम यानी दसवें दिन दस पटाखे दागे जाते हैं।

चूड़ियों की दुकानें, चमेली के फूलों की दुकानें, क्रूस का रूप और अन्य पुनीत पुरुषों के चित्र बेचने वाली वर्णसंकरों की दुकानें, मोमबत्ती बेचने वालों की दुकानें...

मय्यषी की ओर तीर्थयात्रियों की भीड़ उमड़ पड़ी। रेलवे स्टेशन से पुल तक उनकी भीड़ ही भीड़। दक्खिन से आने वाले ईसाई लोग, वर्णसंकर, कोंकिणी... कितने-कितने तरह के लोग, कितने सारे लोग।

"ये सारे के सारे लोग भक्ति से प्रेरित होकर आ रहे हैं, ऐसा तुम सोचते हो क्या ?"

पप्पन लोगों की भीड़-भाड़ देखता हुआ विज्ञान-पोषिणी वाचनालय में बैठा था। गिरिजाघर के ठीक सामने है वाचनालय। वहां बैठने पर पुनीत कन्या मरियम का प्रतिष्ठा-पर्व आदि से अंत तक देखा जा सकता है।

"ये सब के सब भक्ति के नाम पर ताड़ी पीने के लिए ही आते हैं—मय्यषी की शराब।"

देवी-देवताओं के दुश्मन पप्पन ने आगे कहा, "यहां शराब मिलनी बंद हो जाए—इनमें से कोई भक्त दिखाई ही नहीं पड़ेगा।"

"ये लाखों लोग केवल शराब पीने के लिए ही आते हैं, ऐसा तुम कहते हो क्या ?" दासन हंसा, "शराब से भी अधिक उन्मत्तता और विस्मृति देने वाली है भक्ति।"

वाचनालय लोगों से खचाखच भरा था। सामने का नजारा देखने के लिए रोज न आने वाले भी पर्व के दिनों में आ बैठते हैं।

मय्यषी की पुनीत माता के नाम से विख्यात पुनीत कन्या मरियम, कोरियों के देवता गुलिकन, पूक्कुट्टि चात्तन आदि की तरह, भक्तों से स्नेह करने वाली है। शत्रुओं का संहार करने वाली भी है।

दासन के बचपन में कुरम्बी अम्मा द्वारा उसे बताई गई अनेक किस्से-कहानियों में से एक मय्यषी की पुनीत माता की उत्पत्ति की कहानी थी :

"अरब सागर के अनंत विस्तार में सफेद चट्टान की छाया से होकर एक जहाज जा रहा था।

मय्यषी के सामने पहुंचने पर लंगर पड़ने जैसे जहाज सहसा रुक गया। कहीं

पर भी कोई रुकावट नहीं दीख पड़ी। जहाज के कप्तान और दूसरे नाविक भौंचक्के रह गए। तीन दिन और तीन रातें बीत गईं। जहाज हिला तक नहीं।

नाविकों ने आसमान पर आंखें गड़ाकर घुटने टेककर प्रार्थना की।

"मुझे मय्यषी में बसा दो।"

कप्तान ने एक आकाशवाणी सुनी।

जहाज में पुनीत कन्या मरियम की एक प्रतिमा थी। प्रतिमा से उठा था यह स्वर।

कप्तान ने पुनीत आज्ञा का पालन किया। वह प्रतिमा लेकर तट पर आया। एक निर्जन स्थान पर प्रतिमा स्थापित की।

जहाज हिला।

कप्तान ने जहां पर प्रतिमा स्थापित की थी, वहीं पर है हमारा आज का गिरजाघर... ।"

कुरम्बी अम्मा ने हाथी-दांत वाली डिबिया से चुटकी भर सुंघनी लेकर सूंघ ली।

सायंकाल। शांत-गंभीर समुद्र के ऊपर डूबता हुआ सूरज। श्वेत आकाश के नीचे गिरजाघर के फाटक के ऊपर वाला क्रूस हाथ पसारे खड़ा है।

आकाश और समुद्र की गंभीरता से आप्लावित घंटानाद मय्यषी के ऊपर छा गया।

"उरुकन* निकल पड़ा... ।"

कुरम्बी अम्मा आप ही आप बोल उठीं। खुली डिबिया और अनेक बीते पर्वों की स्मृतियों के साथ आंखें बंद किए कुरम्बी अम्मा बैठक में बैठीं रहीं।

जुलूस के शुरू होते समय होने वाला घंटानाद नगर-प्रदक्षिणा के बाद लौट जाने तक निरंतर होता रहता है।

वहां कहीं दूर ऊंचाई पर भीमाकार घंटे झूलते रहे। रस्सी के छोर पर पादरी का सेवक लटकता रहा। घंटों के प्रचंड हिलोर के अनुसार वह धरती और आकाश के बीच उठता-गिरता रहा।

रथों, पताकाओं, बत्तियों के साथ जुलूस रियूद लग्लीस से होता हुआ आगे बढ़ा। जलने वाली दशांग की सुगंध सारी मय्यषी में भर गई। हजारों तीर्थयात्री जुलूस के साथ बढ़ते रहे। उनके कंठों ने अनेक भाषाओं में मय्यषी की पुनीत माता के यशोगीत गाए... ।

शाम बीत जाने पर भी समुद्र के ऊपर सूर्य अस्त हुए बिना खड़ा रहा।

रियूद ला प्रिसोम से होकर जुलूस आगे बढ़ता गया।

---

* मय्यषी माता की दिव्य प्रतिमा के स्तवन के साथ निकाला गया जुलूस।

चार घंटों के बाद जुलूस गिरिजाघर में वापस आया। तब अभी तक निरंतर निनादित होने वाला घंटानाद रुक गया। प्रज्ञाहीन हो पादरी का सेवक रस्सी से धरती पर गिर पड़ा। घंटों तक लगातार घंटा बजाते रहने के कारण उसके दोनों हाथों से खून बह रहा था...।

दो दिन से मय्यषी के लोगों की नींद हवा हो गई थी। घरवालियां मेहमानों को दावत देते-देते थक गईं। नशे में चूर होकर मर्द लोग गिरिजाघर के चारों ओर चक्कर लगाते रहे। सड़क के किनारे दुकानों के सामने वाले बरामदों में पसरे पड़े अनजान प्रदेशों से आए अनगिनत भक्त लोग...

सिर्फ एक घर में कोई रोशनी या हलचल नहीं थी—लेस्ली साहब के बंगले पर। होश संभालने के दिन से निरंतर प्रतिष्ठा-पर्व के दिन मिस्सी 'केक' बनाया करती थीं। वह रिवाज रुक गया। यदि केक बनाएं तो खाने वाला कौन है ? कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए मर्द लोग घोड़ेगाड़ियों से उतरकर सारी की सारी रात खाया-पिया करते थे, ऐसा भी एक जमाना था। आज वे किससे मिलने के लिए आएं ?

दावत देने और अतिथि-सत्कार करने वाला व्यक्ति दाढ़ी-मूंछ और बाल बढ़ाए बंद कमरे के अंदर वर्षों से तपस्या कर रहा है।

गिरिजाघर में जब पहला पटाखा दगा था, उसी दिन मिस्सी के दाहिने हाथ और पैर पर लगवा मार गया था। 'केक' बनाते समय मिस्सी लुढ़क गईं। सिर के बल गिरी थीं।

यह देखकर नौकरानी माम्बी चीख पड़ी, "दौड़कर आओ।"

माम्बी की पुकार ऊपर के बंद दरवाजों को पार करके गस्तोन साहब के कानों में जा पहुंची। वे आधी रात के समय दुःखगान अलापने वाले गिटार को अपनी छाती से लगाए ऊंघ रहे थे। नीचे से आने वाली पुकार सुनकर कान खड़े किए।

हड़बड़ाकर दरवाजा थोड़ा-सा खोलकर उन्होंने नीचे की ओर देखा।

फर्श पर पेट के बल गिरी पड़ी मां। गस्तोन साहब का मन उफन उठा। दरवाजा खोलकर वे सीढ़ियां उतरने को हुए। इतने में माम्बी की पुकार सुनकर बहुत सारे लोग भागकर आ पहुंचे। आगे बढ़ाया पैर उन्होंने पीछे कर लिया।

ये सीढ़ियां उतरे बीस-पच्चीस साल हो गए। मय्यषी में पैदा हुए और पाले-पोसे गए गस्तोन साहब के लिए मय्यषी के सारे के सारे लोग अपरिचित हैं। कभी-कभी मोटे परदे के बीच से वे बाहर की ओर जरा देखते। रियूद रसिदाम्स से होकर गुजरने वाले और 'पातार' समुद्र-तट पर हवा खाने वाले मय्यषी के लोगों को वे कभी-कभी देखा करते। लेकिन किसी को पहचान नहीं पाते।

गस्तोन साहब में केवल एक ही विकार है—वेदना। नष्ट हुई अपनी मर्दानगी

की वेदना। एक हफ्ता भी एक साथ बिता न पाने वाली तेरेसा से संबंधित वेदना। आधी रात को गिटार के तारों से वह वेदना नादधारा के रूप में मय्यषी के ऊपर छा जाती है। सोने वालों की प्रज्ञा में दुःख-स्वप्नों को रूप देने वाली नादधारा बनकर उनका शिकार करती है।

माम्बी की पुकार सुनकर आए पत्रोस और पुलिस वाले चात्तू ने मिस्सी को उठाकर चारपाई पर लिटाया। उन्हें होश नहीं था। सिर से खून बह रहा था।

कोई डॉक्टर को बुलाने के लिए दौड़ा।

मम्मी को क्या हुआ, यह जानने की उत्कंठा से गस्तोन साहब का दम घुटने लगा। फिर भी वे नीचे नहीं उतरे। वहां से लोगों की बातचीत सुनी जा सकती है– उनकी जिन लोगों से वे डरते हैं।

गस्तोन साहब के मन में एक संघर्ष हुआ। सगी मां मृत्यु-शय्या पर पड़ी है। उनकी खातिर पिछले पचीस सालों से आंसू पीने वाली मां। इतने पर भी गस्तोन साहब के पैर आगे नहीं बढ़े। नीचे से सुनाई पड़ने वाले लोगों के शोरगुल ने उन्हें डरा दिया। लोगों के बीच उतरकर जाना ! गस्तोन साहब चौंक पड़े। नहीं, मुझसे वह नहीं होगा।

गस्तोन साहब ने दरवाजे की सांकल लगा ली। बंद कमरे में वे चहलकदमी करने लगे।...

दूसरे दिन सवेरे मिस्सी को होश आ गया। आंखें खोलकर मिस्सी ने चारों तरफ देखा। कुरम्बी, दामू, दासन, पत्रोस, पुलिस वाला चात्तू...इन सबको मिस्सी ने पास खड़ा पाया।

"गस्तोन..."

मिस्सी के ओठ हिले। सबकी आंखें सीढ़ी के ऊपर जा टिकीं। वहां कोई भी नहीं है। दरवाजा बंद ही पड़ा है।

मिस्सी की आंखों से बहे आंसुओं ने गालों को गीला कर दिया। अधमुंदी आंखों से वे निश्चल पड़ी रहीं। लंबे काले चोगे से पीले पड़े दो छोटे-छोटे पैर बाहर दीख रहे थे।

मुंशीजी से वह दृश्य देखा नहीं गया। वे सह नहीं सके। सीढ़ी के ऊपर की ओर देखते हुए उन्होंने पुकारकर कहा, "गस्तोन, तुम नीचे उतरकर आओ। तुम्हारी मां मर रही हैं..."

बंद कमरे में उत्तर से दक्खिन और दक्खिन से उत्तर की ओर चलने वाले गस्तोन साहब के कदमों ने तेजी पकड़ी।

मिस्सी की आंखें निश्चल हो गईं। सिर से पैर तक उनका शरीर जरा कांप उठा। कुरम्बी अम्मा चीख उठीं।

"गस्तोन..."

कालीन बिछी सीढ़ियों के नीचे वाली सीढ़ी पर खड़े होकर मुंशीजी ने गला फाड़कर बुलाया, "जरा उतरकर आओ गस्तोन..."

गस्तोन साहब ने पुकार सुनी ही नहीं।

सीढ़ी की रेलिंग को पकड़ते हुए धीरे-धीरे मुंशीजी ऊपर चढ़ने लगे। मिस्सी की चारपाई के आसपास खड़े लोगों की आंखें उन पर टिकी थीं।

मुंशीजी ने बंद दरवाजे के सामने खड़े होकर दुबारा बुलाया। जवाब नहीं मिला। उन्होंने बार-बार दरवाजा खटखटाया। गस्तोन ने पुकार सुनी ही नहीं। अंदर जल्दी-जल्दी रखे जाने वाले कदमों की आहट ही थी।

दरवाजा खटखटाकर परेशान हो मुंशीजी रेलिंग पकड़े-पकड़े धीरे-धीरे नीचे उतर आए।

शाम को लेस्ली साहब की मिस्सी ने अंतिम सांस ली। गस्तोन साहब को छोड़कर बाकी सभी लोग उनकी चारपाई के पास थे।

फीका पड़ा रेशमी कपड़ा बिछी 'रोजवुड' की चारपाई पर अकड़े पड़े हाथ-पैरों के साथ अधमुंदी आंखों में आंसू लिए मिस्सी पड़ी रहीं। सिर पर मुट्ठी भर पके बालों पर खून के निशान। किसी जमाने में सफेद रेशमी पोशाक पहने रोबीले लेस्ली साहब का हाथ पकड़े समुद्र-तट पर रोज हवा खाने जाया करने वाली सुंदरी मिस्सी...

मिस्सी की मृत्यु के साथ-साथ मय्यषी के वर्णसंकरों के स्वर्णकाल पर परदा गिर रहा है। पीढ़ियों से महत्त्व और खानदानी शान-शौकत अर्जित करने वाली दानशील और संपन्न वर्णसंकरों की परंपरा की अंतिम कड़ी थी मिस्सी। उनकी मृत्यु के साथ ही एक जमाना खत्म होता है। आगे भी मय्यषी में वर्णसंकर अपने जीवन-नाटक खेलेंगे। किंतु वे महत्त्व और खानदानी शान-शौकत पा नहीं पाएंगे। वे गरीबी और मुसीबतों के कारण अधम जीवन बिताएंगे। उनके बीच भिखमंगे और रंडियां पैदा होंगी। सर्वनाश की ओर उनकी दुरंत यात्रा आरंभ हो रही है।...

मिस्सी की मृत्यु का समाचार सुनकर बहुत सारे लोग लेस्ली साहब के बंगले पर जमा हो गए। शव-मंच के पास खड़ी होकर मिस्सी की आत्मसखी कुरम्बी अम्मा फूट-फूटकर रोईं। मिस्सी के हाथों से बनाई स्वादिष्ट केक को खाकर बड़े हुए दासन और गिरिजा ने रुलाई रोकने के प्रयास में ओठ काट लिए।

ऊपर के बंद कमरे में तब भी गस्तोन साहब चहलकदमी कर रहे थे।

"सगी मां मरी पड़ी है। निष्ठुर !"

"पत्थर का बना है उसका दिल !"

आने वाले सब लोगों ने गस्तोन साहब को दोषी ठहराया। जो लोग आए थे, वे सब के सब लौट गए। बंगला खाली हो गया। आधी रात बीत गई। चमकते तारों वाले साफ आसमान के नीचे समुद्र शांत फैला पड़ा था।

तब बंद पड़ा दरवाजा खुला। सीढ़ी के ऊपर गस्तोन साहब का पीला पड़ा

चेहरा दीख पड़ा। दोनों कंधों पर बिखरे पड़े सुनहले बाल। लंबी सुनहली दाढ़ी। आसमान जैसी शांत नीली आंखें...

रेलिंग थामे गस्तोन साहब धीरे-धीरे सीढ़ियां उतरे।

शीशे की बत्तियों से प्रकाशित लेस्ली साहब का अतिथि-कक्ष सुनसान पड़ा था। शीशे की बत्तियों के नीचे रेशमी वस्त्र बिछे शव-मंच पर छाती पर एक के ऊपर दूसरा हाथ रखे लेटी थीं मिस्सी।

गस्तोन साहब धीरे-धीरे शव-मंच की ओर बढ़े। वे मम्मी के चेहरे पर टकटकी लगाए देखते खड़े रहे।

"मम्मी..."

गस्तोन साहब धीरे से शव-मंच के पास घुटनों के बल खड़े हो गए।

"मेरे लिए अब कौन रह गया मम्मी ?...कौन रह गया ...!"

अपना सिर मम्मी की छाती पर सटाए वे सिसकियां भरने लगे।

मय्यषी नदी के ऊपर सूरज के चढ़ने तक वे वैसे लेटे-लेटे रोते रहे।

इक्कीस

जिस दिन 'स्टडी क्लास' नहीं होता, उस दिन दासन समुद्र-तट पर जा बैठता। किसी निर्जन कोने में समुद्र की ओर ताकता हुआ यों ही बैठा रहता। दूर शांत समुद्र में रजत-रेखा की भांति सफेद चट्टान साफ-साफ दीख पड़ती। जन्मों और पुनर्जन्मों के बीच विश्राम करने वाली आत्माएं वहां विहरती होंगी। जिस दिन सफेद चट्टान साफ-साफ दीखती, उस दिन दासन की चिंताएं और अधिक गहरी हो जातीं।

कभी-कभी वासूट्टी और पप्पन भी साथ होते। तब राजनीति और आंदोलन बातचीत के विषय बन जाते। कणारन दादा उनके साथ अक्सर हुआ नहीं करते। उनसे अधिक उम्र वाला वह आंदोलन से संबंधित किन्हीं गंभीर कार्यों में डूबा घूमता फिरता रहता।

"मैं किसी को जान से मार डालूंगा।" एक बार पप्पन ने दासन से कहा, "खून बहाने के अलावा और कोई रास्ता मुझे दीख ही नहीं पड़ता।"

पप्पन की आंखों में खूनी सपने खिले पड़े थे।

"पप्पन, खून बहाना मुझे पसंद नहीं है। सच कहूं तो तुम्हारी बातें सुनते समय मुझे डर लगने लगता है।"

पप्पन चुपचाप बैठा रहा।

"मनुष्य की एक बूंद खून की कीमत एक राजमुकुट की प्राप्ति से भी ज्यादा है।"

"तुम्हारी इच्छा गांधी बनने की है क्या ?"

"मुझे गांधी और मार्क्स नहीं बनना है—मनुष्य बनना मेरे लिए काफी है।"

दासन समुद्र की ओर देखता बैठा रहा। उसमें ज्वार-भाटा आ रहा था। उत्ताल तरंगों के पीछे सफेद चट्टान छिपी पड़ी थी।

"गोरों का जाना देखने का भाग्य मास्टरजी को नहीं हुआ। कम-से-कम हमें वह नसीब होगा, दासन ?"

वासूट्टी ने जरा गहरी सांस ली।

"मेरे और तुम्हारे देखने के लिए नहीं जा रहे हैं गोरे। जमाना ही उसका

द्रष्टा है। हम काम में लगे रहें। बिना नौकरी के घूम-फिरकर और मां-बाप को आंसू पिलाकर हम काम में जुटे रहें। जरूरत पड़ने पर मौत को गले से लगाएंगे, परिणाम चाहे कुछ भी हो..."

"आंदोलन शुरू हुए पंद्रह-बीस साल बीत गए। हमारी उपलब्धि क्या है ?" पप्पन ने अपना क्रोध प्रकट किया।

वासूट्टी से ज्यादा दासन से उसका मन मिलता है। जो कुछ मन में आता है, वह सब कुछ दासन को बता देता है।

दिन-ब-दिन पप्पन का जोश बढ़ता जा रहा है। खून बहाने की बात वह रोज कहता है। इस बात ने दासन को बेचैन कर दिया।

"कम्यूनिज़्म ही ह्यूमनिज़्म है।"

दासन याद दिलाता। पप्पन कहीं कोई ज्यादती न कर बैठे, ऐसा डर दासन को लगा रहता।

एक दिन दासन को अचानक पांडुचेरी जाना पड़ा—राज्य के एक निर्णायक सम्मेलन में भाग लेने के लिए। दासन को ही जाना है, ऐसा कणारन दादा ने अनुरोध किया। गोरों की भाषा गोरों की तरह बोल लेता है। तर्क करने में भी वह निपुण है।

बहुत तड़के ही कणारन दादा उसे बुला ले गए। वाचनालय में बैठकर उन्होंने लंबी बहस की। दोपहर को पसीने से लथपथ दासन घर वापस आया।

"दलिया हो तो दलिया सही, वह भी पीने का समय अब तेरे पास नहीं रह गया क्या ?"

बेटे का धूप से काला पड़ा चेहरा देखकर मां दुःखी हो गई। खाए-पिए-सोए बिना बैठक और सम्मेलन के नाम पर घूम-फिर रहा है। इसका अंत कब होगा ?

"नहाने के लिए पानी भरकर रख दिया है, भैय्या !" कुएं की जगत पर से गिरिजा ने कहा। चूड़ियों वाले उसके गोरे हाथ कोहनी तक भीग गए थे।

"नहाने के लिए समय नहीं है। मैं जा रहा हूं।"

दासन ने झोले में धोती-कमीज रखी। उसे देखकर कौसू अम्मा ने पूछा, "तुम जा कहां रहे हो ?"

"पांडुचेरी।"

कौसू अम्मा भौंचक्की रह गई। काठ के संदूक पर लेटी कुरम्बी अम्मा ने कान खड़े किए। पांडुचेरी बहुत दूर है। दो-तीन गाड़ियां बदलनी पड़ती हैं। दो दिन का सफर।

"नहा-धोकर दो कौर खाकर जाओ न, बेटे !"

"मैं जल्दी वापस आ जाऊंगा।"

मां को तसल्ली देकर दासन झोला लिए बैठक में आया। नहाने-खाने का

समय नहीं है। 'मेल' आने वाली है। स्टेशन जाते समय लीला दीदी के घर भी जरा जाना है। पांडुचेरी से कब वापस आ पाएगा, कुछ पता नहीं। गिरफ्तार कर लिए जाएंगे, इस भय से कणारन दादा, दासन वगैरह सब आजकल घूम-फिर रहे हैं।

मुंशीजी बैठक में आरामकुर्सी पर लेटे थे। कचहरी से खाने के लिए आए थे।

"मैं जरा पांडुचेरी जा रहा हूं।"

दासन पिता के पास जाकर खड़ा हो गया। मुंशीजी ने गोद में रखे अखबार पर से सिर ऊपर उठाया।

"फ्रेंच इंडियन कांग्रेस का एक सम्मेलन है। मैं जाऊं।"

"हूं।"

सिर उठाए बिना ही मुंशीजी ने हामी भरी। इतने में काठ के संदूक से उतरकर कुरम्बी अम्मा वहां आ पहुंची। उन्होंने कहा, "पांडुचेरी से मेरे लिए एक कंबल ला दोगे, बेटे ?"

पांडुचेरी में अच्छा कंबल मिलता है, ऐसा कुञ्चिरुता ने उनसे कहा था। अदालती कामों के लिए पांडुचेरी जाने पर दावीद साहब ने उसे एक कंबल लाकर दिया था।

"ले आऊंगा, दादी !"

दासन वहां से चलकर लीला दीदी के यहां जा पहुंचा।

लीला दीदी घर में नहीं थीं। मामा के साथ सवेरे मायके गई हैं, ऐसा नौकरानी ने कहा।

"चंद्री भी गई है क्या ?"

"चंद्री नहा रही है।"

पल-भर हिचकिचाता खड़ा रहा। नहाकर आने तक रुकने का समय नहीं है। बिना कहे चले जाने पर उसे दुःख होगा। कभी भी चंद्रिका के साथ न्याय नहीं किया। कभी भी नहीं...।

नौकरानी रसोई की ओर चली गई थी। दासन बरामदे में झोला रखकर गुसलखाने की ओर चल दिया। गुसलखाने का दरवाजा बंद था।

"चंद्री !"

"दासन दादा ?"

अंदर से उसने अचरज के साथ जवाब दिया।

"तुमने नहाना शुरू कर दिया क्या ?"

"क्या बात है दासन दादा ?"

"मैं पांडुचेरी जा रहा हूं...। मेल से। तुमसे विदा लेने आया हूं। नहाना शुरू न किया हो तो जरा दरवाजा खोलो।"

"दासन दादा, आप जरा जाकर बैठिए। मैं अभी आई।"

"बैठने के लिए समय नहीं है। मेल आने वाली है। मैं चलूं ?"

"जाना नहीं, दासन दादा ! एक मिनट।"

"गाड़ी आने का समय हो रहा है। आधा मील चलना भी है।" दासन किंकर्तव्यविमूढ़-सा दरवाजे के सामने खड़ा रहा।

"जाना नहीं, दासन दादा..."

चंद्रिका ने दुबारा प्रार्थना की।

एक मिनट बीतने से पहले ही दरवाजा खटपट के साथ खुल गया। सुगंधित तेल और साबुन की महक भी उसके साथ बाहर उभर आई। दासन ने चंद्रिका को देखा। मंदिर का मुख्य द्वार खुलने पर दर्शन देने जैसे वह सामने खड़ी है। काली छापों वाली एक 'वोइल' साड़ी लपेटे है। अंदर पेटीकोट नहीं पहने है, यह स्पष्ट है। खुले लटकते बालों से पानी गर्दन और कंधों पर टपक रहा था।

"चंद्री ?"

"क्या है दासन दादा ?"

उसके गीले ओठ और आंखें चमचमा उठीं। बदन के पानी से 'वोइल' साड़ी तुरंत गीली होकर सट गई।

"दासन दादा, आप कब आएंगे ?"

"तीन-चार दिन में।"

"चिट्ठी लिखेंगे मेरे नाम ?"

"चिट्ठी ?" वह हंस पड़ा, "चार दिन में मैं वापस आ जाऊंगा न ?"

"चार दिन में ही वापस आ जाइएगा।"

उसने अभ्यर्थना की। कुएं के पानी से तर आंखों की चमक फीकी पड़ गई। काली चूड़ियों वाले गीले हाथ से दरवाजा पकड़े वह न जाने किसलिए आगे की ओर झुकी खड़ी रही। साबुन की महक ! बिना कुछ कहे आंखें झुकाए वह खड़ी रही।

"मैं चलूं ?"

"हां।"

बीड़ी के दाग पड़े ओठों पर मुस्कान लिए वह मुड़कर चल पड़ा। बरामदे से झोला लेकर धोती उचकाकर वह रेलवे स्टेशन की ओर जल्दी-जल्दी चल पड़ा।

इस बार विदाई देने के लिए कोई भी नहीं है। घोड़ागाड़ी और बंधु-बांधव नहीं हैं। पढ़कर ओहदा पाने के लिए नहीं, अपने राज्य के विधि-निर्णायक सम्मेलन में भाग लेने के लिए है इस बार की यात्रा।

गाड़ी डेढ़ घंटा 'लेट' थी। पसीने से सराबोर हो गाड़ी की इंतजारी में प्लेटफार्म पर बैठते समय साबुन की महक की अनुभूति हुई। गाड़ी 'लेट' है, यह उस समय

पता लग गया होता तो...

आगे बीच में फटी कमीज के साथ पप्पन सड़क से छटपटाकर उठ खड़ा हुआ। दाईं हथेली में वर्गशत्रु का गरम-गरम खून। उसमें अपने पैरों पर खड़े होने की ताकत नहीं थी।

सामने निश्चल पड़ा कोम्मीसार। उसकी मुट्ठी में पप्पन के सिर पर से उखाड़े गए बाल।

सामने से अपनी ओर लोगों को दौड़े आते पप्पन ने देखा। उनमें पुलिस वाले की एक लाल टोपी भी। ठीक पीछे सीमा है। देर नहीं करनी है। बचना है...।

अब यहां रुकना नहीं है। मैं जा रहा हूं। शायद हमेशा-हमेशा के लिए...

उसने अपने सामने फैली पड़ी मय्यषी को आखिरी बार जरा देखा। दूर आसमान की ओर ऊंचे खड़े गिरिजाघर का फाटक। उसके ऊपर क्रूस...

"मय्यषी ! विदा..."

पप्पन के खून की पपड़ी जमे ओठ बुदबुदाए।

कमजोरी से लड़खड़ाते पैरों से वह मुड़कर चल पड़ा। आग बबूला हो भागकर आने वाली भीड़ के पास पहुंचने के पहले सीमा लांघकर बच निकला।

मय्यषी ! माफ करो। सब कुछ तेरे लिए। तेरी गुलामी दूर भगाने के लिए।

लंबी पड़ी सड़क से लड़खड़ाता हुआ पप्पन चलता-चलता ओझल हो गया।

खबर जानकर मय्यषी के लोग भूकंप आने जैसे स्तब्ध रह गए। वासूट्टी मय्यषी से भागकर बच निकला। कणारन छिप गए।

कुरम्बी अम्मा बैठक में पैर पसारे बैठी सुंघनी सूंघ रही थीं। तभी एक जीप दौड़ती हुई घर के सामने आ रुकी। कुछ लाल टोपी वाले उसमें से नीचे उतरे।

कुरम्बी अम्मा हड़बड़ाकर उठीं। सुंघनी की डिबिया गोद से नीचे गिर गई।

"कहां है दासन ?"

"वह मेल से पांडुचेरी गया।"

शोरगुल सुनकर कौसू देहरी पर आकर खड़ी हो गई। पुलिस वाले उसकी ओर मुड़े।

"तेरा बेटा यहीं है न ?"

"नहीं।"

बात जाने बिना भौंचक्की खड़ी कौसू अम्मा को ढकेलते हुए पुलिस वाले अंदर घुस गए। चारपाई के नीचे, दरवाजों के पीछे सब जगह टार्च से देखा।

आखिर निराश होकर वे बाहर आए।

तभी कचहरी से मुंशीजी वापस आए। पुलिस वाले उनकी ओर मुड़े,

"कहां है तेरा बेटा ?"

"दासन..."

पुलिस वालों ने मुंशीजी को बात पूरी नहीं करने दी।

हाथ से दस्तावेजों का बस्ता और छाता नीचे गिर पड़ा। गले मे एक हल्की-मी रुलाई निकली...

जीप मुंशीजी को लेकर तेजी से भाग पड़ी। उस शोरगुल में कौसू अम्मा की चीख-पुकार किसी ने नहीं सुनी।...

कणारन दादा, वासूट्टी वगैरह सबके बच निकलने पर भी उनसे वास्ता रखने वाले दूसरे कई लोग पुलिस के चंगुल में फंस गए। साथ में निरपराधी भी थे। बहुतों को मय्यषी की जेल में बंद कर दिया गया। कुछेक को पांडुचेरी की जेल में ले जाया गया। उनमें मुंशीजी भी थे।

युद्ध-भूमि जाग उठी। पाञ्चजन्य बजने वाला है।

सम्मेलन समाप्त होने के पहले ही दासन पांडुचेरी से भाग निकला। मय्यषी में न दीख पड़ने के कारण गिरफ्तार करने का आदेश वहां पहुंच चुका था।

बस और रेलगाड़ी में सफर करता हुआ वह किसी तरह गांव आ पहुंचा। मय्यषी रेलवे स्टेशन सीमा के बाहर है। वहां दासन की यात्रा खतम होती है। उसके उस पार उसका प्रवेश निषिद्ध है।

दूर पर आसमान में गिरजाघर का ऊंचा फाटक उसने देखा। बड़े फिरंगी साहब के टीले पर का 'लाइट हाउस' भी देखा।

गांव और घर खो देने वाला दासन रेलवे स्टेशन के बाहर यों ही खड़ा रहा। पप्पन की ज्यादती और पिता की गिरफ्तारी ने उसे शिथिल कर दिया था। नींद और मनोवेदना के कारण दासन बहुत परेशान हो गया था।

आने-जाने वाले लोगों ने उसे देखकर एक दूसरे से गोसे में कहा।

वैसे अधिक देर खड़ा नहीं रहना पड़ा। कणारन दादा और वासूट्टी को सामने से आते देखा।

"तुम्हें सब कुछ पता चल गया है न, दासन ?"

"पता चल गया, कणारन दादा !"

"तुम्हें कुछ हो न जाए, यही मुझे डर था।"

"मुझे अब क्या होना बाकी है। मेरे पिताजी..."

वाक्य पूरा नहीं कर सका। दोपहर की गर्मी में सिर चकरा गया।

"जो होना था सो हो गया। अब कहने से क्या फायदा ?"

कणारन दादा दासन के कंधे पर हाथ रखे चले। पीछे-पीछे वासूट्टी भी। उन्होंने उसे सांत्वना देने की कोशिश की।

रेलवे स्टेशन के पूरब में कणारन दादा का एक छोटा-सा घर था। पोर्टर

कुञ्ञामन उसमें रहता था। मय्यषी से भाग निकलने पर रहने के लिए कोई जगह नहीं रही। कुञ्ञामन से घर खाली करने के लिए कहने में कणारन दादा हिचकिचाता था। वैसे कुञ्ञामन के साथ कणारन दादा और वासूट्टी भी रहने लगे।

नहाने और खाने के बाद दासन को जरा तसल्ली हुई। मन की जगह बुद्धि काम करने लगी। बड़े फ्रांसीसी साहब द्वारा निर्देशित नौकरी और फ्रांस में जाने का स्कॉलरशिप जब उसने नामंजूर किया था तब एक जादू के आईने जैसे उसने अपना भविष्य देख लिया था। आगे भी कितनी ही अग्नि-परीक्षाएं बाकी पड़ी हैं। कुछ भी सह सकने की शक्ति बढ़ानी है। चट्टान की दृढ़ता...

दो दिन लगे पप्पम को खोज निकालने में। कणारन दादा और वासूट्टी उससे मिला नहीं करते थे। वह कहां है, इसका किसी को पता नहीं था।

शाम को नदी-तट पर जाते समय एक गली से पप्पन अचानक निकला। दासन को देखकर वह रुका।

"पप्पन !..."

वह रुका। देखने पर पहचाना नहीं जा सकता था, इतना बदल चुका था वह। आंखें गड्ढों में धंस गई थीं। चेहरे पर बिखरे पड़े थे छोटे-छोटे बाल।

"तुम यह कर गुजरोगे, ऐसा मैंने सोचा नहीं था, पप्पन !"

"तुम भी मुझे दोषी ठहराने की कोशिश कर रहे हो ?"

उसकी आंखों से चिनगारियां निकल पड़ीं। एक बाघ जैसे वह जरा गुर्राया,

"वह गांधी कणारन दादा दोष निकाले तो मेरी समझ में आ सकता है। तुम भी उस पर तुल जाओ तो समझना मुश्किल है।"

"मैं तुम पर दोषारोपण नहीं करता। मैं तुम्हें समझ रहा हूं, पप्पन !"

दासन ने मानो अपने आपसे ही आगे कहा, "दर्द दिए बिना तुम कोम्मीसार पर कटार चला पाते तो...खून बहाए बिना घायल कर पाते तो..."

केवल दर्द देना और खून बहाना ही उससे सहा नहीं जाता। लेकिन दासन जानता है—दर्द देने की जगह दर्द दिए बिना रहा नहीं जा सकता। खून बहाने की जगह खून बहाना ही पड़ेगा। इसलिए पप्पन को समझने में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई।

"पप्पन, तुम नहीं तो किसी और को वह क्रूर कर्म करना ही पड़ता। किसी दूसरे से करवाए बिना तुमने स्वयं वह कर दिया। वैसे दूसरे किसी को तुमने बदनामी से बचा दिया। तुम्हारा महत्त्व यही है..."

"तुम्हारी फिलॉसफी मुझे नहीं सुननी है।"

पप्पन गुर्राया।

रात को कमर सीधी करने के लिए कोई जगह या भूख मिटाने के लिए मुट्ठी भर भात उसके पास नहीं था। दो-तीन दिन से फाका कर रहा है। दुकान के बरामदे

में लेटता है।

मय्यषी में उसका एक बड़ा घर है। पप्पन के पिता कोलम्बो में हैं। मां को देखने की उसे याद नहीं। समझ आने के पहले ही वे परलोक सिधार गई थीं। पप्पन के कोई भाई-बहिन नहीं हैं।

पप्पन भाग्यशाली है। वह इस दुनिया में आजाद है। यह आजादी मुझे मिली होती तो !...

दासन की इच्छा हुई। जेल में पड़े पिताजी और असहाय मां, गिरिजा और दादी की याद मन में घाव की तरह पक रही है। उसे इच्छा होती है—मैं इस दुनिया में अकेला होता तो !...

"पप्पन, आओ।"

"किधर ?"

"जहां कणारन दादा, वासूट्टी और मैं रह रहा हूं, वहां तुम कोई पराए नहीं हो। हममें से एक हो।"

"यह विचार और लोगों को तो है ही नहीं।"

गांधी-भक्त कणारन दादा के मन पर पप्पन ने कभी न भरने वाला एक घाव बना दिया है, वे कभी भी उसे माफ नहीं कर सकते।

"मैं बुला रहा हूं न—आओ।"

हिचकिचाहट होने पर भी पप्पन ने बात मान ली।

उस दिन से पप्पन भी पोर्टर कुञ्ञामन के घर में रहने लगा।

कुञ्ञामन की घरवाली दलिया और सब्जी बना देती। वैसे भूख मिटाते। दिन का अधिकांश भाग चर्चाओं और बहसों में बीत जाता। रोज शाम को मय्यषी नदी के तट पर जा बैठते। जितनी बीड़ियां उनके पास होतीं, सारी की सारी वे लोग पी डालते।

एकांतता और वेदना के दिन ! मन की तरंगें कब थमेंगी ? इस जीवन में चैन और खुशी कभी आएगी क्या ?

शायद आ जाए—सफेद चट्टान पर एक तितली बनकर उड़ते समय; केवल उसी समय।

बाईस

सामने रोपे गए धान के खेत हैं। खेत के उस पार दूर स्मृति में उभरकर आने वाली मय्यषी नदी जो दो पुलों के नीचे से होकर बहती हुई बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले की परछाई पड़े समुद्र में विलीन हो जाती है। नदी और समुद्र के परस्पर विलीन होने वाले उस नजारे का मैं कितनी बार साक्षी बना हूं—लाल शिरीष के फूलों का कालीन बिछा पातार समुद्र-तट। वहां बिताए गए बचपन के दिनों की यादें धूप की किरणों की तरह उसमें भरी पड़ीं थीं।

चंद्रिका का सामने आकर खड़ा हो जाना वह देख नहीं पाया।

"दासन दादा—"

जानी-पहचानी आवाज। बरामदे पर चढ़ते समय पायल बज रही थी।

"चंद्री ?"

उसे सामने खड़ा देखकर वह जरा भौंचक्का रह गया। वह यहां कैसे आ पहुंची ?

"दासन दादा, आप कुञ्ञामन के घर में रह रहे हैं ?"

"तुम्हें यह पता कैसे चला ?"

"मां ने कहा। मां आपको बुला रही हैं। वहां रह सकते हैं।"

लीला दीदी ऐसा कहेंगी, यह उसे पता था।

चंद्रिका के कालेज में दाखिल होते ही वे अषियूर के खानदान वाले मकान में रहने लगी थीं।

"मैं शाम को आऊंगा, मां से कह देना।"

"अभी आने में क्या हर्ज है ?"

"अभी दूसरा काम है।"

"शाम को जरूर आएंगे न ?"

"आऊंगा।"

चंद्रिका साड़ी पहनने लगी थी। पहले की तरह बाल आधे खुले पड़े थे। साड़ी पहनना शुरू कर देने पर भी पायल पहनना छोड़ा नहीं था। अब भी उसके पैर

पड़ते समय 'रुनझुन' संगीत उभरता है।

थोड़ी देर बाद कणारन दादा और वासूट्टी आ पहुंचे।

"दासन दादा, रेल की पटरी तक मेरे साथ आएंगे ?"

चलते समय उसने पूछा। उसने मान लिया। उसका सामीप्य तो उसे हमेशा पसंद ही है। कमीज पहनकर खेत के बीच से होकर दासन उसके साथ चला।

"इस पटरी का छोर कहां है, दासन दादा ?"

"जहां से शुरू हुआ है वहीं।"

"तब शुरू कहां से होता है?"

"जहां खतम होता है वहां से।"

वह खिलखिलाकर हंस पड़ी। अनजाने दासन भी उसकी हंसी में शामिल हुआ। उसने याद किया—इस तरह हंसे हुए मुझे बहुत दिन हो गए।

पिता का कुछ भी पता नहीं। घर में मां, बहिन सब कैसे दिन बिता रहे हैं, यह भी पता नहीं। वहां चूल्हा जलता है क्या ? दादी के सूंघने के लिए चुटकी भर सुंघनी है क्या ?

दासन हंस कैसे सकता है ?

"शाम को आइएगा।..."

जाते समय चंद्रिका ने दुबारा कहा। रेल की पटरी से सटी पगडंडी से होते हुए चंद्रिका का चलना वह खड़ा-खड़ा देखता रहा।

शाम को लीला दीदी के घर गया।

रेलवे स्टेशन के पास ही है उनका खानदान। बहुत सारी लकड़ी की कारीगरी से युक्त कम ऊंचा एक दुमंजिला मकान है। अहाते में गोशाला, पयाल के ढेर आदि हैं। दिन में भी कमरों में अंधेरा छाया रहता है। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के साथ कई बार दासन वहां जा चुका था।

"तू यहीं रह" मामा ने कहा, "यह तेरा अपना घर है, यही समझ।"

"हमेशा आता-जाता रहूंगा, ठीक है न, मामाजी ?"

"नहीं। तुझे यहीं रहना है।"

मामा ने मजबूर किया।

"तुम इतनी जल्दी हम लोगों को भूल गए क्या ? यहां इस घर के होते तुम उस कुञ्ञामन के घर में क्यों रहते हो ?"

लीला दीदी ने शिकायत के स्वर में कहा।

"कुञ्ञनन्तन के चल बसने से तू यहां पराया नहीं हो गया।"

मास्टरजी के जिंदा रहते समय लीला दीदी के घर में दासन एक परिवार के सदस्य के समान था। जब मन होता, आता-जाता। वहां रातें भी बिताई हैं।

"चंद्री, दो गिलास।"

मामा ने अंदर की ओर पुकारकर कहा। चंद्रिका गिलास लेकर आई।

"दासन दादा पीते नहीं हैं, मामाजी !"

वह काठ के संदूक से ठर्रा की बोतल निकाल रहा था।

"क्या यह सच है रे ?"

"आज तक पी नहीं है।"

"लिहाज से हो तो उसकी जरूरत नहीं। कुञ्जम्बू जब बारह साल का था तभी से वह और मैं साथ-साथ बैठकर पिया करते थे। आदर मन में रखना काफी है रे !"

कुञ्जम्बू बड़ा बेटा था। केलुअच्चन की तरह सांप के डंसने से वह मर गया था।

मामा ने दो गिलासों में थोड़ा-थोड़ा ठर्रा उड़ेल दिया।

"नहीं चाहिए, मामाजी।"

"पी ले रे।"

पीने की इच्छा न होने के कारण नहीं। कभी-कभी इच्छा होती है—सीधे उण्णिनायर के ताड़ी के ठेके पर जाकर छककर पिए। पीने के आग्रह से नहीं। प्रज्ञा एक शाप बन चुकी है आज। सारी वेदनाओं का उत्स वही है न ?

लेकिन पी कैसे सकता है। राष्ट्रीय आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम के बारे में भाषण देते घूमने वाला वह पराए गांव में पिता के जेल में बंद रहते और मां-बहिन के फाकों के मारे रहते समय पी पाएगा क्या ? पीकर गुलछर्रे उड़ा पाएगा क्या ? इसकी आजादी उसे नहीं है।

"दासन को मजबूर मत करो।" लीला दीदी सहायता के लिए आ पहुंचीं, "उसकी हालत तो आप जानते ही हैं, मामाजी !"

फिर मामा ने मजबूर नहीं किया। दोनों गिलासों का ठर्रा एक में डालकर चढ़ा लिया। अधिक देर नहीं हुई कि ब्रह्मराक्षस के बारे में भाषण देने लगे। ठर्रा अंदर होते ही मामा को ब्रह्मराक्षस के बारे में बोलना है।

"ब्रह्मराक्षस के माने क्या हैं ?"

"पता नहीं।"

"फिर पांडुचेरी में गोरों ने तुम्हें क्या खाक पढ़ाया ? परशुराम के फरशा उठाकर समुद्र में फेंकने पर जमीन उभर आई। गोरों ने तुम्हें यह पढ़ाया है क्या? वैसे निकली जमीन में रहने के लिए लोग चाहिए न ? परशुराम ने बहुत सारे ब्राह्मणों को उत्तर से लाकर, यहां बसा दिया। सारी विद्याएं और तंत्र पढ़े लोग थे वे। उनके प्रेत को ब्रह्मराक्षस, ब्रह्मराक्षस कहा करते हैं।"

आदिब्राह्मणों के प्रेत इन ब्रह्मरक्षसों की मृत्यु होती ही नहीं। एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करके पीढ़ियों से, युगों से ये जीते आ रहे हैं।

कुछ देर तक मामा की कहानियां सुनता बैठा रहा। अंधेरा होते ही दासन उठा।

"तुम कहां जा रहे हो ?"

लीला दीदी ने आश्चर्य से पूछा।

"मैं जा रहा हूं।"

"यह तुम्हारा घर है बेटे..."

"सो मैं जानता हूं, लीला दीदी ! मैं यहां रहने लगूं तो मेरे पिता जैसी हालत तुम्हारी भी हो जाएगी।"

"दासन, तुमसे मैं कह रही हूं, तुम्हारी लीला दीदी, तुम जाओ नहीं।"

आगे बढ़ाया पैर दासन ने पीछे नहीं हटाया। मुड़कर शांत भाव से कहा,

"लीला दीदी, मुझे माफ करो। खुद जलकर और दूसरों को जलाकर भस्म कर देने वाली आग हूं मैं। मुझसे प्यार करने वालों को खबरदार रहना है।"

बाहर निकलकर अंधेरे से होता हुआ दासन चल दिया—पोर्टर कुञ्आमन के घर की ओर। वहां एक थाली दलिया उसका इंतजार कर रहा होगा। एक चटाई भी।

उतना काफी है। मैं संतृप्त हूं।

बरामदे में रोशनी थी—छत से लटकी हुई लालटेन की रोशनी। कणारन और वासूट्टी बैठक में बैठे हैं।

"दासन, एक खास बात है।"

लालटेन की रोशनी में कणारन दादा के दांत चमक उठे—दासन को देखने पर।

"रेफरंडम के लिए गवर्नर ने सहमति दे दी है।"

कणारन दादा ने खद्दर की कमीज की जेब से एक तार-संदेश निकाला। पांडुचेरी से आया था वह।

"हम बच गए रे, बच गए।"

वासूट्टी आनंदित हो गया। दासन के लिए वह कोई बड़ी खबर नहीं थी। रेफरंडम के लिए सरकार सहमत हो जायेगी, ऐसा उसे लगा था। लेकिन इस रेफरंडम का परिणाम ? उसे शुभाप्तिविश्वास नहीं था।

पढ़ने के बाद दासन ने तार मेज पर रख दिया।

"तुम खुश नजर क्यों नहीं आ रहे हो ?"

"रेफरंडम पूरा होने दो, वासूट्टी !" .

अविलंब ही शासन-समिति के प्रधान की घोषणा हुई—अक्तूबर के महीने में होने वाले नगरपालिका का चुनाव जनहित जानने का मार्ग-सूचक सिद्ध होगा।

"यह एक दांव है। नगरपालिका के चुनाव में हम लोग जीतेंगे नहीं, यह वे जानते हैं।"

"लोग हमारी तरफ हैं, अब भी यह तुम्हारी समझ में नहीं आया क्या ?"

वासूट्टी जोश में भर गया।

"कुछ लोग हमारी तरफ होंगे। लेकिन यह कहने की हिम्मत उनमें होगी क्या ?"

आंदोलन का मन से समर्थन करने वाले बहुत सारे लोग थे। विशेष रूप से कूर कोम्प्लमान्तेर आदि के अध्यापक और विद्यार्थीगण। मुंशी दामू की गिरफ्तारी ने मय्यषी के लोगों के दिलों में भय भर दिया है। दूसरों को सुनाते हुए आंदोलन के बारे में कुछ कहने तक की हिम्मत किसी में नहीं थी।

पिछले बारह सालों से रामन वकील मय्यषी के मेयर हैं। हर बार वे सर्वसम्मति से चुने गए थे। सरकार के समर्थक रामन वकील से मुठभेड करने की हिम्मत किसी में नहीं थी।

लेकिन इस बार हवा ने रुख बदल दिया। रामन वकील से टक्कर लेने के लिए ग्रफिये (कचहरी का एक अफसर) सुकुमारन आगे आया। वह सरकारी नौकरी करने वाला एक नौजवान था। अभी तक छिपे तौर पर आंदोलन के लिए काम करता आ रहा था।

चुनाव पास आते ही कणारन दादा, दासन आदि की नींद हराम हो गई। मय्यषी से बाहर रहते हुए उन्होंने काम किया। मय्यषी के हर एक व्यक्ति के नाम व्यक्तिगत तौर पर पत्र लिखकर आंदोलन के समर्थन की प्रार्थना की। कणारन दादा, दासन आदि के अभाव में पप्पूट्टी और भास्करन नामक दो युवकों ने प्रवर्तन का नेतृत्व किया।

अविलंब ही सरकार का हुक्म आया—पप्पूट्टी और भास्करन चुनाव पूरा हो जाने तक मय्यषी के बाहर न जाएं।

फिर भी एक दिन अंधेरे की ओट में नदी तैरकर पार करके पप्पूट्टी आया।

"तुम्हें और भास्करन को गिरफ्तार कर लिया जाएगा, ऐसा सुनने में आया है। तुम भी अंदर हो जाओगे तो फिर और कौन रह जाएगा काम करने के लिए।"

"हमारे साथ भगवान है, कणारन दादा !"

पप्पूट्टी ने कमीज और धोती का पानी निचोड़ दिया। वह पूरी तरह भीग गया था।

पप्पूट्टी कम उम्र का है। कूर कोम्प्लमान्तेर में पढ़ते समय वह राजनीति में कूद पड़ा था। ऊपर सामने वाला एक दांत नहीं था—यह अच्चू की देन थी।

"तुम भी यहां आ जाओ, बेटे।"

"फिर काम करने के लिए कौन बाकी बचेगा ?"

"जेल में जाने से तो बेहतर है।"

"जेल में जाना पड़े तो जाऊंगा। तब तक मुझसे जो कुछ बन पड़ेगा, करता रहूंगा।"

वासूट्टी द्वारा बनाकर लाई गई बिना दूध की चाय पप्पूट्टी ने फूंक-फूंककर पी ली। मय्यषी नदी से आने वाली आधी रात की ठंडी हवा में वह थरथरा रहा था।

"वे हमारे लोगों को कार्ड नहीं देंगे, ऐसा लगता है।"

पप्पूट्टी ने बताया। मतदाताओं को सरकार एक कार्ड देगी। इस कार्ड के बिना कोई भी मतदान नहीं कर सकेगा।

"वे अपने लोगों को ही कार्ड देंगे। ऐसा हो तो हम क्या करें ?"

पप्पूट्टी के सवाल का जवाब किसी के पास था ही नहीं।

"मैंने अंदाज लगाया था। चुनाव इसीलिए मुझमें जोश नहीं भर सका।"

"तो फिर यह चुनाव किसलिए हो रहा है, दासन ?"

"एक नाटक।"

क्रोध से उसने अहाते में इधर से उधर चहलकदमी की। नदी से तब भी हवा बहती आ रही थी। खेतों के ऊपर फीकी चांदनी बिछी हुई थी। कहीं से कुकुही ने बांग दी।

"नीति और न्याय उनकी समझ में आएगा ही नहीं। छुरी भोंककर आंतें निकालनी हैं।"

पप्पन की आंखों से चिनगारियां फूट पड़ीं। वह अभी तक चुपचाप बैठा था।

"कार्ड न दें तो मांगकर लेना है।"

"मांगने की हिम्मत किसमें है दासन ?"

"उसके लिए हिम्मत हमें बंधानी है।"

कणारन दादा अपने हाथों पर चेहरा धरे बैठे रहे। उस दिन भी उनमें से कोई सोया नहीं। पौ फटने तक लंबी बहस। आखिर पौ फटने के धुंधलेपन में नदी तैरता हुआ पप्पूट्टी मय्यषी वापस चला गया।

चुनाव के पास आते-आते हर जगह संघर्ष बढ़ गया। कुछ होने वाला है। मय्यषी के लोगों की आंखों में भय बसा रहा।

तेईस

सन् 1948 के अक्तूबर की इक्कीसवीं तारीख। पप्पूट्टी और भास्करन कार्ड मांगने के लिए मेयर के दफ्तर की ओर चले। आंदोलन के करीब पंद्रह समर्थक उनके साथ थे। उतने लोगों के साथ आ जाने पर पप्पूट्टी जोश में भर गया।

वे एक जुलूस के रूप में आगे बढ़े। सड़क के किनारे और दुकानों के बरामदों में लोग सांस साधे देखते खड़े रहे। किसकी शुरुआत है...।

पले द षियूस्तीस पार करके लोग मेयर के दफ्तर के सामने जा पहुंचे।

"कार्ड... ।"

"हम लोगों को कार्ड दो।..."

मेयर के दफ्तर के अहाते से आवाजें गूंज उठीं। दफ्तर से कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए एक बुड्ढा मेयर रामन वकील बाहर आया।

मेयर का चेहरा लाल हो गया। यह कैसी बदमाशी है—लाल-लाल आंखों से उन्होंने पुलिस वाले कुमारन की ओर देखा। उसने मुंह मोड़ लिया।

"मतदान के सभी हकदारों को कार्ड दो। कार्ड दो..."

भीड़ बरामदे पर चढ़ने लगी। मेयर ने बहुतों को जोर से बुलाया। सबने अनसुनी कर दी।

रामन वकील को धक्का देते हुए हटाकर वे दफ्तर में घुस गए। उन लोगों ने अलमारी खोलकर उसमें तह करके रखे कार्डों को जमीन पर बिखेर दिया। दशाब्दों के पुराने कागजात फर्श पर बिखर गए। कुर्सियां और मेजें तोड़-फोड़ दी गईं...

दंगे वालों ने कागजातों को सड़क पर ढेर लगाकर जला डाला।

भास्करन मकान के ऊपर किसी तरह चढ़ गया। जमाने से वहां फहराने वाली पताका उखाड़कर नीचे फेंक दी। न जाने कहां से उसके हाथ में एक तिरंगा झंडा आ लगा।

मेयर के दफ्तर के ऊपर तिरंगा झंडा फहराने लगा।

मेयर के दफ्तर को कब्जे में कर लेने के बाद दंगे वाले सड़क पर आ पहुंचे। अब तक उनकी संख्या करीब सौ हो चुकी थी।

"आओ..."

बेचैनी से मय्यषी की ओर ध्यान से देखते खड़े दासन ने पुकारकर कहा। उसके साथ पप्पन, वासूट्टी और दूसरे सात-आठ नौजवान भी थे।

सामने सीमा-रक्षक हथियार बंद पुलिस के दो सिपाही।

"रुको दासन—"

वासूट्टी ने पुकारकर कहा। दासन सीमा की ओर बढ़ने लगा था। यह देखकर वासूट्टी घबड़ा गया।

दासन अब इंतजार नहीं कर पाता। मय्यषी के लोग जाग उठे हैं। वे कर्मभूमि में उतर आए हैं।...

वह आगे बढ़ा।

"दासन, तुम आफत सिर पर मत लो।"

दासन नहीं रुका। कर्मभूमि उसे बुला रही है। कानों में गूंजने वाली वह पुकार सुने बिना रह नहीं सकता...

रोकने के लिए आगे बढ़े वासूट्टी को धक्का देते हुए हटाकर पप्पन दासन के पीछे-पीछे चला। उनके पीछे दूसरे नौजवान भी।...वे सीमा की ओर बढ़े।

सीमा के उस पार मय्यषी में जयभेरी गूंज उठी। फहराते हुए तिरंगे झंडे लिए लोग दौड़ रहे हैं।...

संहार करने के लिए आगे बढ़े पुलिस के सिपाही भौंचक्के खड़े के खड़े रह गए।

उनकी परवाह किए बिना दासन मय्यषी की ओर चल पड़ा।

किसी ने उसे रोका नहीं। रोकने वाले भौंचक्के रह गए।

जाग उठे मय्यषी के लोगों का नेतृत्व करते हुए दासन आगे बढ़ा...रियूद लग्लीस से होते हुए गिरिजाघर के फाटक की परछाईं पार करते हुए दासन आगे बढ़ा। फाटक के ऊपर वाला क्रूस बहुत ऊंचाई पर हाथ पसारे उसका साक्षी बना।

लबूर्दने कालेज से अध्यापक और विद्यार्थी दंगे वालों के साथ हो लिए। दफ्तरों से कर्मचारी कलम रखकर उनके साथ चल दिए...।

मय्यषी की छाती पर खून के निशान छोड़ते हुए वे रियूद्यु गुवर्णमां से होकर आगे बढ़े...।

मय्यषी के लोगों ने सरकारी संस्थाओं को एक-एक करके कब्जे में कर लिया। अंत में वे बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर कोलाहल करते हुए जा पहुंचे। उनके कपड़े खून से लथपथ थे। उनके कंठों से आजादी के गीत मुखरित हो रहे थे...

दासन ने बंगले का फाटक पार किया। उसकी दाहिनी आंख से खून की बूंदें टपक रही थीं। धोती और कमीज फट गई थी।...

अपने बंगले के ऊपर से हाथ में दूरबीन लिए बड़े फ्रांसीसी साहब ने सब

कुछ देख लिया।

"गोली मत चलाओ।..."

उन्होंने आज्ञा दी। मय्यषी के लोग अंदर घुस गए। गोली चलाने की आज्ञा न होने से पुलिस के सिपाही कठपुतलियों की तरह खड़े के खड़े रह गए।...

मय्यषी के ऊपर बहुत दूर सफेद चट्टान से आने वाली मंद हवा में अनगिनत तिरंगे-झंडे फहराने लगे।

सब कुछ समाप्त हो जाने पर दासन घर की ओर चल पड़ा।

"मां, दासन भैया..."

मोड़ पर से पैदल आने वाले दासन को देखकर खुशी से गिरिजा ने पुकारकर कहा। वह अहाते में भागती गई। भैया को देखे उसे कितने ही महीने बीत गए हैं।

दंगा शुरू हो जाने के कारण सभी लोग दरवाजा बंद किए अंदर बैठे हैं। बाहर हो क्या रहा है, यह कुरम्बी अम्मा या गिरिजा को पता नहीं था। सड़क से नारे सुनाई पड़ रहे थे, लोगों की भीड़ की आवाज भी। ललकारें...

"मेरे दासन ?"

गिरिजा का कहा सुनकर कुरम्बी अम्मा काठ के संदूक से नीचे उतर आईं। झुककर चलती हुई वे बैठक में पहुंचीं। तब तक दासन अहाते में आ पहुंचा था।

दासन की दाहिनी आंख सूज गई थी। गालों पर सूखे खून के निशान। चलने की ताकत नहीं थी।

सभी कुछ एक सपने जैसा लगा। कल नहीं, कितने ही समय के पहले मय्यषी को मुक्ति मिल गई थी, ऐसा लगा। शिथिल पैरों और दुःखती आंख के साथ घर की ओर चलते समय चारों ओर तिरंगे झंडे फहरा रहे थे। दासन को वह सब एक सपना जैसा लगा।

"भैया, आपकी आंख में क्या हुआ ?"

दासन की सूरत ने गिरिजा का मन भारी कर दिया। धोती और कमीज चिथड़े-चिथड़े हो गए थे। कई जगह पर खून के धब्बे।

"मुझे एक गिलास चाय पिलाओ, बिटिया !"

वह बैठक में बेंच पर बैठ गया। कुरम्बी अम्मा ऐसे खड़ी थीं, मानो उसे काठ मार गया हो।

गिरिजा चाय बनाने नहीं गई। उसकी आंखें अचानक डबडबा आईं।

"पानी काफी है।"

उसने गलती सुधार ली। घर में फाका होगा। दलिया के लिए भी पैसा नहीं होगा। फिर चाय की बात तो दूर रही...

"मेरा बेटा आ गया ?"

अंदर कहीं से मां का दीन स्वर दासन ने सुना।

"मां की तबीयत ठीक नहीं है क्या ?"

"पिता के जाने के बाद से चारपाई पर पड़ी हैं।"

गिरिजा ने ओठ काटते हुए रुलाई रोकने की कोशिश की। उसके द्वारा लाया गया पानी पीकर दासन अंदर घुसने को हुआ।

"भैया, यह सूरत लेकर मां के सामने मत जाओ", गिरिजा ने रोका।

"मां यह सह नहीं पाएगी।..."

दासन ने आगे बढ़ाया पैर वापस ले लिया। मां को देखने के लिए वह तरस रहा था। जेल में पड़ा पति और देश-निर्वासित बेटा—कितनी अभागिन है मेरी मां।

दासन लौटकर बेंच पर आ बैठा।

"दादी, तुम कुछ बोलती क्यों नहीं ?"

वे तब भी दासन को ध्यान से खड़ी देखती रहीं। पहले तो उनकी समझ में यह नहीं आया कि दासन क्या-क्या कर रहा है। बड़े फ्रांसीसी साहब द्वारा दी गई नौकरी अस्वीकार करने पर उसके पीछे कोई-न-कोई कारण होगा, ऐसा उन्होंने सोचा था। दासन से भूल नहीं हो सकती। पांडुचेरी जाकर पढ़कर आया व्यक्ति है। बुद्धि और विवेक रखने वाला है। दासन से भूल नहीं हो सकती...

मुंशीजी के गिरफ्तार कर लिए जाने के साथ-साथ कुरम्बी अम्मा की समझ में सब कुछ आने लगा। दासन गोरों से मय्यषी छोड़ जाने के लिए कह रहा है। कुरम्बी अम्मा का कलेजा टूक-टूक होने लगा। दासन की जगह और कोई ऐसा करता तो कुरम्बी अम्मा उसके सिर पर हाथ रखकर उसे शाप देतीं। दासन को वे शाप कैसे दें ?

उनकी भरी आंखों के आंसू फिर कभी सूखे ही नहीं।

"दादी, आप मुझसे नाराज हैं ?"

वे तब भी प्रतिमा जैसी खड़ी ही रहीं।

दादी के मन का भाव दासन भांप गया।

कल जब गोरे सदा सर्वदा के लिए जहाज पर चढ़ेंगे, मय्यषी में यत्र-तत्र-सर्वत्र आनंद के गुलछर्रे उड़ाए जाएंगे, तब केवल दादी के मन में ही दुःख की कालिमा फैली रहेगी। किसी के जाने बिना वे आंसू बहाएंगी। दासन को यह मालूम है।

"दादी, मुझे बड़े फ्रांसीसी साहब से कोई नफरत नहीं है। दादी, आप विश्वास कीजिए।"

कुरम्बी अम्मा धीरे-से दासन के पास आकर बैठ गईं। अपने सींक जैसे हाथ से उसका हाथ पकड़ लिया। कुछ भी कहे बिना वे यों ही बैठी रहीं।

दासन किसी से भी नफरत नहीं करता। इस दुनिया में दासन का कोई भी

दुश्मन नहीं है। सभी से दासन स्नेह करता है। लेकिन इस पर विश्वास करेगा कौन ?

पैरों की आहट सुनकर दासन ने सिर उठाकर देखा। देहरी पर मां खड़ी हैं।

कौसू अम्मा की आंखों में भी आंसू। मां में हुए परिवर्तन ने दासन को अचंभे और दुःख में डाल दिया। वे एक शिशु जैसी छोटी हो गई हैं। बाल आधे से अधिक झड़ गए हैं। आंखों के नीचे गीले और काले गड्ढे पड़ गए हैं।

"मां, रोओ नहीं..."

वह यह जानता है कि उसे यह कहने का हक नहीं है, फिर भी कह दिया। मां को रुलाने वाला और कोई नहीं...

"मां, तुम आकर लेटो।"

गिरिजा उन्हें पकड़कर अंदर ले गई। मुंशीजी को जिस दिन गिरफ्तार करके ले गए थे, उस दिन से वे चारपाई पर पड़ी हैं।

दासन चारपाई पर मां के पास बैठ गया। उन्हें तसल्ली देने की कोशिश की। शब्द गले में रुंधे ही रहे। उसने आंसू पी लिए—यह जाने बिना कि उसे कहना क्या है, मां को क्या कहकर तसल्ली दे।

"तेरे पिता..."

"मां रोओ नहीं।"

मुंशीजी का कोई पता नहीं। इस बुढ़ापे में कोसों दूर किसी जगह जेल में पड़े हैं। उस पर दमे की बीमारी। एक दिन सर्दी लग जाने या बरसात में भीग जाने पर बीमार पड़ जाता है। वह व्यक्ति जी कैसे रहा है, कौन जाने !

या जिंदा है भी क्या ?

कौसू अम्मा की छाती से सिसकियां उभर उठीं।

"दूसरों को आंसू पिलाने के लिए ही तूने मेरी कोख से जन्म लिया है, बेटे ?"

"अब हमें रोना नहीं पड़ेगा, मां। हमारी तकलीफों का अंत होने वाला है।"

समुद्र से उठने वाली मंद हवा में मय्यषी के ऊपर लहराने वाले तिरंगे झंडे। मेरी मां देख नहीं रही है क्या ?

"पिताजी आएंगे क्या, भैया ?"

"तुरंत आएंगे। मैं जाकर लिवा लाऊंगा।"

रोती-रोती मां ऊंघने लगीं।

"मां को सोने दो, भैया, आप आइए।"

गिरिजा ने पानी गरम कर रखा था। उसने दासन को चारपाई पर लिटाकर सारी देह को सेंका। खौलते पानी में डुबाया कपड़ा शरीर पर पड़ते ही आंखें मुंद गईं।

घाव और सूजन से भरे दासन के शरीर से भाप उठी। वह भी ऊंघने लगा। दासन के आज तक के जीवन की सबसे अधिक सुखद नींद यही थी!—आजादी

की परम पवित्र वायु का सेवन करते हुए वह सो गया।

सोते हुए भाई को गिरिजा देखती खड़ी रही। उसके जाने बिना ही उसकी आंखें गीली हो गईं।

भाई के बारे में वह भी सपने देखा करती थी। उसने कुरम्बी अम्मा की तरह कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए चलने वाले दासन का सपना देखा नहीं था। लेकिन उसने भी सपने देखे थे। भाई का नौकरी में लग जाना, पहली तनख्वाह मिलने पर उसके भाई द्वारा साड़ी खरीदकर लाना...

लेकिन चारपाई पर पेट के बल सोते पड़े दासन को देखकर उसकी वे सब इच्छाएं नहीं रहीं। उसकी एक ही इच्छा थी—भाई का भला हो !...बस इतनी सी !...

दासन अधिक देर तक वैसे लेटे-लेटे सो नहीं सका। वह जाग उठा। मय्यषी दासन को पुकार रही है। हर क्षण बहुमूल्य है। मय्यषी जनता के हाथों में है। लेकिन उससे कुछ होता नहीं। बड़े फ्रांसीसी साहब और अनुयायी बंगले पर पड़ाव डाले पड़े हैं। उन्हें यहां से निकालना है। तभी उसके जीवन का आंधी-तूफान शांत होगा। तब तक वह सो नहीं सकता।

"आप किधर चले भैया ?"

दासन को कमीज पहनते देख गिरिजा सामने आकर खड़ी हो गई। नहा-धोकर धुली हुई साड़ी और ब्लाउज पहने हुए वह—हमेशा की तरह साफ-सुथरी खड़ी थी। आज भी उसने वह रीति नहीं बदली नहीं।

"मुझे जाना है।"

"आज कहीं मत जाओ। कल जाना।"

उसने स्नेह के साथ अनुरोध किया।

"आज दिन-भर आप लेटकर सोइए। कल तक आंख भी ठीक हो जाएगी।"

"आराम करने का समय अभी आया नहीं है, बहन ! मैं जा रहा हूं। मां से कह देना।"

दोपहर की गर्मी में कौसू अम्मा सोई पड़ी थीं। दासन को वापस पा लेने की खुशी उनमें दिख रही थी। लेकिन उनकी आंखें तब भी गीली थीं—पराए देश में जेल में पड़े दासन के पिता के नाम पर आंसू।

दासन बाहर निकला।

"रात में आएंगे ?"

"कुछ कह नहीं सकता, गिरिजा !"

वह जल्दी-जल्दी चल दिया। सब जगह तिरंगे झंडे फहरा रहे थे। सड़क पर टोलियों में लोग चले जा रहे थे। बहुतों की आंखों में घबड़ाहट या डर समाया था। मय्यषी के लोगों के लिए अब भी कुछ स्पष्ट नहीं था। न जाने क्या-क्या हुआ

है, इतना ही उन्हें मालूम है।

दोपहर होते-हाते उण्णिनायर का ताड़ी का ठेका फिर खुल गया। पिछले दिन दंगा शुरू हो जाने पर ठेका बंद कर दिया था। कुञ्ञाणन, बैंड वाला कणारी वगैरह ने बड़े चाव से बैठकर पी। पिछले दिन पी नहीं पाये थे।

"मेरी समझ में तो कुछ आता नहीं।" मेज के पीछे बैठे उण्णिनायर के चेहरे पर घबड़ाहट है, "तुम्हारी समझ में कुछ आ रहा है क्या, कुञ्ञाणन ?"

"नहीं।"

मुंह की तरफ बढ़ाए गिलास को पकड़े कुञ्ञाणन ने सिर हिलाया। आज उसने अपनी पंसारी की दुकान खोली ही नहीं। मय्यषी की सारी की सारी दुकानें बंद पड़ी हैं।

कुञ्ञाणन ने अपने आपसे कहा, "न जाने, कौन-सी आफत आने वाली है।"

ठेके पर आ पहुंचे मेयर के दफ्तरवाले बालन ने कहा, "कोई भी आफ़त नहीं आएगी। हमें आज़ादी मिल गई। अब हम स्वयं शासन करेंगे।"

सभी की आंखें उसकी ओर जा लगीं।

"गोरे चले जाएंगे क्या ?"

"वे जाएंगे कहां, बालन ?" उण्णिनायर की समझ में नहीं आया, "उनका देश यही है न ?"

"नहीं, गोरों का देश समुद्र के उस पार है।"

बालन मुस्कराया। उण्णिनायर ने एक लंबी सांस ली। बालन की बात पर उसे भरोसा नहीं होता। उण्णिनायर ने जब से होश संभाला, तब से मय्यषी में गोरे हैं। उनका देश यही है। वे कहीं न जाएं। कहीं नहीं जाएंगे।

"मेरी एक ख्वाहिश है। मेरी आंखें मुंदने से पहले गोरे इस देश से नहीं जाएं।"

"आपकी ख्वाहिश पूरी नहीं होगी, उण्णिनायर। वे जाने वाले हैं। शायद आज ही..."

"तुम सही कह रहे हो बालन ?"

"बिल्कुल सही कह रहा हूं।"

उण्णिनायर के हाथ-पांव फूल गए। कुञ्ञाणन के गले से नीचे ताड़ी उतरी ही नहीं। सामने भरी बोतल रखे वह सोचता बैठा रहा।

ताड़ी के ठेके के सामने से वासूट्टी को आते देखा।

"वासूट्टी, ईश्वर तुम्हें माफ नहीं करेगा।"

उण्णिनायर ने भरे मन से शाप दिया। बालन के चेहरे पर एक बार फिर हंसी फैल गई।

"तब तो उण्णिनायर, दासन, वासूट्टी सबके सब नरक में जाएंगे, है न ?"

उण्णिनायर ने जवाब नहीं दिया।

"मैं और तुम नरक में चले भी जाएं तो भी वे नहीं जाएंगे। देश और देशवासियों के लिए जीवन को समर्पित करने वाले हैं वे।"

उसका भी जवाब किसी ने नहीं दिया।

उण्णिनायर के मन में केवल क्रोध और दुःख ही नहीं हैं, उसे डर भी है। दो दिन पहले तक आजादी की लड़ाई लड़ने वालों को कोई भी गाली दे सकता था। पुलिस वाले और गुंडे लोग भी थे। दंगा शुरू होते ही हालत बदल गई है। पुलिस वाले सब के सब बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले की शरण ले चुके हैं। गुंडे लोग कहां गायब हो गए, कुछ पता नहीं। दो दिन से अच्चू को किसी ने देखा तक नहीं।

दंगे वाले उसकी तलाश में हैं। सवेरे पप्पन और दूसरे दो नौजवान उण्णिनायर के ठेके में आकर उसे खोजकर चले गए थे।

"अबे अच्चू ! तू कहीं भी क्यों न छिपा रहे, बच नहीं सकता। मैं तेरी आंखें फोड़ डालूंगा। तभी मुझे नींद आएगी।"

लौटकर जाते समय उण्णिनायर को सुनाते हुए पप्पन ने कहा।

पप्पन वैसा करेगा भी, उण्णिनायर यह जानता है।

कुछ भी कर गुजरने में हिचकिचाता नहीं। कोम्मीसार के छुरी भोंकने वाला है न ?

कुञ्ञाणन और कुञ्चक्कन पी चुके थे। वे एक साथ बाहर निकले। सीढ़ी कंधे पर रखे, तेल का पीपा हाथ में लिए कुञ्चक्कन लंगड़ाता हुआ चला।

कुञ्ञाणन रियूद लागार से यों ही चला। सड़कों पर लोग चलने-फिरने लगे हैं। घरों के बंद दरवाजे सब के सब खुल गए हैं। घबराहट, डर, उत्कंठा—ऐसे अनेक विकारों के साथ मय्यषी के लोग बाहर निकले।...वासूट्टी का मन भारी था। मय्यषी के विमोचन ने वासूट्टी को सहज ही खुश कर दिया था। उस आनंद के साथ वासूट्टी अपने घर की ओर चल दिया था। वहां पहुंचने के बाद वह अस्वस्थ हो गया।

बरामदे में कोई नहीं था। चूने के निशान सूखे पड़े दरवाजे बंद पड़े हैं। वासूट्टी ने दरवाजा धक्का देकर खोला।

अंदर चटाई पर बैठे-बैठे कुछ कहकर हंसने वाले सौमिनी और कोम्मी पुरुषू जरा चौंके। कल्लू अम्मा चौके की देहरी पर बैठी थीं।

वासूट्टी को देखते ही तीनों लोग हक्के-बक्के रह गए।

"अबे, तू यहां क्या कर रहा है ?"

काबू से बाहर हो जाने से आवाज ऊंची हो गई।

उसे सब कुछ मालूम है। मय्यषी के बाहर से उसने जो कुछ बातें सुनी थीं, वे सब उसकी आंखों के सामने हैं।...

"तू आ गया बेटे ?"

कल्लू अम्मा हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई। वे बिना धुली मारकीन कंधे पर डाले हैं। कितने ही सालों के पहले कुञ्ञिम्मूसा हाजी के पास गिरवी रखे कनफूल कानों में पहने हैं।

सौमिनी की पोशाक भी कोई बुरी नहीं है। हाल में ही खरीदी हुई सूती साड़ी पहने है।

"मेरा यहां आना तुममें से किसी को अच्छा नहीं लगा न ?"

अपने आपको काबू में करने की कोशिश की। दीवाल से सटी पड़ी बेंच पर बैठ गया।

भार ढोने वाला पोक्कनच्चन इसी पुरानी बेंच पर पड़ा-पड़ा मरा था।

"मैं जा रहा हूं..."

रंगे हाथों पकड़े गए चोर की भांति पुरुषू उठकर चला गया।

उसका क्या कसूर ? कसूर निकालना हो तो पुरुषू का ही काफी नहीं। उसी की तरह इस चटाई पर बैठने वाले और लोग भी होंगे न ?

"सौमिनी, तू ऐसा करेगी, यह मैंने सोचा नहीं था..."

वह सिर झुकाए बैठी रही। गाल फुलाए थी।

"देश के लिए कुर्बानी करने वाले एक शख्स की बहिन है तू। कम-से-कम तुझे इतना ख्याल तो रखना चाहिए था।"

"कसूर निकाल ले रे, निकाल ले। बच्चे भूख के मारे रो रहे थे। लाज बचाने के लिए कपड़े नहीं थे। बीमार पड़ते समय एक घूंट काढ़ा खरीदकर पीने का कोई चारा नहीं था। तब तू कहां था ? अब आ धमका है कसूर निकालने को..."

वासूट्टी चुपचाप सुनता रहा। गलती किसकी है ? सौमिनी के ऐसी हो जाने में उसकी भी जिम्मेदारी है न ?

मां और भाई बहनों की भूख मिटाने के लिए खाना देने की जिम्मेदारी उसकी ही थी। लाज ढंकने के लिए कपड़े खरीदकर देने की जिम्मेदारी उसकी ही थी। उसने वह नहीं निभाई।...

वह बैठक में टहलता रहा। अंदर सौमिनी का बैठे-बैठे रोना सुनाई पड़ रहा था। वासूट्टी को घृणा हुई।—अपने और अपने परिवार से ही नहीं। नीले आसमान के नीचे फहराने वाले तिरंगे झंडों से भी।

उसने स्नान किया। खाने के लिए भात ही था। इस छत के नीचे बैठकर खाना खाने वाले दिन भूल ही चुका है। सरकारी नौकरी से इस्तीफा देने के बाद पहली बार उसने अपने घर में बैठकर मुट्ठी भर खाना खाया।

खा चुकने के बाद उसे लगा कि यह भात उसे खाना चाहिए था क्या ?

"सौमिनी, जो हो गया सो हो गया। आगे से गलती न करना ही काफी है।"

वह सिर झुकाए सुनती रही।

"तू खाने के लिए कुछ कमाकर ला। वह कोई भी गलती नहीं करेगी।"

"अब मैं तुम लोगों को परेशान नहीं करूंगा, मांजी !"

देश के लिए उसने जो कुछ किया है, वह व्यर्थ नहीं हुआ। दो या तीन दिन और। फिर गोरे लोग बिस्तर बांधकर चले जाएंगे। देश के प्रति उसका कर्तव्य समाप्त होने वाला है। तब वह अपने परिवार की जिम्मेदारी निभा सकेगा।...

तसल्ली से वासूट्टी लेटकर सो गया।

बड़े फ्रांसीसी साहब का बंगला प्रलयकाल के नोहा की नौका की तरह था। गोरे लोग, पुलिस वाले, गुंडे और उनका साथ देने वाले मय्यषी के लोग भी वहां शरणार्थी थे।

बंगले के सामने पातार समुद्र-तट पर लोगों की भारी भीड़ जमा थी।—दंगे वाले और उनके सहयोगी।

बंगले के अंदर खिड़की के पास हाथ में दूरबीन लिए समुद्र पर आंखें टिकाए खड़े हैं, बड़े फ्रांसीसी साहब।

"बंगले पर घेरा डालना है।"

पप्पन ने जोशीले शब्दों में कहा।

"बंगले पर जाते समय सावधान रहना है।" वासूट्टी ने चेताया, "पुलिस वालों ने अब तक गोली नहीं चलाई सो तो सही है। लेकिन उनके हाथों में बंदूक है, यह याद रखना।"

"बंदूक से डरने का जमाना लद गया, रे !"

"हां, चाहें तो वे अब भी गोली चला सकते हैं।"

"तो फिर हमसे क्या करने को कह रहे हो तुम ?"

"वही तो हमें सोच-विचारकर तय करना है।"

चर्चाएं और सोच-विचार चलते रहे। शासन-चक्र स्तब्ध पड़ा था। स्कूल और दफ्तर सब बंद पड़े हैं। बड़े फ्रांसीसी साहब और अनुयायी अब भी बंगले पर ही हैं। अब भी मय्यषी के ऊपर तिरंगे झंडे निरंतर फहरा रहे हैं।

"वे तुम लोगों को भून डालेंगे।"

कणारन दादा और दासन चर्चा के लिए जब बंगले पर जाने लगे तो वासूट्टी को डर लगा। वे बंगले से कभी भी वापस नहीं आएंगे, ऐसा भी उसे डर हुआ।

दासन और कणारन दादा फाटक से अंदर गए। वहां पहरेदार नहीं थे। फाटक से बंगले तक का रास्ता बिना रोक-टोक के खुला पड़ा है। समुद्री हवा में पुलिस वालों के बूटों के निशान मिट गए थे। वे आगे बढ़े।

सेवक उन्हें अंदर ले गया।

एक बार फिर दासन बड़े फ्रांसीसी साहब के अतिथि-कक्ष में हैं।

समुद्री हवा याद दिला रही है :

लेत्तास रेष्रूयूइद तोम स्युक्से। (तुम्हारी सफलता पर राज्य खुशी प्रकट कर रहा है।)

लेत्ता दसोर्मे सोक्यूप दूत्वा। (आज से राज्य तुम्हारे विषय में पूरा-पूरा ध्यान देगा...)

दासन के चेहरे पर अनजाने ही एक हंसी फैल गई। जमाना बीत चुका है। वह पुराना दासन नहीं है यह। एक राज्य की तकदीर का भार ढोनेवाली गाड़ी का बैल है यह। आंख की सूजन अभी भी गई नहीं। बदन के घाव अभी भी भरे नहीं। पिता की चिंता में खून बहाने वाला मन...

पैरों की आहट सुनकर वह चौंककर जाग उठा। मेयर रामन वकील रोज की तरह बिना शिकन पड़ा कोट-पतलून पहने थे। गले में 'बो' बांधे हैं। मेयर के पीछे सेक्रत्तेर करुणन भी। वह भी वैसी ही पोशाक में।

"वेने मोसिये।"

"आइए महाशय !"

कालीन बिछी सीढ़ियों पर से ऊपर गए। कणारन की छाती धड़कने लगी। वे चाहें तो उनका कुछ भी कर सकते हैं। पकड़कर जेल में बंद कर सकते हैं। जान से मारकर नीचे गरजने वाले समुद्र में फेंक सकते हैं...

मनोविकारों को काबू में रखकर, कालीन पर चलते हुए वे आगे बढ़े। पीछे-पीछे मेयर रामन वकील और सेक्रत्तेर करुणन। परदे दोनों ओर हटाए जा रहे थे।

आखिर वे बड़े फ्रांसीसी साहब के सामने जा पहुंचे। वे पीठ पीछे किए धूप देख रहे थे। शीशे की खिड़कियों के नीचे गरजने वाला समुद्र। बहुत दूर तक साफ दिखने वाला क्षितिज। बड़े फ्रांसीसी साहब के हाथ में दूरबीन थी।

दासन और कणारन् के आ खड़े होने पर भी बड़े फ्रांसीसी साहब ने मुंह मोड़ा नहीं।

खिड़की के पास पीठ दिए खड़े-खड़े ही बड़े फ्रांसीसी साहब ने पूछा–

"तुम लोग चाहते क्या हो ?"

"आज़ादी।"

दासन ने कहा। तब भी बड़े फ्रांसीसी साहब ने मुंह नहीं मोड़ा। शीशे की खिड़कियों के उस पार ऊंची-ऊंची तरंगें उठ रही थीं।

"आजादी ?"

"हां।"

बड़े फ्रांसीसी साहब ने खिड़कियां खोल दीं। चेहरा दिखाए बिना बाहर समुद्र की ओर संकेत करते हुए बड़े फ्रांसीसी साहब ने कहा–

"देखो दोस्तो।"

उन्होंने देखा। क्षितिज पर साफ-साफ दिखने वाले जंगी जहाज। जहाज मय्यषी

के बंदरगाह को लक्ष्य बनाए आ रहे हैं।

कणारन दादा और दासन कील गढ़े जैसे खड़े के खड़े रह गए। उनकी पैर की उंगलियों से सुन्नापा ऊपर चढ़ने लगा। वे अंधे और बहरे हो गए। कितनी देर वैसे खड़े रहे, कुछ पता नहीं। मेयर रामन वकील और सेक्रत्तेर करुणन के अट्टहास ने उन्हें जगा दिया।

एक सपने जैसे वे वापस चल पड़े। परदे हटा दिए गए। लंबी पगडंडी से चलकर फाटक पार करके वे बाहर आए।

"जंगी जहाज—"

"जंगी जहाज आ रहे हैं—"

बाहर खड़े लोगों ने जोर से चिल्लाकर कहा। घबड़ाकर वे चारों ओर भाग निकले।

पल-भर में समुद्र-तट निर्जन हो गया। केवल नेता लोग ही बाकी रह गए। समुद्र से जंगी जहाजों की बिगुल बजने लगी। अब तक मय्यषी के ऊपर निरंतर फरहाने वाले तिरंगे झंडे कांपने लगे।

जाग उठे मय्यषी के लोगों को कुचल डालने के लिए, उनके पैरों में फिर से गुलामी की जंजीर पहना देने के लिए जंगी जहाज आ रहे हैं, देखो।

"बड़े फ्रांसीसी साहब के हाथ में वायरलेस है, हमने उस पर ध्यान नहीं दिया, कणारन दादा !"

अपने को काबू में करने की कोशिश में दासन ने एक बीड़ी सुलगाई। उसने धोती उचकाकर बांध ली।

कणारन दादा मलेरिया लगने जैसे खड़े-खड़े थरथर कांपने लगे। उनके कानों में दस हजार जंगी जहाजों की बिगुल। वे सड़क के किनारे बैठ गए।

"चलें, कणारन दादा !"

"किधर, बेटे ?"

कणारन दादा का स्वर दयनीय था।

"मय्यषी के बाहर। जंगी जहाजों को भी मुंहकी खिलाने वाली जनक्रांति की तैयारी के लिए।"

"मैं नहीं आता। मैं यहीं पड़ा-पड़ा मर जाऊंगा।"

मय्यषी का आलिंगन करते हुए कणारन दादा मिट्टी पर छाती के बल लेट गए। दुबले-पतले हाथों को पसारकर पड़े-पड़े वे रोने लगे। वे मय्यषी नहीं छोड़ेंगे। जंगी जहाज उनके हाथों से मय्यषी छीन नहीं पाएंगे—एक नहीं, हजारों जंगी जहाज भी।

"उठिए, कणारन दादा !"

"मैं नहीं जाता।"

कणारन दादा के दुबले-पतले हाथों ने मय्यषी को कस लिया। अपनी मां की तरह अपनी जन्मभूमि को छाती से लगा लिया। वे हांफने लगे। खून जैसे गर्म आंसू आंखों से बह निकले।

कणारन दादा को वहां से उठाने में दासन को परेशान होना पड़ा। आखिर वे उठकर भीगी आंखों से दासन के साथ चल दिए। छह दिन तक मय्यषी के ऊपर प्रज्वलित रहने वाला स्वातंत्र्य सूर्य अस्तमित हो रहा है। यहां फिर से पुलिस वाले और गुंडे घूमने-फिरने लगेंगे। यहां फिर से शराब और खून एक साथ बहेंगे।

वे रियूद लग्लीस की ओर बढ़े। दोनों खामोश थे। कणारन दादा की आंखें तब भी गीली थीं। दासन ने विचलित होने से बचने की कोशिश की। धोती उचकाकर बांधे वह मजबूत कदमों से आगे बढ़ा।

जंगी जहाज पास आते जा रहे हैं। बिगुलों की आवाज तेज होती जा रही है।

अचानक गिरजाघर से घंटे एक साथ बज उठे—खतरे को सूचित करने वाला घंटानाद। घंटे का शब्द मय्यषी के ऊपर एक रुलाई जैसा फैल गया।

"जंगी जहाज आ रहे हैं। बस्तीवासियो, भाग निकलो।"

रियूद लग्लीस से लोग पूरब में मय्यषी की सीमा की ओर भाग रहे थे। दुकानें बंद हो गईं। चारों तरफ कोलाहल !

अब यहां रुका नहीं जा सकता। पुलिस और गुंडे अब सड़क पर आ धमकेंगे। गोरों की फौज अभी बंदरगाह पर उतरेगी। अभी तक उन लोगों ने गोली नहीं चलायी। बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर गए तो वहां वे पकड़ सकते थे। उन लोगों ने वैसा नहीं किया। लेकिन अब आगे मय्यषी में ठहरना खतरे से खाली नहीं है—दासन को लगा। यहां से बच निकलना है। एक बार फिर पलायन।

गिरजाघर के सामने पहुंचने पर दासन ने देखा—लगातार बजने वाले घंटे को देखता पप्पन खड़ा है। आगे और पीछे झूलने वाले कांसे के बड़े-बड़े घंटे। वे आवाज का तूफान छोड़ रहे हैं।

"पप्पन !..."

"मैं तुम लोगों का इंतजार करता खड़ा हूं।"

"वासूट्टी कहां है ?"

"वह बच निकला।"

अचानक दासन को याद आया—बीमार पड़ी मां, गिरिजा और दादी। फौज के उतरते समय, लोगों के एक साथ पलायन करने के इस अवसर पर उन्हें किसके हाथ सौंपकर वह जा रहा है ? दासन का सिर चकराने लगा।

"पप्पन, तुम कणारन दादा को साथ लेकर जल्दी जाओ।"

"और तुम ?"

"मैं जरा घर होकर आता हूं। मां बीमार हैं। तुझे वह मालूम है न ?"

पप्पन हिचकिचाता खड़ा रहा।

"जाओ..."

रियूद रसिदाम्स से होकर पुलिस वालों की एक टोली को आते देखा। वे बाहर निकल आए हैं। उनके पीछे-पीछे गुंडे भी निकल पड़ेंगे।

"तुम्हें छोड़कर हम कैसे जाएं ?"

"मैं कोई बच्चा नहीं हूं।"

बहस करते खड़े रहने का समय नहीं। पप्पन कणारन दादा को साथ लेकर जल्दी-जल्दी चल दिया—मय्यषी की सीमा के उस पार।

"बस्तीवासियो, गोरों की फौज आ रही है। मय्यषी से भाग निकलो, बस्तीवासियो !..."

किसी की आवाज दासन के कानों में पड़ी और भाग निकलने वालों की पदचाप भी।

समुद्रों को पार करके आने वाली गोरों की फौज कुछ भी कर सकती है। उनके विरोध में सिर उठाने वाले मय्यषी के लोगों को भस्म कर सकती है। मय्यषी में खून की नदी बह सकती है।

"वे बम बरसाएंगे, कुरम्बी !"

कंधे पर गठरी रखे भागने वाले उण्णिनायर ने पुकारकर कहा। पीछे-पीछे कुञ्ञाणन, कुञ्चक्कन और उनका परिवार। जो कुछ हाथ लगा, उसे गठरी में बांधकर जान बचाने के लिए वे भाग रहे हैं।

कुरम्बी अम्मा बैठक में हक्की-बक्की खड़ी हैं। घंटे तब भी लगातार बजते जा रहे थे।

धीरे-धीरे टोलियां बनाकर लोग प्रयाण करने लगे। नहाने वाले पानी पोंछे बिना कपड़े लपेटकर भाग पड़े। अस्पताल से बीमार बाहर निकलकर भाग पड़े। मय्यषी नदी के ऊपर वाले पुल से होकर मय्यषी के लोग प्रवाह जैसे बह निकले। ऊंची आवाज में रोने वाले बच्चे, लड़खड़ाकर चलने वाले बूढ़े लोग, कंधों पर ले जाए जाने वाले बीमार लोग...जान बचाने के प्रयाण में वे धन-संपत्ति और जायदाद पीछे छोड़ आए थे।

जंगी जहाजों से उठने वाला धुआं एक विस्फोट जैसे मय्यषी के ऊपर फैल गया।

दासन अहाते में घुसा। इस बीच एक निश्चय कर चुका था। मां वगैरह को साथ ले जाए। किधर, यह उसे पता नहीं। मय्यषी से बाहर...यही उसे पता है।

"चलो, चलें मांजी !"

उसने मां को चारपाई से पकड़कर उठा लिया। किंकर्तव्यविमूढ़-सी गिरिजा

आंखों में आंसू भरे खड़ी है।

"गोरे लोग बम बरसाएंगे क्या ?"

"पता नहीं। बातें करते खड़े रहने का समय नहीं है। गिरिजा, आ चलें।"

"किधर भैया ?"

"वे जिधर जा रहे हैं, उधर।"

दासन ने सड़क की ओर इशारा किया। सड़क से तब भी मय्यषी के लोग भागते चले जा रहे थे—बूढ़े, बच्चे, स्त्रियां, बीमार...

"नहीं, वे बम नहीं गिराएंगे।" कुरम्बी अम्मा ने जैसे अपने आपसे कहा। "गोरे लोग भले होते हैं।"

जंगी जहाज़ों के मय्यषी आ धमकने पर भी उनका गोरों के प्रति आराधना-भाव समाप्त नहीं हुआ था।

कोई भी सामान साथ नहीं लिया। जान बड़ी है। मां को थामे दासन अहाते की ओर चला। पीछे-पीछे गिरिजा और कुरम्बी अम्मा। पास-पड़ोस के लोग इस बीच जा चुके थे। अचानक दासन ने देखा—सड़क पर ठीक सामने अच्चू खड़ा है। दूसरी एक अग्नि-परीक्षा है क्या ?

"जहाजों ने लंगर डाल दिए हैं।" अच्चू ने कहा, "गोरों की फौज समुद्र-तट पर उतर आई है।"

"हट जा। मुझे छुआ तो मैं तुझे जान से मार डालूंगा।"

अच्चू हंस पड़ा, "अब तुम यहां मत रुको, दासन ! जान बचानी हो तो जल्दी भाग निकलो। ज़रा-सी भी देर हुई तो मैं भी तुम्हें बचा नहीं पाऊंगा।"

दासन ने उसके चेहरे पर अचंभे से देखा। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया।

"तुम्हें विश्वास नहीं आता क्या ?"

अच्चू के हाथ में रोज की तरह कटारी नहीं थी। उसने दुबारा कहा, "जान बचानी हो तो भाग निकलो। तुम्हारी मां और बहिन को मैं बचा लूंगा।"

"तुम पर मैं कैसे विश्वास करूं।"

"रे, चाहूं तो मैं तुम्हें पकड़कर अभी फौज के सुपुर्द कर सकता हूं। तुम्हें जान से मार सकता हूं। कोई भी मुझसे पूछने वाला नहीं है।"

अच्चू फिर एक बार हंसा।

दासन की समझ में कुछ भी नहीं आया। यह कोई सपना है क्या ? जंगी जहाज, पलायन, सामने निहत्था खड़ा अच्चू...ये सब सच है क्या ? या उस पर पागलपन सवार हो गया है ? हां, उस पर पागलपन ही सवार है। मां, मुझ पर पागलपन सवार हो रहा है।...

मुझे बचाओ।

घंटों का बजना बंद हो गया।

रियूद लग्लीस से होकर गोरों की फौज मार्च करती आ पहुंची। गहरे नीले रंग की वर्दी पहने लाल कमल की तरह लाल-लाल गोरे लोग। चिलचिलाती धूप में उनके हाथों की बंदूकें चमचमा उठीं।

"अच्चू, मैं तुम पर भरोसा करता हूं। धोखा दिया तो ईश्वर माफ नहीं करेगा।"

अच्चू ने दासन को पकड़कर धक्का दिया। भूलभुलैया में पड़े जैसा, एक पागल की तरह लड़खड़ाते पैरों से दासन चल पड़ा। पीछे से गिरिजा और मां की चीख-पुकार।

मय्यषी में आ धमके गोरों की फौज ने दंगे वालों को नहीं देखा। मरघट जैसी सुनसान पड़ी मय्यषी ने ही उनका स्वागत किया। हथियारबंद फौज के सिपाहियों ने निर्जन पड़ी सड़कों से मार्च किया। मेयर के दफ्तर और पले द षियूस्तीस के ऊपर फहराने वाले तिरंगे झंडे उन्होंने हटा दिए।

दूसरे दिन फौज के सिपाही हथियार लिए बिना सड़कों पर घूमने-फिरने लगे। मोर के पंखों जैसे पत्तों से नाचने वाले नारियल के पेड़। लाल पंखों से उड़ने वाली चिड़ियां। घंटियां बजाकर चरने वाली बकरियां। उण्णिनायर के द्वारा छोड़े गए ठेके में घुसकर बासी ताड़ी छककर पी। नारियल की ताड़ी के नशे में आंखों में अचंभा भरे वे मय्यषी की प्राकृतिक सुंदरता का मजा लूटते घूमे-फिरे। उन्होंने बछड़ों को दुलारा।...उनके पीछे उछल-कूद की। मय्यषी नदी में तैरते रहे।

बड़े फ्रांसीसी साहब ने एक आदेश निकाला। गोरों की फौज प्रजा को सताने नहीं आई है। उन्हें दंगे वालों से बचाने के लिए है। दंगे वालों के अलावा और किसी को दंड नहीं दिया जाएगा।

बड़े फ्रांसीसी साहब ने अपनी प्रजा से मय्यषी में वापस आने की मांग की।

लेकिन कोई भी वापस नहीं आया। फौजी जहाज अब भी बंदरगाह पर लंगर डाले पड़े हैं। गोरों की फौजें अब भी सड़क पर घूम-फिर रही हैं। वे कैसे वापस आएंगे ?

कुछ दिन बीत गए। सड़कें निर्जन पड़ी रहीं। घर बंद पड़े रहे। अनाथ घरेलू जानवर भूखों मरने लगे। वे चारे की खोज में सड़कों पर रेंकते हुए चक्कर लगाने लगे। मुर्गियां भूखों मर गईं। जीवित मुर्गियों को सियार खा गए। सूने पड़े घरों में गीदड़ आजादी से घूमने लगे।

सूरज मय्यषी नदी के ऊपर चढ़ आया। खिला हुआ प्रभात। गोरे सिपाही ताड़ी के नशे में धूप का मजा ले रहे थे। उसी समय पुल के दूसरे छोर पर पीलपांव घसीटता हुआ अन्तोणी आते दिखा। बड़े फ्रांसीसी साहब का आह्वान सुनकर पितृभूमि की ओर वापस आने वाली पहली प्रजा।

यह देखकर सिपाही आनंद से झूम उठे। उन्होंने किलकारियां भरीं। पुल पार करके मय्यषी की मिट्टी पर पैर धरने वाले पीलपांव वाले को उन्होंने छाती से लगा लिया।...

अन्तोणी के पीछे-पीछे दूसरे लोग भी आने लगे। कंधे पर गठरी लादे लंगड़ाता हुआ कुञ्चक्कन आ पहुंचा। बढ़ई रामन आया। लाठी टेकते बूढ़े लोग। मां-बाप की उंगली पकड़े बच्चे। इसी तरह अकेले और टोलियों में मय्यषी के लोग वापस आ गए।

उन्होंने गोरे सिपाहियों को कच्चे नारियल का पानी पिलाया। खीर बनाकर खिलाई। मय्यषी के लोगों ने गोरे सिपाहियों का सत्कार किया।

रियूद रसिदाम्स, रियूद लग्लीस वगैरह सब फिर से सक्रिय हो गईं। ताड़ी के ठेकों पर फिर से ताड़ी बहने लगी।...

तब गोरों की फौज के वापस जाने का समय आ गया। उन्हें विदाई देने के लिए मय्यषी के लोग बंदरगाह पर जमा हुए। लंगर उठा दिए गए। जंगी जहाज क्षितिज को लक्ष्य बनाकर आगे बढ़े। जहाज दूर होते-होते खाड़ी में गायब हो गए।

चौबीस

बैंड वाले कणारी की सोलह साल से कम उम्र वाली बेटी देवकी गर्भवती हो गई।

"सो कैसे ? कैसे उसकी शादी तो हुई नहीं।"

कुरम्बी अम्मा ने अच्चू से पूछा। हाथी-दांत वाली डिबिया से चुटकी भर सुंघनी उन्होंने सूंघ ली।

"कलियुग है न ?"

अच्चू कुरम्बी अम्मा के पास चटाई पर बैठा था। आण्डलूर के मंदिर के मेले से वह चटाई अच्चू खरीदकर लाया था।

"चुटकी भर मुझे भी दो।"

कुरम्बी अम्मा ने डिबिया अच्चू को दे दी। आजकल सुंघनी सूंघने की आदत उसे भी पड़ गई है। कुरम्बी अम्मा ने उसे यह सिखाया है। वैसे उन दोनों में एक नया रिश्ता कायम हो गया—सुंघनी सूंघने वाले दो लोगों का रिश्ता।

"तुम्हारी समझ में कौन है इसका उत्तरदायी ?"

"ब्रिगादिए नहीं तो और कौन ?"

"उसके लिए मां काफी है न, बेटी भी चाहिए ?"

वे जोर से हंसे। कानों में पड़े कनफूल झूलने लगे। अच्चू का चेहरा रक्त-कमल की तरह लाल हो गया। जरा-सा हंसते ही उसका चेहरा खून जैसा हो जाता है।

"अच्चू, मैं एक बात पूछूं तो तुम बताओगे।"

"आपको नहीं तो और किसको बताऊंगा, कुरम्बी अम्मा ?"

"उस ब्रिगादिए की औरत और बच्चे हैं पांडुचेरी में ?"

"हैं।" अच्चू ने कहा, "औरत अलमेलु और चार बच्चे भी—कामाच्ची, चित्रम्मू, अरिकेसवन और मतनकोपालन।"

कुरम्बी अम्मा ने दांतों तले उंगली दबा ली।

"कुछ भी हो, उस नाणी और उसकी बेटी की तकदीर ?"

नाणी और देवकी अब चेट्टियप्पा के साथ रहती हैं। पुराने घर में कणारी अकेला है। वह पहले से भी अधिक खुश है अब। रोज सवेरे उस दिन की ताड़ी

का पैसा चेट्टियप्पा पहुंचा देता है। इससे अधिक उस कणारी को और क्या चाहिए ? उसने काम पर जाना बिल्कुल ही छोड़ दिया। पूरा दिन उण्णिनायर के ठेके पर बिताता। रात में घर वापस आकर तुरही बजाता रहता—काम पर न जाने पर भी। वैसे आधी रात को मय्यषी के लोग आज भी उस तुरही की आवाज सुना करते हैं।

दावीद साहब चेट्टियप्पा के जैसे नहीं हैं। कुञ्ञिचिरुता के लिए एक मकान बनवा देने और उससे एक पुत्र पैदा करने पर भी उसके साथ कभी भी किसी ने दावीद साहब को नहीं देखा है। उसके लिए बनवाए गए घर में उन्होंने कभी भी पैर नहीं रखा है। कुञ्ञिचिरुता और दावीद साहब का रिश्ता सिर्फ रातभर का है। आज भी कुञ्ञिचिरुता शाम ढलते ही नहा-धोकर, अच्छी-खासी धोती पहनकर आंखों में सुरमा लगाकर, बाल संवारकर और उनमें फूल खोंसकर दावीद साहब के बंगले की ओर चल पड़ती। जवानी ढल जाने पर भी उसका रंग तपे सोने जैसा है। एक भी बाल पका नहीं है।

"कुञ्ञिचिरुता हमेशा सोलह साल की लगती है।"

कुरम्बी अम्मा वैसे ही कहा करती हैं।

कुरम्बी अम्मा और अच्चू इस तरह गांव वालों के बारे में बातचीत करते रहे। दोपहरी ढल गई। तब गिरिजा देहरी पर आकर खड़ी हो गई। सिर झुकाए और हाथ के नाखूनों को दरवाजे पर गड़ाए उसने जताया—

"शाम के लिए चावल नहीं है।"

"और कुछ चाहिए ?"

"मां के लिए थोड़ा टर्पेण्टाइन।"

अच्चू चटाई पर से उठा। खिड़की पर रखी कटारी लिए बाहर निकला—चावल और टर्पेण्टाइन खरीदने के लिए।

मुंशीजी के घर का सारा खर्चा आजकल वही चला रहा है। वह नहीं होता तो मुंशीजी के परिवार को भीख मांगनी पड़ती न ? भूखों मरना पड़ता न ?

कड़ी धूप वाली भरी दोपहरी में मुंशीजी गाड़ी से उतरकर आए। उनमें बहुत ज्यादा परिवर्तन हो गया था। दो साल जेल में रहने के बाद शरीर इतना दुबला-पतला हो गया था कि पहचान में नहीं आता था। विषहीन सांप जैसे रंग वाला सूजा हुआ चेहरा। दोनों हाथों में हथकड़ियों के निशान दिखते थे। बाल छोटे-छोटे थे।

रास्ते में बहुतों ने मुंशीजी से कुशल समाचार पूछे। लेकिन वे एक लफ्ज तक नहीं बोले। धूप से बचने के लिए कंधे का तौलिया सिर पर डाले वे जल्दी-जल्दी घर की ओर चल पड़े।

जेल जाने के बाद बस्ती और घर में क्या-क्या घटा, मुंशीजी को कुछ भी

पता नहीं था। अचरज की बात तो यह कि उन्हें जानने की कोई चाह भी नहीं थी। मन में गुस्सा और नफरत भरी पड़ी है। नफरत न केवल दूसरों से बल्कि मुंशीजी को अपने आपसे भी थी।

"अरे, मुंशीजी ?"

उण्णिनायर ठेके से बाहर आया। वह कौतूहल से मुंशीजी को देखता खड़ा रहा।

"तो कब आ पहुंचे ?"

"अभी चला आ रहा हूं।"

"एक गिलास चढ़ाकर जाओ।"

उण्णिनायर ने न्योता दिया। पांडुचेरी से सीधे आ रहे हैं न ? हालचाल पूछ सकते हैं।

मुंशीजी जरा हिचकिचाए। फिर भीतर गए।

उण्णिनायर ने एक गिलास ताड़ी लाकर सामने रख दी। खाने के लिए एक पत्ते में चाट भी।

"मार तो खूब खानी पड़ी होगी ?"

मुंशीजी ने जरा हामी भरी। सिर झुकाकर गिलास लेकर जरा-सी पी। पीते बैठे कुञ्जाणन, पुलिस वाला कण्णन वगैरह खिसककर उनके पास बैठ गए। उन्हें मुंशीजी से बहुत कुछ सुनना है। मुंशीजी से कहना भी है।

"तुमको पता चला होगा कि तुम्हारे बेटे को बारह साल की सजा दी गई है।"

उण्णिनायर पास आकर खड़ा हो गया। मुंशीजी जरा चौंक पड़े। लेकिन वह बाहर प्रकट नहीं किया। शांत होकर जरा-सी हुंकारी भरी।

"तुम कुछ बोलते क्यों नहीं ?"

"वह जेल में है ?"

"सो कैसे ? जहाज के आने से पहले ही वह बच निकला था न ?"

कौन-सा जहाज ? किसका जहाज आया था ? मुंशीजी ने गिलास लेकर एक घूंट पी ली। चाट उसने हाथ से छुई तक नहीं।

"वह पोर्टर कुञ्जामन है न, उसके घर में ही तुम्हारा बेटा रह रहा है।"

उण्णिनायर ने सब कुछ विस्तार से बता दिया। एक लफ्ज तक बोले बिना मुंशीजी सब कुछ सुनते रहे।

"तुम्हारा बेटा समझदार है। लेकिन उसे यह खिलवाड़ गोरों से करनी थी क्या ? बारह साल की सजा हुई है—एक-दो नहीं, बारह साल। बड़े फ्रांसीसी साहब और गोरों से खिलवाड़ करने पर वैसा ही होगा।"

उण्णिनायर को अपनी खोई हुई शक्ति दुबारा मिल गई।

"वे पराक्रमी थे। मेयर का दफ्तर और पुलिस स्टेशन को कब्जे में कर लिया था न ? लेकिन जहाज आते ही वे सिर पर पांव रखकर भाग गए ? कायर कहीं के..."

मुंशीजी ने गिलास नीचे रख दिया। वह भाग गया था।

"तुम बुरा मत मानना। तुम्हारे बेटे के बारे में नहीं, सभी के बारे में कह रहा हूं", उण्णिनायर ने नरमी से कहा। मुंशीजी फिर वहां नहीं ठहरे। वे उठकर बाहर निकले। पीछे-पीछे उण्णिनायर भी।

"जो हुआ सो हुआ।" उण्णिनायर ने कहा, "कम-से-कम अब तो अपने बेटे को समझा-बुझा दो। गोरों से माफी मांगने को कहो। कष्ट झेलने वालों पर दया दिखाने वाले हैं गोरे लोग। वे तुम्हारे बेटे को माफ कर देंगे।"

"उण्णिनायर ...!" मुंशीजी सहसा मुड़कर खड़े हो गए, "दासन के बारे में तुम मुझसे एक लफ्ज तक मत कहो।"

किसी गर्भिणी की तरह सूजा हुआ मुंशीजी का चेहरा लाल पड़ गया। उनकी आंखें सिमट गईं।

"सो क्यों मुंशीजी ?"

"वह मेरा बेटा नहीं।"

मुंशीजी सड़क पर उतरकर सीधे चलते बने। दोपहर की धूप के पसीने में उनके सफेद बाल चांद पर चिपट गए थे।

"उसकी तकदीर। जेल में जाने के लिए उसने कौन-सा जुल्म किया। लाल आंख वाले गोरे पर छुरी भोंकने वाला दूसरा कोई, जेल में गए मुंशीजी। इस राज्य में नीति और न्याय मिट गया सा लगता है।"

कुञ्ञाणन ने मानो अपने आपसे कहा। जेल में केवल मुंशीजी ही नहीं गए थे। आजादी की लड़ाई से संबंधित और भी बहुत सारे लोग थे। उनमें से कुछेक लौट आए हैं। कुछेक अब आने वाले हैं।

धूप में मुंशीजी झुककर चले। बिल्कुल ताकत नहीं। कहीं जाकर जरा पीठ सीधी करनी है। किसी तरह घर पहुंच पाता तो...

अहाते में घुसते ही उसने देखा कि जिस आरामकुर्सी पर वह लेटा करता था, उस पर धुआं उड़ाते, पैर पसारे अच्चू लेटा है। मुंशीजी का कलेजा उछलने लगा। कुर्सी के पास फर्श पर दीवाल के सहारे बैठी कुरम्बी अम्मा सुंघनी सूंघ रही थी।

मुंशीजी को देखते ही अच्चू उछलकर उठ खड़ा हुआ। उसने अधजली सिगरेट दूर फेंक दी। मुंशीजी को हाथ पकड़कर बैठक में लिवा लाया।

अच्चू के सान्निध्य से मुंशीजी का मन बौखला गया। वे खड़े-खड़े हांफने लगे। वे डर गए।

बेटे की हालत देखकर कुरम्बी अम्मा का कलेजा मुंह तक आ गया। एकबारगी

देखने पर उनसे अधिक उम्र का लगेगा। वे टकटकी लगाए बेटे को देखती रहीं।

"गिरिजा, पिताजी को जरा चाय बनाकर पिला।"

अच्चू ने मुंशीजी को पकड़कर आरामकुर्सी पर लिटा दिया। आंखें पोंछती हुई गिरिजा चौके में चली गई। उसे तसल्ली हुई—पिताजी आ तो गए। पिता और भाई के बिना उसे यह घर डराता था। कितनी ही रातों में डर के मारे वह पलक तक नहीं झपका सकी। अच्चू द्वारा लाया गया चावल पकाते-खाते उसका मन ऊब गया है।

चाय बनाते समय वह तसल्ली पाने से सिसक-सिसककर रोई। गीले उभरे गालों पर आग की लपटों की चमक। आग और आंसुओं से विताए जाने वाले दिन। कब होगा इन सबका अंत ? वह स्वयं से पूछा करती थी।

सभी की शुरुआत दासन से हुई है। सभी कुछ समाप्त करना भी उसी को है। इस घर से आंसू सूखने हों तो दासन को आजाद होना है। मय्यषी के आजाद होने पर ही दासन आजाद हो सकता है। मय्यषी का विमोचन ही आंसू बहाने वाले मुंशीजी के परिवार का विमोचन भी होगा।

विमोचन का दिन देखने को मिलेगा ? मिलेगा तो कब ? गिरिजा को पता नहीं। उसे राजनीति नहीं आती। भाई से पूछकर जानने की इच्छा थी उसकी। लेकिन कभी भी दासन के पास बैठने का मौका उसे नहीं मिला।

चाय बनाकर गिरिजा दो गिलासों में लेकर बैठक में आई।

अच्चू बैठक में चहलकदमी कर रहा है। मुंशीजी आरामकुर्सी पर लेटे हैं। पास खड़ी-खड़ी कौसू अम्मा चुपचाप आंसू बहा रही है।

"उन लोगों ने खूब मारा-पीटा ?"

"हूं।"

"जेल में बीमार हो गए थे क्या ?"

"होनी होके रहेगी। सहे बिना कैसे रहा जा सकता है, कौसू ?"

कौसू अम्मा पति का चेहरा देखते खड़ी नहीं रह सकी। बढ़ी हुई दाढ़ी और चिपके गालों वाला चेहरा।...उसकी आंखों से आंसू फिर से झरने लगे।

"रोओ नहीं, कौसू ! यही समझ लो कि भाग्य में यही लिखा था।"

गिरिजा ने अच्चू और मुंशीजी को एक-एक गिलास चाय दे दी। चाय गले से नीचे उतरने पर मुंशीजी को तसल्ली हुई। सहसा उन्हें याद आया—दूध और चीनी पड़ी चाय। घर में आते समय एक गिलास पानी तक पाने की प्रतीक्षा नहीं की थी उसने !

"तुम लोग कैसे दिन बिता रही हो यहां, कौसू ?"

किसी ने भी उसका जवाब नहीं दिया। अच्चू ने चहलकदमी जारी रखी। वहां खामोशी छा गई।

मुंशीजी के चले जाने के बाद बस्ती में बहुत कुछ घटा। कितने ही लोगों की तकदीर बदल दी गई। गोरों की फौज मय्यषी में घूमती-फिरती रही। लेकिन अहाते के झुरमुट के फूलों और दक्खिनी ओर के अशोक के पेड़ में कोई परिवर्तन नहीं आया है। पहले की तरह फैले पड़े झुरमुट के पौधे हैं, अशोक पर फूल खिले हैं।

"रेलवे स्टेशन पर आपने भैया को देखा, पिताजी ?"

गिरिजा मुंशीजी के पास जाकर खड़ी हो गई। दासन का पड़ाव आजकल रेलवे स्टेशन और पास-पड़ोस में ही तो है। गाड़ी से उतरकर आने वाले कभी-कभी उसका समाचार लाकर देते थे कौसू अम्मा को।

मुंशीजी ने बेटी को देखा—उभरे उरोज और पुष्ट नितंब। दो बच्चों की मां जैसा शरीर हो गया था।

"आपने भैया को देखा नहीं, पिताजी ?"

"उसके बारे में मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहता।"

मुंशीजी गरज उठे। गिरिजा जरा चौंक पड़ी। उसने मां की ओर देखा।

"यह कैसी बात है ?.."

"कौसू, मैं तुमसे कह रहा हूं। उसके बारे में यहां कोई भी एक लफ्ज तक न बोले।"

यह बात सबको अचरज में डालने वाली थी। जेल में गए मुंशीजी में कई परिवर्तन आ गए हैं। लेकिन सबसे बड़ी अचरज की बात यही थी।

"फिर भी मुंशीजी, वह आपका बेटा है न ?" अच्चू ने कहा।

मुंशीजी में ही परिवर्तन नहीं आया है, अच्चू में भी परिवर्तन आता जा रहा है। मुंशीजी उस पर गौर कर रहे थे। उसके हाथ में कटारी नहीं थी। पहले जैसा गुस्सा और बदमाशी भी नहीं दिखी। वह भलामानस कब से बन गया ?

"अच्चू यहीं रहता है—हर दिन।"

कुरम्बी अम्मा ने बताया। मुंशीजी की भौंहें टेढ़ी हो गईं। भौंहें टेढ़ी करने से कोई फायदा नहीं, यह उन्हें पता है। अच्चू के लिए इस घर में ही नहीं, किस घर में रहने की मनाही है ? वह इस बस्ती का सिरताज है न ?

मुंशीजी ने उस समय कुछ भी नहीं कहा। दो-तीन दिन बीत गए। अच्चू मुंशीजी से बड़े अदब से पेश आता था। एक दिन शाम को वह मुंशीजी को बाहर ले गया—उण्णिनायर के ठेके पर।

"अच्चू, तुम्हारे यहां रहने में मुझे कोई आपत्ति नहीं। लेकिन इस घर में एक सयानी लड़की है।"

"सो तो मैं जानता हूं, मुंशीजी जी।"

"रे दामू, तुम्हें पता क्या है—इस बस्ती में दंगे हुए। फौज आई। इस घर में कोई मर्द था ? इस अच्चू ने ही तुम्हारी औरत और बेटी की लाज बचायी।"

कुरम्बी अम्मा की यह बात मुंशीजी को बिल्कुल पसंद नहीं आई। गोरों की फौज के आते समय वे अनाथ थे। कोई भी गिरिजा के साथ कुछ भी कर सकता था। अच्चू भी क्या कुछ नहीं कर सकता था। लेकिन उसने उनकी रखवाली की। अच्चू की बदौलत ही इतने दिन इस घर में चूल्हा जला।

"मर्द के नाम पर तुम एक हो। पढ़ा-लिखा एक दूसरा और भी। इससे क्या फायदा—जरूरत पड़ने पर एक पैसे की सुंघनी ला देने वाला सिर्फ अच्चू ही है आज।"

डिबिया खाली होने से पहले ही वे परेशान हो जातीं। रात को लेटते समय भरी हुई डिबिया तकिये के नीचे होती है। आधी रात तक आज भी नाक छिनकती और सुंघनी सूंघती रहतीं। समय बीतता जा रहा है। आज भी नगरपालिका की बत्तियां बुझ जाते समय, मय्यषी के खामोश हो जाते समय वे सुना करती हैं—

"कुरम्बी, कुरम्बी, जरा-सी सुंघनी दे दोगी।"

लेस्ली साहब के नाम पर आंसू बहाए बिना किसी भी दिन कुरम्बी अम्मा सो नहीं पातीं।

"आपको यहां मेरे रहने में कोई एतराज है क्या, मुंशीजी ?"

रात को मुंशीजी के साथ बैठा अच्चू खाना खा रहा था। उसके इस सवाल ने मुंशीजी को बेचैन कर दिया। बाहर चले जाने को कैसे कहें ? यह भात जो अब खाया जा रहा है, अच्चू का ही है न ?

"आप कुछ बोलते क्यों नहीं, मुंशीजी जी ? एतराज हो तो बतला दो। मैं चला जाऊंगा।"

"मुझे क्या एतराज है, अच्चू !"

मुंशीजी ने थाली से सिर ऊपर नहीं उठाया। अच्चू की जीत थी यह। वह मन ही मन प्रसन्न हुआ।

अच्चू बड़े तड़के उठता। तेल लगाकर नहाता। नारियल पड़ा दलिया पीने के बाद खिड़की पर से कटारी लेकर बाहर निकलता। दोपहर को मुंशीजी और अच्चू एक साथ बैठकर खाना खाते। शाम को वे एक साथ ही उण्णिनायर के ठेके पर जाते।

वैसे मुंशीजी खुशी से दिन बिता रहे हैं। दामू और अच्चू को एक साथ बैठा देखकर कुरम्बी अम्मा को भी खुशी होती। कौसू अम्मा की ही आंखें सूख नहीं पाईं। मुंशीजी दासन को तो जैसे भूल ही गए। कौसू अम्मा के लिए वैसा संभव कहां था ?

हर मंगलवार को कुञ्आणन वडकरा के हाट में केले के गुच्छे खरीदने जाता। ढाई बजे की 'लोकल' गाड़ी में वापस आता। उसकी राह देखती कौसू अम्मा बैठक में बैठी रहतीं।

"मेरे बेटे को तुमने देखा, कुञ्ञाणन ?"

"हां, देखा।"

"मेरा बेटा खूब मोटा-ताजा है ?"

उसका जवाब कुञ्ञाणन नहीं देता।

एक मंगलवार के दिन हाट से वापस आए कुञ्ञाणन ने सूचित किया—

"मैं तुम्हारे बेटे से मिला।"

उसे अनसुना करके मुंशीजी बैठक वाली कुर्सी पर जा बैठे। कुञ्ञाणन के चेहरे पर देखा तक नहीं।

"आपसे रेलवे स्टेशन तक आने के लिए कहा है। उसे कुछ कहना है।"

"हूं।"

कुञ्ञाणन चला गया। मुंशीजी की उदासीनता उसे बिल्कुल नहीं भाई।

मुंशीजी दासन से मिलने नहीं गए। उसके आने के दूसरे दिन से कौसू अम्मा कहा करतीं—दासन से जाकर मिलो। मुंशीजी ने एक न सुनी। एक बार वे स्वयं जाकर मिलने के लिए तैयार हो गईं। लेकिन मुंशीजी ने ताकीद दी, "जाओ, जाते समय जो लेना चाहो वो लेती जाओ, फिर इधर वापस मत आना।"

अच्चू ने सलाह दी, "दिमाग फिर जाने पर भी वह है तो आपका ही बेटा। पेट में रखने वाली मां की वेदना आप समझ नहीं पाएंगे, मुंशीजी !"

"समझा दो।" कुरम्बी अम्मा डगमगाती हुई वहां आ पहुंची, "वैसे कहकर समझाओ।"

"अच्चू, यहां के घरेलू मामलों में तुम हाथ मत डालो। यह मेरा घर है। यहां के काम-काज संभालना मुझे आता है।"

"मैं यहां कोई गैर हूं क्या ?" कुरम्बी अम्मा के लिए अपने जांघिए की जेब में रखी सुंघनी निकाल कर अच्चू ने उन्हें दे दी—"बोलिए मुंशीजी, मैं यहां का कोई भी नहीं हूं क्या ?"

मुंशीजी ने जवाब नहीं दिया।

जो भी हो, कौसू अम्मा बेटे से मिल नहीं पाईं। हर मंगलवार को कुञ्ञाणन दासन की खैर-खबर लाकर देता। कॉलेज बंद हो जाने पर चंद्रिका रोज आने लगी। उससे भी कौसू अम्मा ने दासन के समाचार जान लिए।

मय्यषी में सिनेमा आ गया।

पहली बार बड़े फ्रांसीसी साहब की कार के बंदरगाह पर आने जैसी घटना थी यह। किसी दक्खिनी रईस का सिनेमा है। सिनेमा वह पैसा कमाने के लिए नहीं लाया था। मय्यषी में बहुतायत से मिलने वाली फ्रांसीसी शराब पीने के लिए लाया था।

मैदान में एक बहुत बड़ा तंबू लगाया गया। सिनेमा उसी में था। चारों ओर

बंदनवार लगाऐ गए। हर जगह एन. एस. कृष्णन और टी. ए. मधुरम के पोस्टर लगाए गए। ओतेनन गली-गली में ढोल पीटता घूमता फिरा, साथ में लकड़ी के डंडे पर विज्ञापन का बोर्ड उठाए अबूबकर भी। उन लोगों ने गाढ़े लाल रंग के नोटिस बाटे।

"तुम मुझे सिनेमा ले चलोगे, दामू ?"

कुरम्बी अम्मा ने अभी तक कोई सिनेमा देखा ही नहीं। कभी-कभी ब्रिगादिए चेट्टियप्पा के साथ नाणी को नारंगापुरम में सिनेमा जाते देखा।

कुरम्बी अम्मा को उस समय एक सिनेमा देखने की लालसा होती।

"मौत के घाट उतरने वाली हो, फिर भी सिनेमा देखना है।"

दामू मुंशीजी के जवाब ने कुरम्बी अम्मा को हताश कर दिया। वे अच्चू की ओर मुड़ीं, "अच्चू, तुम ले चलोगे ?"

यह सुनकर वह हंस दिया। जांघिए की जेब से लाल टिकट बाहर निकालकर दिखाए।

सिनेमा शुरू होने के दिन सवेरे से ही कुरम्बी अम्मा बेसब्र हो गईं। रह-रहकर वे पूछतीं, "कितना बजा है, गिरिजा ?"

"दो ही बजा है न ?"

"बाप रे ! अभी भी चार घंटे बाकी हैं।"

थाली में अंगारे डालकर गिरिजा ने अपनी साड़ी और ब्लाउज पर इस्तरी की। नहाकर, टिकुली लगाकर बालों में फूल खोंस लिए।

उस दिन मय्यषी में एक उत्सव था। शाम होते-होते मय्यषी के लोग मिल-जुलकर मैदान की ओर चल पड़े। ब्रिगादिए चेट्टियप्पा, नाणी और देवी पहले जा पहुंचने वालों में थे। रोज की तरह चेट्टियप्पा जरीदार धोती पहने था। नाणी और देवी नई-नई साड़ियां पहने, गले, कान और हाथों में ढेर सारे गहने पहने, दावीद साहब के बच्चे को गोद में लिए, भाई उत्तमन के साथ कुञ्ञिचिरुता भी आ पहुंची। कुञ्ञाणन और उण्णिनायर भी सिनेमा के लिए आए थे। उसके लिए उण्णिनायर ने उस दिन ठेका जल्दी ही बंद कर दिया।

साढ़े पांच बजते ही जेनरेटर चलने लगा। कानों को फोड़ने वाली वह आवाज सुनकर मय्यषी के लोग पुलकित हो उठे। कुरम्बी अम्मा हक्की-बक्की-सी खड़ी रहीं। अच्चू ने ब्योरा दिया।

"वह करेण्ट बनाने वाली मशीन है, कुरम्बी अम्मा।"

"बिजली की बत्ती है यहां, अच्चू ?"

"है, कुरम्बी अम्मा।"

"कहां है, अच्चू ?"

"अभी जल उठेगी, कुरम्बी अम्मा।"

गिरिजा को बचाते हुए कुरम्बी अम्मा का हाथ पकड़े अच्चू भीड़ से होता हुआ अंदर घुसा।

वैसे गिरिजा और कुरम्बी अम्मा ने पहली बार सिनेमा देखा।

रात में खाना खाने के बाद मुंशीजी और अच्चू बैठक में जा बैठे। मुंशीजी इधर-उधर की बातें कर रहे थे। अच्चू चिंतामग्न-सा था। वह धोती घुटनों से ऊपर उठाकर बरामदे में एक बीड़ी पीता बैठा रहा। कुछ भी नहीं बोला। नगरपालिका की बत्तियां बुझने लगी थीं।

"मुंशीजी..." अच्चू बीड़ी का टुकड़ा बाहर फेंककर सीधा बैठ गया, "आपसे एक बात कहने की बहुत दिन से इच्छा थी।"

"कौन-सी बात ?"

आरामकुर्सी पर पड़े-पड़े मुंशीजी ऊंघने लगे थे।

"बस्ती वाले तरह-तरह की बातें कहते हैं।"

"क्या कहते हैं वे ?"

"गिरिजा और मेरे बारे में...।"

"हूं।" मुंशीजी, ने जरा हुंकारी भरी, "उनका मुंह कौन बंद कर सकता है ? कहने दो।"

"बस्ती वालों के कहने के मुताबिक..."

"कहने के मुताबिक...?"

मुंशीजी सीधे बैठ गए।

"हम उसे कर डालें तो ?"

मुंशीजी आरामकुर्सी पर दुबारा लेट गए। उन्होंने अंदाज लगा लिया था। किसी-न-किसी दिन अच्चू ऐसा कहेगा, यह उन्हें पता था। तब जवाब क्या देना है, यह भी सोचा था। अब भी उन्हें उसका जवाब मिला नहीं था।

"मुंशीजी , आप कुछ बोलते क्यों नहीं ?"

अच्चू ने लार पी ली। दीये की रोशनी में उसको बेचैन होते मुंशीजी ने देखा। "अच्चू, जो मैं कहूं, वह तुम समझ पाओगे ? लड़की के नाम पर एक गिरिजा ही है मेरी। एक अच्छे-खासे आदमी के साथ इज्जत बचाते हुए उसे भेजने की चाह है मुझे। तुम्हारे पास क्या है ? गांव है क्या ? घर-बार है क्या ? मारपीट करते और डाका डालते ही तुम गुजर-बसर कर रहे हो न ?"

अच्चू खामोश हो गया। वह बैठक में दो डग चला। उसके बाद मुंशीजी के सामने आ खड़ा हुआ।

"मुझे कोई नौकरी मिल जाए और मैं इज्जत के साथ रहने लगूं तो बेटी को मुझे दोगे ?"

"हां।"

कुछ सोचते हुए, कहीं दूर पर देखते हुए मुंशीजी ने हामी भरी। तब तक तेल चुक जाने से नगरपालिका की बत्तियां बुझ चुकी थीं। मय्यषी के ऊपर अमावस्या की गाढ़ी अंधियारी छाई पड़ी थी।

पच्चीस

कुट्टियाटी की पहाड़ियों से निकलकर बदले हुए नाम के साथ कनकमला की परछाई से गुजरती मय्यषी नदी दासन के पैरों को छूती हुई बहती जा रही है। उसने याद किया—

मय्यषी की मिट्टी पर चले मुझे कितना समय बीत गया।...शिरीष के फूल, बिखरा पड़ा पातार समुद्र-तट। क्रूस की परछाई पड़ी रियूद लग्लीस...कितनी ही बार समुद्र और नदी के मैथुन का जिस पुल पर खड़े होकर मैं साक्षी बना, मय्यषी नदी के ऊपर का वह पुल...सारा कुछ आज कितनी दूर है। ऐसा प्रतीत होता है कि मय्यषी इस भूमि पर नहीं कहीं दूर स्थित किसी नक्षत्र पर है।

आत्माओं की विहारभूमि, सफेद चट्टान देखे कितना अरसा हो गया। पश्चिम की ओर देखते हुए—समुद्र-तट पर बैठते समय उसका मन उसकी सारी भौतिक समस्याओं से मुक्त हो जाता था। मय्यषी की आजादी, पिता, चंद्रिका की चिंताएं मन को बेचैन नहीं करती थीं। जिंदगी का बोझ तब समझ नहीं पाता था। सुदूर पर चांदी की एक अमूर्त टापू जैसी दीखने वाली सफेद चट्टान जीते जी ही सांत्वना देती रहती थी।

वह सफेद चट्टान भी बहुत दूर है।

"इतना सोच-विचार करने की कौन-सी बात है, दासन दादा ?"

चंद्रिका नदी में कंकड़ फेंकती रही। उनके पैरों तक नदी का पानी भरा पड़ा था। समुद्र में ज्वार आया होगा।

"तू भाग्यवती है। तेरे पास सोचने-विचारने के लिए कुछ भी नहीं है।"

"दासन दादा हैं न ?"

सफेद रेत पर वह पैर पसारकर बैठ गई। भीगे टखने पर बांधी पायलें।

"तू जब मेरे बारे में सोचने लगती है तो मुझे डर लगने लगता है।"

"मैं केवल आपके बारे में ही सोचा करती हूं, दासन दादा !"

वह पीछे पड़े बालों को छाती पर डालकर पकड़े बैठी रही।

यह उसे पता है। वह उसके बारे में सोचती है। और किसी से भी न कहने

वाली बातें उससे कहती है। वह उसी के लिए जी रही है, ऐसा भी उसे लगा करता है। उसका भय भी यही है।

पास न होने पर पास होने की अभिलाषा होती है। पास होने पर विपरीत भाव। कोई काम-धाम नहीं। अपने ही पिता का घृणा-पात्र। बारह साल की जेल की सजा पाने वाला। यही सब...

"मैं कौन हूं, यह तुझे पता है ?"

"दासन दादा।"

फिर कुछ भी कहने का मन नहीं हुआ। उसे पता है—वह उसके अस्तित्व का एक भाग है। उसकी जड़ें उसमें गहराई तक पहुंच चुकी हैं। उससे मुक्ति पाना चाहता हो तो वह व्यर्थ है।

लेटते समय तीन बज चुके थे। फिर भी नींद नहीं आई। आजकल नींद बिल्कुल आती ही नहीं। चटाई पर पीठ के बल लेटे-लेटे बीड़ी पर बीड़ी पीता रहा। पास ही पप्पन लेटा सो रहा था। चटाई देखते ही उस पर नींद सवार हो जाती है।

कणारन दादा और वासूट्टी पोर्टर कुञ्आमन का घर छोड़कर चले गए। और भी सुविधाजनक घर कणारन दादा ने ठीक कर रखा था।—रेलवे स्टेशन के पास ही।

छह बजे के पहले ही जाग पड़ा। आदत ही वैसी हो गई थी। दक्खिन से सात बजे वाली 'लोकल' के आने के पहले ही वह नदी-तट पर जा बैठता। वह अनजाने ही उस गाड़ी का इंतजार करता रहता।

ओढ़ी हुई धोती हटाकर उठकर बैठ गया। घुटनों पर कुछ देर ठोढ़ी रखे बैठा रहा।

"तुम इतनी जल्दी उठ बैठे ?"

कुञ्आमन खाकी कमीज पहने सामने खड़ा था। वह स्टेशन जा रहा था। सवेरे की लोकल से पेटी लेकर कौन आएगा ? फिर भी रोजाना वह जाता था।

"एक बीड़ी हो तो दे दो।"

कुञ्आमन ने कान के ऊपर से एक बीड़ी लेकर दे दी।

"ऐसा लगता है जैसे गाड़ी 'ब्लॉक' हो गई हो। मैं चलता हूं।"

वह चला गया।

बाहर निकलने को हुआ तो एक नई कमीज डोरी पर लटकी देखी। पूरी बांहों वाली नीली कमीज खोलकर देखी। आंगन को गोबर से लीपने वाली चीरु ने कहा, "पप्पन ने सिलवाई है।" जरा रुककर उसने आगे कहा, "तुम्हें भी ऐसी एक कमीज सिलवानी है न ?"

वह यों ही जरा हंस दिया। चीरु को यह पता है कि पहनने के लिए कमीज नहीं है।

पप्पन की कमीज पहनकर बाहर निकला। अपनी याद में पहली बार पूरी

बांह की कमीज पहन रहा था। उस सबके लिए जिंदगी में समय ही कहां था !

पप्पन अभी नहीं जागेगा। जाग भी जाए तो क्या ? उसके पास अनगिनत कमीजें और धोतियां हैं। जब तब नई-नई कमीजें सिलवाकर लाते समय वासूट्टी डांटता-डपटता, "तुम दूल्हा बने घूमते हो जब दूसरों की खोपड़ी में आग भभकती होती है।"

कणारन दादा कहते, "कमीज और धोती खरीदनी ही काफी नहीं है, मंजन करना और नहाना भी जरूरी है।"

बाल जटाओं में बदल गए। दांत इमली के बीज जैसे हो गए।

कंदमूल बढ़े खड़े खेतों से होता हुआ चला। वासूट्टी की दुकान से एक बंडल 'साधु' बीड़ी खरीदी। वासूट्टी ने दीवाल पर हिसाब लिख लिया। कितने ही दिन हो गए उसके यहां से बीड़ियां खरीदते। एक पैसा आज तक नहीं दिया। दीवाल पर सबसे लंबा हिसाब दासन का है। एक बड़ी रकम होगी।

एक दिन मैं कर्ज चुका दूंगा, वासूट्टी ! तुम्हारा ही नहीं, सब लोगों का।

सिगनल हो गया। अनजाने ही पैरों की चाल तेज हो गई। रेलगाड़ी में चंद्रिका होगी, कालेज में जाने के लिए। उसे देखने पर वह यों ही हंस देगी। मय्यषी नदी से आने वाली हवा में उसके बाल गालों के दोनों ओर थिरक रहे होंगे। गाड़ी चली जाने पर भी वह चेहरा मन में बसा रहा।

बैलगाड़ी की तरह हिलती-डुलती, धुआं उड़ाती लोकल चली गई। रोज की तरह चंद्रिका नहीं दिखी।

कालेज जा नहीं रही होगी। छुट्टी होगी क्या ? दिनों के बारे में कोई जानकारी नहीं। आज कौन-सा दिन है, यह भी पता नहीं।

कालेज जाने वाले दूसरे विद्यार्थियों को गाड़ी में देखा। छुट्टी नहीं है, यह तो निश्चित है।

वापस जा रहा था। तो पटरी के किनारे-किनारे उसे आते देखा। छाती से सटाकर किताबें पकड़े।

"गाड़ी छूट गई, दासन दादा !"

बिखरे हुए बाल उसने सम्हालकर पकड़ लिए। नदी से हवा चल रही थी।—खेतों की सुगंध से भरी हवा।

"कमीज नई है क्या ?"

आश्चर्य से वह उसे देखती खड़ी रही। पूरी बांह वाली नीली कमीज उस पर जंच रही थी। बाल कटवाकर दाढ़ी बनवा लेता तो...

"मेरी नहीं, पप्पन की कमीज है।"

चंद्रिका की आंखों की चमक फीकी पड़ गई।

गाड़ी छूट गई। अब एक ही रास्ता है। एक-डेढ़ मील पैदल चलकर मय्यषी

जाकर देखना है कि कोई बस है या नहीं। शायद कभी मिल जाए।

"मैं आज कालेज नहीं जाऊंगी।"

पायल झनकाती हुई वह उसके साथ चल दी। नदी में ज्वार नहीं था। किनारा साफ दीख पड़ता था। केंकड़े लाल-लाल पैरों पर खुराक खोजते घूम रहे थे। सुदूर पर कनकमला। उसकी तराइयों में धूप समाई पड़ी थी।

एक ही छोटे नारियल के पेड़ का सहारा लिए वे सफेद मिट्टी पर पैर फैलाए बैठे रहे। उनके नीचे पतली पड़ी मय्यषी नदी बहती ही रही। सूरज ऊपर चढ़ आया। धूप में वे पसीने-पसीने हो गए। यह दासन ने जान लिया कि उसका पसीना ज्यादा नमकीन था। बिना हजामत बने उसके चेहरे ने उसकी कोमल पीठ को खरोंच दिया। उसके पसीने से तर सिर पर मय्यषी नदी का राग।

"तेरी पायल मैं पहन लूं ?"

नारियल की कोंपलों से बने सांपों जैसी अपने पैरों की पायल उतारकर उसने दासन के रोमों से भरे पैरों में पहना दी। कभी-कभी वे ऐसा किया करते थे।

दोपहर की धूप कड़ी होती जा रही थी। पसीना बहाते-बहाते वह थक गया। उसने जम्हाई ली।

"आपको नींद आ रही है, दासन दादा ?"

भीगा ब्लाउज चिपके उसके कंधे पर सिर रखकर वह ऊंघने लगा। कितनी देर बीत गई, कुछ पता नहीं।

पसीने से तर चेहरे के साथ चलते समय उसने बताया, "गाड़ी छूटी नहीं थी, जान-बूझकर छोड़ दी थी...।"

फिर तो वह रोजमर्रे की बात बन गई।

वह जो कर रहा था, गलत था न ? इस गलती का न्यायीकरण वह कैसे करेगा ? वह डर गया।

दासन उसके पसीने में सराबोर था। शराब से भी तीखा है उसका पसीना।

छब्बीस

अच्चू में आए परिवर्तन ने मय्यषी के लोगों को अचंभे में डाल दिया। बारह साल से ज्यादा हो गए अच्चू को यहां आए। अभी तक गोरों और वर्णसंकरों की खुशामद करते और मारपीट करते वह जिंदगी बिता रहा था। जीने के लिए उसे कोई काम करने की नौबत नहीं आई। कटारी दिखाकर वह अपनी जरूरतें पूरी करता रहा।

आजकल ठेके पर वह ज्यादा नहीं दिखता।

"उसे देखे तो दो दिन हो गए।"

उण्णिनायर कहता। दिन में तीन-चार बार ठेके पर आया करता था न ?

"वह अब मुंशीजी के घर में है न ? अब ताड़ी की जरूरत नहीं होगी।"

मुंशीजी के घर में रहना शुरू करने के बाद से ही अच्चू में यह परिवर्तन आया है। उण्णिनायर और कुञ्ञाणन यह समझ गए हैं–फौज के आने पर अच्चू ने मुंशीजी के परिवार की रखवाली की। मुंशीजी और अच्चू रोज शाम को एक साथ घूमने निकलते। मुंशीजी के घर के लिए अच्चू चावल और मछली खरीदकर लाता। सिनेमा जिस दिन आया, उस दिन कुरम्बी अम्मा और गिरिजा को साथ लिए उसे मैदान में जाते लोगों ने देखा।

"जादू-टोना।"

कुञ्चक्कन ने मानो अपने आपसे कहा।

"कोई जादू-टोना नहीं" कुञ्ञाणन ने राय दी, "मेरी समझ में आ रहा है।"

"तेरी समझ में क्या आ रहा है रे ?"

"तुम्हारी समझ में भी वह आ जाएगा।–अच्चू के मन में क्या भरा है।"

कुञ्ञाणन की तरह ही उण्णिनायर भी कुछ अंदाज लगा रहे थे। मय्यषी के लोगों की समझ में कुछ-कुछ आ रहा था। वे अच्चू के चाल-चलन पर गौर करते रहे।

अच्चू के अभाव में ठेके शांत हो गए। मय्यषी के लोग उसे देखकर अदब के बिना ही घूमने-फिरने लगे। एक दिन अच्चू बड़े तड़के उठा। उसने नहाकर साफ-सुथरे कपड़े पहने। जीवन में पहली बार बाल काढ़े।

"कटारी..."

निकलते समय कुरम्बी अम्मा ने याद दिलाई। अच्चू का चेहरा सहसा गंभीर हो उठा। उसने खिड़की पर पड़ी अपनी कटारी की ओर जरा देखा। फिर उसे लिए बिना ही वह कोन्त्रिब्यूसियो की ओर चल पड़ा। रियूद रसिदाम्स में था दफ्तर।

अच्चू में नई शक्तियां काम कर रही थीं। धीरे-धीरे उसमें मानवता आती जा रही थी।

हाथ में कटारी लिए बिना उस दिन पहली बार वह मय्यषी से होता हुआ चला। फिर भी वह निहत्था नहीं था। उसके पास गिरिजा एक हथियार ही थी—कटारी से भी पैना हथियार। कटारी से भी ज्यादा आत्मविश्वास देने वाला हथियार।

कोन्त्रिब्यूसियो में एक छोटी-सी मेज। मोटी-मोटी बहियां। वह ठीक समय पर जा पहुंचा। अच्छी तरह से काम किया। उसने एक नया जीवन शुरू किया। अच्चू अब बाबू बन गया और बढ़ता रहा।

उस दिन वह उण्णिनायर के ठेके पर गया। रोज की तरह उण्णिनायर और पीने वाले दूसरे लोग भी उठ खड़े हुए। अच्चू ने उस सब पर ध्यान नहीं दिया। वह एक कोने में जाकर बैठ गया।

"एक बोतल हलकी ताड़ी। खाने को कुछ भी नहीं चाहिए।"

उण्णिनायर ने बोतल और गिलास सामने रख दिया। बीच में मांग निकालकर काढ़े बालों वाले, सफेद धोती और कमीज पहने शांत होकर ताड़ी पीने वाले अच्चू को सब देखते खड़े रहे। उनके लिए वह एक नया नजारा था न ?

"तुम्हें देखे बहुत दिन हो गए।"

"हूं।"

उसने जरा-सी हुंकारी भरी।

"क्या हुआ अच्चू, तुम्हारे लिए ताड़ी भी गैर हो गई क्या ?"

अच्चू ने उसका कोई जवाब नहीं दिया। वह जल्दी-जल्दी बोतल खाली कर रहा था। उण्णिनायर ने छोड़ा नहीं, "ऐसा हुआ तो शादी होते-होते तुम भात और दलिया भी छोड़ दोगे क्या ?"

अच्चू के ओठों पर गंभीर मुस्कान प्रकट हुई। ठेके पर बैठे लोगों में कुछेक हंस दिए। पहले होता तो उण्णिनायर ऐसी बातें करने का साहस करता क्या ? मय्यषी के लोग अच्चू के सामने बैठकर इस तरह हंसते क्या ?

जाते समय अच्चू ने जेब से दो चवन्नियां निकालकर उण्णिनायर की मेज पर रख दीं। उसने अच्चू के चेहरे और पैसों को बारी-बारी से देखा। उण्णिनायर के ओठ खोलने के पहले ही अच्चू निकलकर जा चुका था। वह भी एक नया तजुर्बा...

अच्चू का मन भारी था। उसे नौकरी मिल गई। मुंशीजी वायदा निभाएगा ? गिरिजा सहमत होगी क्या ? ये सब थीं उसकी समस्याएं। रात-दिन यही एक चिंता।

गिरिजा को उसके मन की बात पता है ? कभी भी उसने अपने मन की बात कही नहीं, कहने के कई अवसर सुलभ होने के बावजूद। पहले तो वह उसके सामने आती तक नहीं थी। अब हालत बदल गई। अब उसके सामने खड़ी होकर बिना झिझक के वह कहती—

"अच्चू दादा, आज शाम के लिए चावल नहीं है।"

वह सिर्फ चावल ही खरीदकर नहीं लाता है, उसके लिए टिकुली और काजल लाकर देता है। जगन्नाथ के मंदिर के उत्सव के आखिरी दिन के मेले से उसके दोनों हाथों के लिए ढेर सारी चूड़ियां खरीदकर दी थीं न ?

अकेले में मिलने पर वह कुछ कह नहीं पाता। न जाने क्यों, उसका गला भारी हो जाता है। वह मौन रह जाता है। कुरम्बी अम्मा पास होती हैं तो वह उसका मजाक बनाता। वह हंसी-मजाक करता।

अपने मन की बात कभी भी वह उससे कह नहीं पाया।

कह दे तो ? उसे डर है। आज से वह कोन्त्रिब्यूसियो में बाबू है। महीने में कोई सौ रुपये की आमदनी है। लेकिन कल तक वह कौन था ? भूतकाल अभी से उस पर बोझ बना लदा है। अच्चू को कभी-कभी लगता—मुंशीजी के सहमत हो जाने पर भी वह सहमत नहीं होगी। ऐसा हो तो अच्चू क्या करेगा ? उसे पता नहीं। शायद वह अपने भूतकाल की ओर ही लौट पड़ेगा। तब तो गिरिजा को हथियाने में उसे किसी की सहमति की जरूरत नहीं पड़ेगी।—गिरिजा की भी...

चिंता के बोझ से टूटा हुआ अच्चू घर पहुंचा। गिरिजा अहाते के तुलसी-चौक पर बत्ती जलाकर रख रही थी।

नहाकर गीले बालों को यों ही बांध रखा था।

"अच्चू दादा, आप तो जल्दी ही आ गए ?"

उसे देखकर वह मंद-मंद मुसकाई। उंगली का तेल बालों में पोंछ लिया।

अच्चू के मुंह से एक लफ्ज भी नहीं निकला। गला भारी था। उसने लार लील ली। वह बरामदे में आकर बैठ गया। चारों तरफ से बच्चों का संध्या-कीर्तन सुनाई पड़ रहा था।

गिरिजा मेरी हो जाय। अच्चू ने मौन होकर प्रार्थना की। नहीं तो मुंशीजी की हड्डी-पसली एक कर देनी पड़ेगी मुझे। उसके खानदान को मैं खाक कर दूंगा। उसकी नौबत न आने दे।...

गिरिजा न मिले तो खिड़की वाली कटारी फिर से उठानी पड़ेगी। मय्यषी के लोगों की रीढ़ की हड्डी तोड़ देनी पड़ेगी। उनकी बहिनों और औरतों को...

अच्चू का चेहरा खून जैसा लाल हो गया। आंखें उभर आईं।

कुञ्चक्कन द्वारा जलाई गई नगरपालिका की बत्तियां तेल चुक जाने से बुझने लगीं। मुंशीजी आरामकुर्सी पर लेटे सिगार पी रहे थे। उनका स्वास्थ्य सुधर गया

था। दमा की बीमारी कम हो जाने पर भी मुंशीजी खुश नहीं थे। दासन का पिता खुश रह सकता था क्या ?

"मुझे नौकरी मिल गई..."

चहलकदमी बंद करके अच्चू मुंशीजी के पास जाकर खड़ा हो गया। मुंशीजी ने सिर्फ हामी भरी।

"नौकरी मिल जाने पर..."

"अच्चू, तुम वह सब अभी याद मत दिलाओ। वचन देने पर उसको निभाने वाला हूं मैं।"

छाती पर का एक भारी बोझ मानो हट गया है, ऐसा लगा अच्चू को। थोड़ी देर के मौन के बाद उसने आगे कहा, "गिरिजा मानेगी ?"

"उसके बारे में तुम्हें सोचने की जरूरत नहीं। वह मेरी बेटी है। उससे मनवाना मुझे मालूम है।"

उस दिन अच्चू सुख की नींद सोया। उस दिन मुंशीजी की नींद ही हराम हुई। वह कौसू अम्मा के पास करवटें बदलते लेटा रहा। आखिर अभी तक दासन की मां से जो नहीं कहा था, वह कहने को तैयार हो गए—इतने समय तक छिपाई रखी बात।

जान-बूझकर ही अभी तक नहीं बताया था। घर वाली के स्वभाव से वह परिचित था न ?

कौसू अम्मा को ऐसा लगा मानो सिर पर गाज गिर गई हो।

वे स्तब्ध रह गईं। बोलने की ताकत पाने पर सिसकियां भरते हुए उन्होंने कहा, "जान से मार डालने पर भी मैं नहीं मानूंगी।"

"तेरी सहमति किसी ने मांगी नहीं।"

"मेरी भी बेटी है वह। मेरी सहमति भी लेनी है।"

"नहीं।" मुंशीजी की आवाज ऊंची हो गई, "तुम्हारी सहमति लेते-लेते ही मेरी यह दशा हो गई। बुढ़ापे में जेल जाना पड़ा। अब किसी के उपदेश और सहमति की जरूरत नहीं। मुझे जो सूझेगा, वो करूंगा।"

"आप पर लात चलाने वाला है वह अच्चू। कितने लोगों को आंसू पिलाने वाला है वह ? इस बस्ती के सारे के सारे लोगों का शाप उसके सिर पर है। वह सब आप मत भूलिए।"

कौसू अम्मा का गला रुंध गया। थोड़ी देर तक दोनों में से कोई कुछ बोला नहीं। हांफना कम हो जाने पर उन्होंने आगे कहा, "मेरी बिटिया मान जाएगी, ऐसा समझते हो क्या ?"

"उसकी सहमति किसी ने पूछी नहीं। सहमति देने वाला मैं हूं।"

"इतने निष्ठुर हो गए हैं आप !"

चारपाई पर बैठकर कौसू अम्मा सिसक-सिसककर रोईं। रोना ही लिखा है उनके नसीब में...

उनके आंसू देखते हुए मय्यषी नदी पर सूरज एक बार फिर उगकर ऊपर चढ़ आया। कौए मय्यषी के ऊपर से समुद्र-तट की ओर उड़ने लगे।

गिरिजा अपने कमरे में घुसकर दरवाजा बंद करके बैठी रही। उसने कुछ खाया-पिया नहीं। सोई नहीं। दूसरे दिन कौसू अम्मा के बहुत देर तक दरवाजा खटखटाने पर उसने दरवाजा खोला। एक दिन में ही वह पीली पड़ गई थी। धंसी हुई आंखों से रिसने वाले आंसू।

"बिटिया, तुम मुझे दिक्कत में मत डालो..."

"पिताजी से मुझे मार डालने को कहो..."

मां की छाती से मुंह चिपटाए वह रोती रही। कौसू अम्मा रोने में ही साथ दे सकी।

दासन के घर में आंसू सूखते ही नहीं थे। पूरी मय्यषी ने गिरिजा के लिए आंसू बहाए। मय्यषी की दयामयी पुनीत माता उसकी रक्षा करेगी क्या ? मीतल के मंदिर के परदेवता की आंखें उसके लिए खुलेंगी क्या ?

सत्ताईस

पिंजड़े में बंद गंधबिलाव जैसे दासन कमरे में चक्कर लगाने लगा। गुस्से से उसकी घनी मूंछ का छोर कांप रहा था। चाल की गति तेज हो गई।

आखिर, दुःख और बेबसी के मारे शिथिल होकर चटाई पर घुटनों से मुंह सटाए बैठा रहा।

"मैं होने नहीं दूंगा।"

वह बड़बड़ाया। क वारन दादा पास ही खड़े थे। वे कर ही क्या सकते थे? दासन को तसल्ली देने की सामर्थ्य तक उनमें नहीं थी।

"मैं होने नहीं दूंगा..."

"तुम कर ही क्या सकते हो, बेटे ? तुम तो मय्यषी में पैर तक धरने में असमर्थ हो..."

"जीते जी मैं नहीं होने दूंगा, कणारन दादा !"

उसकी आंखों में आंसू भर आए। कभी भी न टूटने वाला दासन टूट गया। हर तूफान के सामने छाती खोलकर खड़े रहने वाले उसके पैर डगमगाने लगे।

उसे सबसे अधिक शिथिल करने वाली उसकी बेबसी ही थी न ? मय्यषी में घुस पाता तो दौड़कर पहुंच गया होता। पिता के सामने जाकर उनके पैर पकड़कर अनुनय-विनय करता "मेरी बहन उस गुंडे को मत दीजिएगा..."

अच्चू के बारे में वह अनेक कहानियां सुन चुका था। यह भी जानता था कि वह उसके घर में ही रह रहा है। तब एक ही बात सोची थी—अपनी मर्जी से वह जबर्दस्ती रह रहा होगा। पिता कर ही क्या सकते हैं ? बस्ती में बिना मुकुट के राजा बने फिरने वाले अच्चू के सामने उसका बेचारा पिता बेबस है न ?

अब सब कुछ समझ में आ रहा है—बंदरगाह में जंगी जहाजों पर लंगर डालते समय अच्चू एक नया अच्चू बनकर सामने आ खड़ा हुआ था। उसके परिवार की लाज बचाई थी। उसके मन में ऐसी तमन्ना है यह उस समय जान पाता तो...

तो अपनी मां और बहिन को जान से मार डालता। गोरों की फौज से हार मान लेता। नहीं तो खुदकुशी कर लेता। लेकिन उस समय यह सब समझ नहीं पाया।

अच्चू पर शक नहीं हुआ। दिमाग काम न करने वाला पल था न वह ? जिंदगी में सबसे बड़ी परीक्षा का क्षण। उसमें असफल हो चुका है। उसे समझने के लिए दो साल से अधिक समय लग गया। बस इतना ही...

एक नवयुवती चेट्टी दही बेचने के लिए मय्यषी जाया करती थी।–पूरब में कहीं रहने वाले जुलाहे चेट्टियार की घरवाली। उसी के माध्यम से गांव और घर के हालचाल पता चल जाते थे। गिरिजा और अच्चू की शादी की बात भी उसी ने बताई थी।

"मेरी मां से मिली आज, चेट्टिच्ची जीजी ?"

"मिली। तुम्हारी याद में रोने भर का समय ही तो है उसके पास !"

धूप से उसका चेहरा ईंट के चूरे की तरह लाल हो गया था।

"मां ने कुछ कहा ?"

"खाए-पिए बिना मटरगश्ती करते घूमना-फिरना नहीं, ऐसा कहा है। तंदुरुस्ती का ध्यान रखना, यह भी कहा है।"

मां हमेशा कहा करती हैं। रेलवे स्टेशन पर कुञ्ञाणन से मिलने पर वह भी तो यही कहा करता है न ? बेचारी मां !

कभी-कभी मां से मिलने की अदम्य अभिलाषा होती। सच न होने पर भी यह कहकर तसल्ली देने की इच्छा होती कि वह तंदुरुस्ती का ख्याल रख रहा है और मटरगश्ती नहीं किया करता। लेकिन मां से मिला कैसे जाए ? दासन देश-निर्वासित है। अपनी बस्ती से ही नहीं। अपने घर से भी।

मां यहां आ सकती हैं। आकर उससे मिल सकती हैं। यह भी जानता है कि अपनी मजबूरी से ही मां यहां आ नहीं पातीं। पिता उनका रास्ता रोके खड़े हैं। बस चलता तो मां यहां जरूर आतीं। मौत के घाट से भी उठकर आ जातीं।

पिता से उसे नफरत नहीं। पिता के सारे सपनों को खाक कर देने वाला है वह। एक जिंदगी को ठगने वाला। इतना ही नहीं, बुढ़ापे में जेल में भी भिजवा दिया। वह कभी भी पिता के मत्थे पर दोष नहीं मढ़ेगा। पिता की सारी करतूतों को वह सिर्फ सही ही मान सकता है।

किसी के मत्थे दोष मढ़ पाता तो...अपने इस नितांत दुःख की जिम्मेदारी और किसी के ऊपर डाल पाता तो...तो कम-से-कम कुछ तसल्ली होती। लेकिन दासन वैसा कर नहीं पाता। अपने दुःख का कारण भी वही है। दासन का दुःख दासन को ही भुगतना है।

"आप थोड़ा-सा मट्ठा पिएंगे ?"

नवयुवती चेट्टिच्ची ने सत्कार किया। चलते-चलते वे नदी के किनारे पहुंच चुके थे। भरी नदी में दक्खिन से आने वाली माल लादने वाली नावें मय्यषी की ओर बढ़ती जा रही थीं।

"मेरे पास पैसा तो है नहीं।"

"जब तुम पैसे वाले बन जाओ, तब दे देना।"

नवयुवती चेट्टिच्चि ने घड़े का बाकी मट्ठा दासन के अंजुरी पर उंड़ेल दिया। हलके खट्टे और ठंडे मट्ठे से उसका सूखा गला सिंच गया।

"आप बाल और दाढ़ी क्यों नहीं कटवाते?"

"पैसा न होने से।"

नवयुवती चेट्टिच्ची के पान खाने से लाल हुए ओठों पर हंसी फूट पड़ी। सच है, बाल ही नहीं, दाढ़ी भी बहुत बढ़ गई है।

नाव-घाट से एक पैसे की बीड़ी खरीदी। तीन मिलीं। एक सुलगाकर ओठों पर रखे लौट पड़ा। कणारन दादा और वासूट्टी दासन की राह देखते बैठे थे। चर्चाएं, वाद-विवाद...इन सबका अंत कब होगा, कौन जाने !

दूसरे दिन नवयुवती चेट्टिच्ची मुरझाया चेहरा लिए आई।

"तुमसे किसने कहा ?"

दासन ने यकीन न करने की कोशिश की। पर वैसा वह कर नहीं सका। यकीन भी नहीं कर पाया।

"बस्ती वाले सभी कहते हैं।"

फिर वह वहां खड़ा रह नहीं सका। कंदमूल वाले खेत में उतरकर जल्दी-जल्दी आगे बढ़ा।

पहुंचते समय लीला दीदी बैठक में बैठी थीं—गोद में उस दिन का अखबार रखे। बात बताने पर वे जरा हंसीं।

"बस्ती वाले क्या कुछ नहीं कह सकते ? अच्चू तुम्हारे घर में रह रहा है न ? लोग तरह-तरह बातें कहते होंगे।"

उसे तसल्ली नहीं हुई। सचाई जाननी है। जानने के बाद ही वह ठीक से बैठ पाएगा।

कणारन दादा और वासूट्टी घर में थे। वह आंदोलन का दफ्तर भी है। हमेशा भीड़ रहती है। आंदोलन से वास्ता रखने वालों के लिए आने-जाने की जगह भी है यह।

कणारन दादा और वासूट्टी के चेहरों पर भी नवयुवती चेट्टिच्ची जैसा मुखभाव था।

"तुम्हें पता लगा ?" वासूट्टी का यह सवाल सुनते ही पैरों से ऊपर एक सुन्नापा चढ़ गया।

"यह जो मैं सुन रहा हूं, वह सच है, कणारन दादा ?"

नहीं, ऐसा वे कह देते तो...

"हां, बेटे !"

कुछ देर तक वह हिलडुल नहीं पाया। दिमाग पर लकवा मार गया था।

"यह तुमसे ही वास्ता रखने वाली बात नहीं है।"

वासूट्टी की आवाज कहीं दूर से आने जैसी सुन पड़ी।

"हम लोगों से भी वास्ता रखने वाली है। गोरों का गुंडा दासन की बहिन के गले में मंगल-सूत्र बांधे। यह आंदोलन के लिए भी तौहीन की बात है।"

जलती हुई आग में उसने घी डाल दिया।

"यह शादी होने नहीं देनी है। यदि हो गई तो यह आंदोलन की हार होगी।"

"फिर भी मुंशीजी ने वैसा कर डाला !"

कणारन दादा सिर झुकाए बैठे रहे।

जेल से लौटने के बाद पिता बदल गए थे। दासन को यह पता है। उनसे जरा मिलने के लिए कितनी ही बार लिखकर संदेश भेजे। पिता नहीं आए। तब उसे न्यायसंगत साबित करने की कोशिश की। अपने बेटे के जुल्म के लिए जेल जाना पड़ा। देशद्रोह के लिए सजा पाने वाला बेटे से मिलना आफत मोल लेना है, ऐसा पिता ने सोचा होगा। दुबारा जेल में जाना पड़ेगा, ऐसा डर लगा होगा।

उससे आकर न मिलने पर भी पिता के दिल में स्नेह और सहानुभूति होगी—दासन को ऐसा विश्वास था। आगे भी वह ऐसा विश्वास रख सकता है क्या ?

दासन ने पिता को एक और लिखित संदेश भेजा। तिल भर भी दया हो तो उससे तुरंत ही आकर मिलें। संदेश ले जाने वाला नाणूट्टी पीले पड़े चेहरे के साथ वापस आया।

"उन्होंने लिया ही नहीं।"

"तुमने दिया नहीं ?"

नाणूट्टी को संदेश वापस लाया देखकर दासन आगबबूला हो गया।

"उन्होंने लिया ही नहीं, मैं क्या करूं ?"

नाणूट्टी बेबस था। मुंशीजी के संदेश न लेने पर उसे वहीं छोड़ आने की कोशिश की थी। लेकिन मुंशीजी गरज उठे, "ऐरे गैरे नत्थू खैरों का संदेश लेकर यदि तू यहां आया तो मैं तेरी बत्तीसी तोड़ दूंगा।"

अपना बेटा गैर हो गया है।

उसके पिता को हो क्या गया है ? पिता का वह विशाल हृदय कहां गुम हो गया ?

एक बार फिर खत लेकर गया। इस बार कणारन दादा का खत था। दासन से सलाह-मशविरा किए बिना गिरिजा की शादी तय न करें, ऐसी अभ्यर्थना की थी उन्होंने।

"मुंशीजी ने क्या कहा ?"

नाणूट्टी के इंतजार में सबके सब सीमा के इस पार खड़े थे।

" मैं अपने घर के काम-काज स्वयं संभाल लूंगा। दूसरों को उसमें हाथ डालने की कोई जरूरत नहीं।"

कणारन दादा वगैरह के पास कहने के लिए फिर कुछ भी नहीं था। वे खामोश रह गए। मुंशीजी उनसे भी एक कदम आगे बढ़ रहे हैं। बुद्धि की पहुंच से दूर का एक प्रतिभास बन रहा है।

दासन उस दिन कणारन दादा के घर में ही लेटा। वह पल-भर भी सो नहीं सका। चारपाई पर आंखें खोले पीठ के बल लेटा रहा। दुनिया को कंपाती हुई आधी रात की गाड़ी का गुजरना वह सुनता रहा। काफी दूर पर मय्यषी की पुनीत माता के गिरिजाघर से प्रभात के घंटे बजते सुने। इसी तरह सवेरा हो गया।

आखिर उसने एक निश्चय किया—रात को छिपकर मय्यषी जाना। पिता से मिलना। पिता को सब कुछ समझा देना। न समझने पर पैर पकड़कर प्रार्थना करना। नियति ने पिता को उसके खिलाफ खड़ा कर दिया है। तो भी उसके पिता उसके पिता हैं। उनके अंतर्मन में इस दासन से तिल-भर भी स्नेह और अनुकंपा तो होती ही।

"मैं आज घर जा रहा हूं।"

कणारन दादा के जागने पर सूचित किया। पहले उनकी समझ में कुछ भी नहीं आया। समझ में आने पर वे भौंचक्के रह गए।

"ऐसा अति न कर बैठो, बेटे, तुम—"

वह टटोलता हुआ उठ बैठा। पुलिस और फौज की गश्त से भरी मय्यषी में दासन का जाना—इसे सोचते ही वह पसीना-पसीना हो गया। वह उस पर विश्वास तक नहीं कर सका। कैसा साहस है यह —!

"तुम्हारा कहना पिता मानेंगे क्या ?" वासूट्टी ने पूछा, "तुम्हारा जाना फिजूल है। तुम कुछ भी नहीं कर पाओगे।"

मुंशीजी को कोई भी वश में नहीं कर सकता। वे चोट खाए जानवर हैं।

"तुम जाओ।" पप्पन ने कहा, "मनचाहा न कर पाओ तो उस अच्चू की आंतें निकाल लाओ।"

पप्पन की आंखों में आग थी। वासूट्टी ने विरोध प्रकट नहीं किया। पुलिस के पंजे में पड़े बिना बचकर जाना है, बस इतना ही। कणारन दादा सिर झुकाए बैठे रहे। दासन के मय्यषी जाने की बात वे सोच तक नहीं सके। कणारन दादा का सिर चकरा रहा था।

"विवे दाम ष़रेस्माम !" (विपत्तियों में फंसकर जियो।)

आन्द्रेषीद का वाक्य, पप्पन का मूलमंत्र था। वह प्रोत्साहन दे रहा था।

"दासन, तुम मत जाओ। मैं तुम्हारे पैर पड़ता हूं बेटे !..." कणारन दादा ने

याचना की। वासूट्टी यह देखकर आगबबूला हो गया, "कणारन दादा, आप यों बच्चों की तरह मत बोला कीजिए ! आंदोलन के नेता हैं आप। यह याद रखिए।"

कणारन दादा खामोश हो गए। दुनिया में संघर्ष और मुठभेड़ न होते तो...दुःख और दर्द न होते तो...

उस दिन रात में दासन ने घर जाने का निश्चय किया...विरोध की उसने परवाह नहीं की।

पूर्वी सीमा पर उस रात पुलिस वाले कण्णन की पहरेदारी थी। इस बात से कणारन दादा को तसल्ली हुई। मन से पुलिस वाला कण्णन आंदोलन का समर्थक था। और कुछ नहीं तो वह दासन को सताएगा नहीं, ऐसा कणारन दादा को विश्वास था।

रेलवे स्टेशन के आसपास मय्यषी की शराब की खोज में आए खानाबदोश लोग डेरा डाले थे। आधी रात के बाद भी वहां रोशनी और शोरगुल था। तोतों की आवाज और कुत्तों का भूंकना भी जारी था। समझ में न आने वाली बोली में न जाने क्या-क्या बोल रहे थे।

अस्सू की दुकान के बाद एक लंबी सड़क है। एक तरफ खेत और दूसरी ओर नारियल के बाग। वहां खामोशी थी। अपने पैरों की आहट ही सुनाई पड़ती थी। धुंधली चांदनी थी।

अब आगे नहीं जाया जा सकता। वासूट्टी और पप्पन रुक गए। दूर सीमा वाली सड़क पर आड़े रखे बांस के पास पुलिस वाले दीख रहे थे।

"अब हम लोग आगे नहीं चलेंगे।"

दासन रुका। वे तीनों लोग पल-भर चुपचाप खड़े रहे। अपने-अपने दिल की धड़कनें वे सुन सकते थे। खेतों पर फैली पड़ी खामोशी। कुकुही तक मौन है। खानाबदोश लोगों की रोशनी और शोरगुल पीछे दूर पर है।

"यह पास रख लो।"

पप्पन ने कमीज की जेब से छुरी निकालकर खोली। दासन की समझ में आ गया—लाल आंखों वाले गोरे पर भोंकी गई वही छुरी।

"पप्पन, किसी पर छुरी चलाने की हिम्मत मुझमें नहीं है।" जरा रुककर उसने आगे कहा, "फिर भी दे दो। जरूरत पड़े तो मैं अपने पर ही भोंक सकूं।"

दासन ने छुरी ले ली। अंधेरे में उसकी धार मौत के दांतों जैसी चमचमा रही थी।

"जाओ।"

वासूट्टी ने दासन के कंधे से हाथ हटा लिया। पप्पन ने कहा, "तुम्हारे लौटने तक सोए बिना इंतजार करता रहूंगा।"

पहनी हुई लुंगी उचकाकर बांधे दासन नारियल के बगीचे में उतरा। नारियलों

की लंबी छायाओं की ओट में वह आगे बढ़ा। थोड़ी दूर चलने पर साफ आसमान की चोटी पर मय्यषी की पुनीत माता के गिरिजाघर के ऊपर वाला, हाथ फैलाये खड़ा क्रूस देखा। क्रूस पर देखते हुए उसने अपने आपसे पूछा, "मैं वापस आ पाऊंगा ?"

वासूट्टी और पप्पन, दासन का चलते-चलते ओझल हो जाना देखते खड़े रहे। उसके ओझल हो जाने पर वे चुपचाप लौट पड़े। फिर फीकी खामोश रात।

अट्ठाईस

फिर से मय्यषी की मिट्टी पर, जन्म देने वाली और पालन-पोषण करने वाली बस्ती में आना...। दासन को इससे खुशी हुई। छिपी पड़ी आफत को वह भूल बैठा। पकड़ लिया जाए तो बारह साल जेल की रोटियां तोड़नी पड़ेंगी। जेल से वापस न आने की संभावना भी है। वह सब उसे याद नहीं रहा। सारी आफतों को ताक में रखकर चांदनी में आनंद से झूमता हुआ वह आगे बढ़ा।

नारियल का बाग खतम हो गया। पगडंडी पर आ पहुंचा। वहां रोशनी नहीं है। फिर भी खतरे की गुंजाईश ज्यादा है। लुक-छिपकर चल-नहीं सकता। पहरा देने वाले पुलिस वालों की टॉर्च की रोशनी चेहरे पर पड़ने पर ही जान पाएगा।

रियूद लागार दूर पर है। एक मरे पड़े अजगर की तरह खेतों के बीच में वह निश्चल पड़ी है।

मीतल का मंदिर और पास-पड़ोस दीख पड़ता है। परदेवताओं के बाहर निकलकर घूमने का समय। बचपन में दादी द्वारा सुनाई गई कहानियां याद आ गईं। केले का गुच्छा चुराने वाले कुञ्चक्कन के पितामह को परदेवता द्वारा लंगड़ा बना देने की कहानी।

मंदिर के प्रवेश-द्वार की सफेदी पुती सीढ़ियां चांदनी में ऊंघ रही हैं। वहां नारियल के कोमल पत्ते पहने गुलिकन बैठा है क्या ? पैरों के घुंघरुओं की आवाज़ सुनाई पड़ रही है क्या ?

तब उसे चंद्रिका के पैरों की पायलें याद आईं।

मय्यषी जाने की बात उसे बता दी थी। कणारन दादा ने आदेश दिया था कि किसी को भी यह बात बताना नहीं। दुश्मन होंगे। कोई इत्तला कर दे तो पुलिस वालों का जाल उसका स्वागत करेगा।

फिर भी उसे बता दिया।

"दासन दादा, आप मत जाइए !"

वह रोने लगी। तब लगा कि उसे बताना नहीं चाहिए था। बिना बताए चला जाना गलत होगा न ? पकड़ लिए जाने पर बारह साल तक फिर मिल नहीं पाएंगे—शायद कभी नहीं।

"रोओ मत।" उसने धीरज बंधाया, "मैं वापस आ जाऊंगा।"

"पुलिस वाले..."

"उनकी निगाह में पड़े बिना मैं जाकर वापस आ जाऊंगा। भास्करन वगैरह रोज आते-जाते हैं न ?"

फिर भी चंद्रिका को तसल्ली नहीं हुई। डबडबाई आंखों से उसने दुबारा कहा, "दासन दादा, मत जाओ।"

"बच्चों की तरह रोओ मत। मैं नहीं गया तो पिताजी गिरिजा को पकड़कर अच्चू के हवाले कर देंगे। गिरिजा की जिंदगी बरबाद हो जाएगी। चंद्री, तुम्हारी समझ में आ रहा है न ?"

वह सिर झुकाए नारियल के सहारे खड़ी रही। पैरों पर नदी-तट का सफेद रेत सना था।

"रात में ही वापस आ जाना।"

"आ जाऊंगा, चंद्री !"

उसने हामी भरी। उसने साड़ी के छोर से आंखें पोंछ लीं।

"कल मैं कॉलेज नहीं जाऊंगी। यहां आऊंगी। आप भी आइएगा।"

वह भी उसने मान लिया। वह उनके आपस में मिलने का संकेत था। निर्जन नदी-तट। सफेद बालू और छोटे नारियल के पेड़ों वाला नदी-तट।

वह अब भी सोई नहीं होगी। उसने याद किया। उसके बारे में सोचती लेटी होगी। कल आपस में मिलने तक उसे चैन नहीं पड़ेगा।

उण्णिनायर के ठेके के पीछे वाले बाग के नारियलों की ओट में वह चलता रहा। अभी तक किसी से भेंट नहीं हुई। सब जगह खामोशी। मय्यषी के लोग सो रहे हैं। वे सोते रहें। दासन, जिसकी तकदीर में नींद नहीं बदी है, घर को लक्ष्य बनाए आगे बढ़ता जा रहा है।

खेत और नारियल के बाग खतम हो गए। अब लंबी पड़ी रियूद लागार है। दूर पर रियूद लग्लीस दिख रही है। खतरे से भरी सड़क के होते हुए जल्दी-जल्दी चलते समय आसमान पर हाथ फैलाए खड़े क्रूस को देखा। रियूद लग्लीस में चलने वाली परछाइयां। पुलिस वाले हैं ?

कुञ्चक्कन द्वारा जलाकर रखी गई बत्तियां तेल चुक जाने से बुझ चुकी हैं। धुंधली चांदनी कुहरे की तरह पेड़ों और मकानों की छतों पर पसरी पड़ी है।

दूर पर उसने अपना घर देखा। दिल की धड़कनें तेज हो गईं। सोच-विचार बदल गए। कुछ ही मिनटों में पिता से आमना-सामना होगा। क्या कहना है ? पिता की प्रतिक्रिया कैसी होगी ?

दो सालों के बाद मां, पिता, गिरिजा, दादी—इन सबसे मिलने जा रहा है। वह इससे मन ही मन आनंदित हुआ। दो पैसे की सुंघनी खरीदकर लानी चाहिए

थी।

उसे दुःख हुआ। वैसा होता तो दादी कितनी खुश हो जातीं ...!

केवल दूसरी मंजिल पर ही रोशनी है। बैठक में अंधेरा है। अहाते में निश्चल पड़ी पेड़ों की परछाइयां। धुंधली चांदनी में फूला हुआ अशोक देखा।...आंगन में गिरिजा द्वारा लगाए गए चमेली और गुलाब के पौधे।

वह बरामदे में घुसा। किसे बुलाए ? दरवाजा खटखटाए ? पल-भर संदेह में पड़ा रहा। सभी लोग सो रहे होंगे—शायद गिरिजा के अलावा। वह सो कैसे सकती है ?

बरामदे में एक सफेद बिल्ली सिमटी पड़ी सो रही है। किसकी है यह बिल्ली ? पहले तो उस घर में बिल्ली-कुत्ते कोई भी नहीं थे।

गिरिजा के लेटने का कमरा उसे पता है। पहले उससे मिला जाए। सारी बातें जान ली जाए। उसके बाद ही पिता को जगाया जाए। उसने तय किया।

बिल्ली को जगाए बिना वह बरामदे में ऊपर चढ़ा। वहां चांदनी थी। रियूद सिमित्तियेर से होकर जाते हुए पुलिस का एक सिपाही उसकी निगाह में पड़े बिना नहीं रहा।...

"बहन..."

खिड़की के पास जाकर धीमे से बुलाया। खिड़कियां खुली पड़ी थीं।

चारपाई चरमराई।

"मैं हूं, भैया !"

झट से वह चारपाई पर उठकर बैठ गई। बाल और साड़ी खुली पड़ी थी। अचरज से उसने पूछा, "भैया ?"

"दरवाजा खोल।"

उसने आवाज की तो वह डर गया। रियूद सिमित्तियेर की बत्ती के खंभे के पास पुलिस के सिपाही की टोपी अब भी दिख रही थी।

अचानक उसे थकान-सी महसूस हुई। दो मील तक लुक-छिपकर चलना उसे पता ही नहीं चला था। नाला लांघा था। कांटों की चहारदीवारी तोड़कर आगे बढ़ा था। सारे बदन में जलन है। खुजली पैदा करने वाले पौधे या कांटे बदन पर लगे होंगे।

"दरवाजा खोल।"

उसने फिर दोहराया। गिरिजा अब भी हक्की-बक्की-सी खड़ी है। उसके दुबारा कहने पर उसने दरवाजा खोला। बाल समेटकर बांध लिए और साड़ी ठीक कर ली।

"बत्ती जलाऊं ?"

"नहीं।"

दूर पर बत्ती वाले खंभे के पास पुलिस वाला निश्चल खड़ा था। दासन ने दरवाजा

बंद करके सांकल लगा ली। वह बैठक के पास वाले कमरे में खड़ा नहीं रहा। वहां घना अंधकार था। गिरिजा के कमरे में जाकर उसकी चारपाई पर बैठ गया। गिरिजा पास खड़ी हो गई। खुली खिड़की से आने वाली चांदनी की रोशनी में उसका चेहरा दिख रहा था। वह रोने लगी थी।

"तू मान गई ?"

धुंधली चांदनी में उसके गालों से बहने वाले आंसू उसे दीख रहे थे। उससे क्या कहा जाए ? उसे तसल्ली कैसे दी जाए ? उसे पता नहीं।

"यहां बैठ—मेरे पास।"

उसने बात मान ली। उसकी सिसकियां अपनी छाती से उठने जैसे वह सुन सकता है।

"मेरे आते समय तुम रो रही थीं ?"

वह जवाब दिए बिना रोती ही रही। कुछ पल बीत गए।

हल्के अंधेरे से परिचित हो जाने पर उसने अपनी बहिन का चेहरा साफ-साफ देखा।

उसकी आंखों में कितनी ही रातों की नींद और आंसू भरे पड़े थे।

"बता, तू मान गई।"

"नहीं।" चेहरा उठाए बिना उसने सिर हिलाया।

"जान से मार डालने पर भी मैं नहीं मानूंगी।"

उसके स्वर ने उसे तसल्ली दी। पिता से बहस करते समय उसके समर्थन की उसे जरूरत पड़ेगी न ?

"तू मानेगी नहीं, यह मुझे मालूम था।"

इसलिए उसे इतना ज्यादा दुःख नहीं था ! वह उसकी छोटी बहिन है। उसके अलावा और कौन उसे समझ सकता है ?

"कुछ भी हो, तुम हामी नहीं भरना, बहन !"

"पिताजी मुझे मार डालेंगे।"

वह खामोश हो गया। पिता के बारे में सोचते समय उस पर मौन सवार हो जाता है। उसकी चिट्ठियों का जवाब न देने वाले और अभी तक एक बार भी उससे मिलने के लिए तैयार न होने वाले पिता।...

"पिताजी मुझसे नाराज हैं ?"

यह सुनकर वह और भी सिसकियां भरने लगी। भैया के चेहरे पर देख न पाने के कारण वह सिर झुकाए बैठी रही।

"बोल बहना, पिताजी को मेरा चेहरा देखना तक नापसंद है क्या ?"

"जेल से आने के बाद..."

"आने के बाद ?"

"पिताजी बदल गए हैं, भैया ! हमेशा नाक पर गुस्सा सवार रहता है। आपका नाम यहां कोई भी ले तो पिताजी आग-बबूला हो जाते हैं।"

वह सब दासन को पता है। वह सब उसने अंदाज लगा लिया था। फिर भी गिरिजा के मुंह से यह सुनने पर उसका मन छटपटा उठा। इस घर में दासन का नाम कोई भी ले नहीं सकता। एक समय ऐसा भी था, जबकि दासन का नाम ही दिन-रात सुनाई पड़ता था। सभी को दासन के बारे में ही कुछ-न-कुछ कहने को होता था।...

जमाना बदल चुका है। आज कोई भी उसका नाम जबान पर ला नहीं सकता।

थोड़ी देर तक वहां खामोशी छाई रही। दासन ने फेंटे से एक बीड़ी लेकर मुंह में रखी। दीयासलाई जलाई। रोशनी बाहर न जाने पावे इसके लिए दोनों हाथों की ओट लगाकर बीड़ी सुलगाकर दो कश खींचे।

"आपने रात को भात खाया, भैया !...लाऊं ?"

"भात है बहना ?"

"है।"

पहले रात में हमेशा दलिया बनता था। अब भात बनता है। सबके खाने के बाद भी भात बचा है। ऐसी हालत में होने पर भी उसके घर में समृद्धि है।

"यहां का खर्चा कौन चलाता है, गिरिजा ?"

कौन चलाता है, यह पता है। फिर भी पूछा। उसने जवाब नहीं दिया। थोड़ी देर के लिए उसकी सूखी आंखें फिर से आंसू बरसाने लगीं।

अचानक उसे याद आया। बरामदे में अच्चू नहीं दीख पड़ा। वहीं तो वह लेटा करता था।

"अच्चू आजकल यहीं लेटता है न ?"

"अंदर कमरे में है।"

अब वह बरामदे में क्यों लेटे ? इस घर का खर्चा चलाने वाला। इस घर का मालिक। कल उसका बहनोई बनने वाला। इसके लिए अब अधिक समय तो है नहीं।

हल्के अंधेरे में गिरिजा का सिसक-सिसककर रोना। उसने उसे अपने से सटाकर पकड़े हुए धीरे-धीरे सिर पर हाथ फेरा। उसके बदन में पसीने की बू आ रही थी। नहाए-धोए कितने ही दिन बीत गए। वह खाती-पीती नहीं। सोती नहीं। वह आज सिर्फ रो ही सकती है।...

"मेरे लिए तो सिर्फ आप ही हैं, भैया..."

"मेरी हालत ऐसी हो गई है न ?"

"मैं भी आपके साथ चलूं भैया ?"

"किधर बहना ? यह भाई तुम्हें कहां ले जा सकता है ?"

कमर सीधी करने के लिए भी उसका कोई ठौर-ठिकाना है ? भूख मिटाने के लिए खाना है ? आंदोलन जोर पकड़ रहा है आजकल। सैकड़ों आजादी के सैनिक खाए-पिए-सोए बिना काम में लगे हैं। जीवन अस्थायी है। कल शायद जेल जाना पड़े। गोली का शिकार बने...उस दुनिया में गिरिजा को कैसे ले जा सकता है ? अपने अस्तित्व का पीलपांव घसीटता हुआ चलने वाला वह किसी दूसरे का बोझ कैसे ढो सकता है ?

"तुम सब्र करो। मैं कोई-न-कोई रास्ता निकाल लूंगा तुम्हारी रक्षा का।"

पिता के पैर पकड़ने हैं। पैर पकड़कर विनती करनी है—गिरिजा की कुरबानी मत दीजिए।

"आपका कहना पिताजी मानेंगे ?"

"मानेंगे, गिरिजा ! मेरा कहना पिताजी माने बिना नहीं रहेंगे।"

"नहीं रे !..."

छोटे चिराग की रोशनी के साथ मुंशीजी की आवाज।

"तेरा कहना मानने का जमाना लद गया।"

गिरिजा चौंककर उठ खड़ी हुई। एक हाथ से धोती संभाले और दूसरे हाथ में चिराग लिए मुंशीजी देहरी पर आ खड़े हुए।

आखिर वह पल आ पहुंचा—दासन समझ गया। आदमी और पशु-पक्षी सबके सोते समय कुकुही के बोलने के समय वे आमने-सामने खड़े हो गए। मुझे हिम्मत दो—अपनी छोटी बहिन के लिए मुठभेड़ करने की हिम्मत दो...

"तू मुझसे क्या मनवाना चाहता है ?"

हाथ का चिराग कांपने लगा। मुंशीजी की आंखें किसी शैतान की आंखों की तरह जल रही थीं।

अपने को काबू में रखते हुए स्वर को यथासंभव धीमा करके दासन ने कहा—

"मुझे आपसे कुछ बातें करनी हैं।"

"तू मुझसे कोई भी बात मत कर।"

"अच्चू कौन है, यह आप जानते हैं न ?"

"जानता हूं।"

"वह बदमाश है।"

"तू बदमाश नहीं है क्या ? मेयर के दफ्तर में आग लगाने वाला कौन है ? इस बस्ती में दंगे करवाने वाला कौन है ?"

यह पिता कह रहे हैं क्या ? दासन को विश्वास नहीं हुआ। वह बदमाश है क्या ? अच्चू जैसा एक गुंडा है क्या ? जाग उठे मय्यषी के लोगों द्वारा की गई जन-क्रांति सिर्फ बदमाशी ही है क्या ?

"बदमाश होते हुए भी उसने मुझ पर उंगली तक नहीं उठाई। और तूने ?

तूने मुझे जेल भिजवा दिया। पुलिस वालों के बेंत खाने की नौबत ला दी। रे, अच्चू बदमाश तो है, लेकिन है रहमदिल। गोरों की फौज के आने पर उसने ही तेरी मां और बहिन की इज्जत बचाई थी। तब तू कहां था ?"

मुंशीजी की आवाज ऊंची हो गई। मेरे पिता की आवाज ही है यह ? मेरे पिता ही हैं ये ?

"आप नासमझों की तरह बात मत कीजिए। मैं इस देश के खातिर ऐसा बना। हमारा परिवार उसी के लिए आंसू के घूंट पी रहा है। हमें उस पर गौरव होना चाहिए न, पिताजी ?"

"बंद कर लेक्चर।"

"हमारी तकलीफों का अंत होगा—बहुत जल्दी ही। हमारी सारी तकलीफें..."

"यहां किसी को कोई तकलीफ नहीं है।"

"गिरिजा के आंसू आप देख नहीं रहे हैं क्या ? सही-सही बताइए पिताजी। गिरिजा को अच्चू के हवाले करने के लिए कौन-सी बात आपको प्रेरित कर रही है ?"

उसका जवाब मुंशीजी की जीभ की छोर तक आ गया। भावी जीवन चैन से बिता सकें। शांति से आंखें मूंद सकें। अच्चू साहसी है। उसकी छाया में ही यह परिवार पनप सकता है।

"बोलिए पिताजी..."

"मेरी मर्जी। जो मुझे रुचेगा, वही मैं करूंगा।"

"मेरी मर्जी की बात जाने दीजिए। लेकिन कम-से-कम गिरिजा की मर्जी पर तो ध्यान दीजिए।"

"तेरी मर्जी—तूने इस परिवार का सत्यानाश कर दिया। इस बूढ़े को जेल भिजवाया। फिर भी तेरा मन नहीं भरा? अब फिर से आ पहुंचा है दूसरों का चैन भंग करने के लिए ?"

मुंशीजी के हाथ का चिराग हिल उठा। वह दौड़ने से थके जानवर की तरह हांफने लगे। चिराग खिड़की पर रखकर बाहर की ओर हाथ से इशारा करते हुए उन्होंने आज्ञा दी, "निकल बाहर।"

सब कुछ खत्म हो गया क्या ? इसी के लिए जान खतरे में डालकर मैं आया था।

"मैं चला जाऊंगा।" दासन उठ खड़ा हुआ, "अपनी मां से मैं जरा मिल लूं।"

वह अंदर घुसने लगा तो मुंशीजी ने रोका, "वह तेरी मां नहीं। मैं तेरा बाप भी नहीं। निकल बाहर।..."

छाती में कीलें घुसने जैसे दासन को दर्द हुआ। उसकी आंखों से खून जैसे आंसू फूट पड़े।

खिड़की पर रखा चिराग जल रहा है। रियूद सिमित्तियेर पर पुलिस की लाल टोपी तब भी दिख रही है। फिर भी उसने चिराग वहां से हटाने की कोशिश नहीं की।

"भैया, जाओ नहीं।..."

गिरिजा रोने लगी। दासन दरवाजे की ओर बढ़ा।

"भैया..."

"चुप बैठ री, गिरिजा !" मुंशीजी ने उसकी ओर मुड़कर हाथ उठाया, "इस आधी रात को मेरे हाथ की मार तू मत खा।..."

दासन ने दरवाजे की सांकल खोली।

"पिताजी, मैं जा रहा हूं। गिरिजा को पीलपांव वाले अन्तोणी को सौंप दीजिए, लेकिन उस अच्चू को मत दीजिए। यही कहने के लिए मैं आया था।"

"निकल बाहर ! कुत्ता कहीं का !..."

मुंशीजी गरजे। उस गर्जन में सारा घर जाग उठा। कौसू अम्मां और अच्चू भागे-भागे आए। कुरम्बी अम्मां काठ के संदूक से उतर आईं।

दासन अहाते में उतरा। पीछे से मुंशीजी ने दरवाजे बंद करके सांकल लगा ली। कहीं पास ही उसे पुलिस वालों की सीटी बजती जैसी लगी। कौसू अम्मां की चीख-पुकार भी सुनाई दी।

घना अंधकार। चांदनी छिप गई थी। चलना मुश्किल है। कुछ भी करना संभव नहीं। हाथ-पैर हिलाने में भी असमर्थ हो वह टूटा-सा बैठ गया। आंसुओं की गर्मी में उबल जाने वाली अंधी आंखें। टटोलकर फाटक के बाहर सड़क पर पैर रखते ही बूटों की आवाज हुई। अंधेरे में ऊपर उठने वाली लाठियां।

वह नीचे गिर पड़ा।

उनतीस

मय्यषी के ऊपर धुंधली रोशनी फैली थी। आसमान बादलों से ढंका था। कनकमला की पहाड़ियों पर घटाएं घिरी थीं।

पप्पन नींद से सूजी आंखों के साथ कुञ्ञामन के घर की बैठक में बैठा रहा। उसके मन में तूफान उमड़ रहा था। चीरु द्वारा बनाकर लाई गई बिना दूध की गुड़ पड़ी चाय उसने छुई तक नहीं। दलिया बनाकर देने पर भी पिया नहीं।

दासन के वापस आने तक इंतजार करता रहेगा, ऐसा ही उसने कहा था न ? अब भी इंतजार कर रहा है—कभी भी न वापस आने वाले दासन का...

पौ फटने तक चटाई के पास बिना शीशे का चिराग जलता रहा। तकिए के नीचे कम्यूनिस्ट पार्टी का 'मैनिफेस्टो' था—सारे दुःख-दर्दों से छुटकारा देने वाला पवित्र ग्रंथ। नींद न आते समय एक बार जरा पढ़ते ही नींद आ जाती है, मन बेचैन हो तो शांत हो जाता है। मार्क्सिज्म—लेनिनिज्म उसकी भूख-प्यास मिटा देती थी—काम-विकार तक को।

"दुनिया के मजदूरो, संगठित हो जाओ। तुम्हारे पास खोने के लिए हथकड़ियां ही हैं।" 'मैनिफेस्टो' का अंतिम वाक्य पहली बार पढ़ते समय उसे लगा मानो वीर्यपात हो रहा हो।

वह पवित्र ग्रंथ भी आज उसके मन को शांत करने में असमर्थ सिद्ध हुआ।

पप्पन सोच रहा था—सिर्फ दासन के बारे में। पिछले दिन आधी रात को घर लौटते समय उसे लगा था न, कि दासन वापस आएगा ही नहीं ? मय्यषी नदी से आने वाली आधी रात की हवा फुसफुसा रही थी—दासन वापस नहीं आएगा, वापस नहीं आएगा...

अब दासन से कभी मिल न सकें, ऐसा भी संभव है। लंबे बारह साल तक। उतने समय में कितनी सारी तब्दीलियां आ सकती हैं। कितने ही लोग हमेशा के लिए आंखें मूंद सकते हैं। बारह साल का जेल-जीवन दासन झेल पाएगा ? पुलिस वालों ने हड्डी-पसली एक कर दी होगी। यह सोचते समय उसे गुस्सा नहीं, अदम्य वेदना महसूस हुई।

"पप्पन, जागीरदारी के जमाने में तुम बुजुर्आ बनो। बुजुर्आ के जमाने में तुम प्रोलिटेरियन बनो। लेकिन पप्पन तुम आद्यंत इंसान बने रहो।..."

पहले कभी पातार समुद्र-तट पर रिपब्लिक प्रतिमा के नीचे बैठकर बहस करते समय दासन ने कहा था। दासन ने जो कुछ कहा था, वह सब याद कर रहा था। आगे कभी न सुन पाने वाले दासन के शब्द उसके कान भूल न बैठें।

आंख की पहुंच से पार तक फैले पड़े कटे हुए धान के खेत। दूर पर पीलिया से पीड़ित नदी रेंग रही है। सवेरे की गाड़ी को उसने जाते देखा, जिसमें चंद्रिका कालेज जाया करती है। दासन होता तो अब तक रेल की पटरी के पास खड़ा होता।

दासन और चंद्रिका की कहानी आंदोलन में भाग लेने वाले सबको पता है।

"मय्यषी के आजाद हो जाने पर सबसे पहले दासन और चंद्रिका की शादी होगी।"

कणारन दादा कहा करते हैं। सिर्फ वासूट्टी की भौंहें ही टेढ़ी हो जातीं—कड़वा काढ़ा पीने जैसी।

"इश्क करने के लिए चुना गया बख्त। और सब खोपड़ी में आग भरे घूम रहे हैं यहां।"

"तुम और मैं किसी से इश्क नहीं करते तो वह हमारी नाकाबिलियत है, वासूट्टी !" पप्पन कहता।

यह सुनते ही वासूट्टी का पारा और चढ़ जाता।

"यहां कुछ लोगों का काम इश्क करना हो तो और लोग घर-बार छोड़कर तकलीफ क्यों उठाएं। हाथ-पैर में लकवा के शिकार पिता फाका करते-करते मर गए। दूसरे लोग यह सब क्यों झेलें ?"

"तुमसे भी ज्यादा त्याग करने वाला है दासन।"

"उसने कौन-सा त्याग किया है ? बड़े फ्रांसीसी साहब द्वारा दी गई नौकरी को ठुकराना ? और लोग लगी-लगाई नौकरी छोड़कर आए हैं।"

"अपने घर में पैर तक नहीं रख सकता, ऐसी हालत में पहुंच गया है दासन।"

"वह उसकी गलती है।"

"मुंशीजी के जेल जाने में दासन की गलती है क्या ? हम सब उसके जवाबदेह हैं।"

इतना होते-होते वासूट्टी का भाव बदल गया।

"तुम हर समय दासन की तरफदारी क्यों करते हो ?"

"मैं किसी की भी तरफदारी नहीं करता। मैं सच कह रहा हूं।"

"बड़े आए हो हरिश्चंद्र बनकर सच बोलने के लिए।"

"तुम सबको क्या हो गया, बेटो ? जब देखो तब नेवले और सांप की तरह रहते हो, यह तो बड़ी परेशानी की बात है।"

कणारन दादा बीच में बोल उठे। तब दोनों पीछे हट गए। यही है रोजमर्रे की बात।

वासूट्टी को अब दासन से ईर्ष्या करने की जरूरत नहीं। उसे अब दासन की तरफदारी करनी भी नहीं है। सारा कुछ खत्म हो चुका है।

पप्पन हाथों पर मुंह रखे बैठा रहा। लाख कोशिश करने पर भी वह अपने मन की बेचैनी को कम नहीं कर सका। दासन के अभाव में उसका एक जिगरी दोस्त तो हाथ से निकल ही गया है। इतना ही नहीं, इन आंदोलन करने वालों में उसके बारे में यदि कोई पूरी तरह जानता था तो वह दासन ही था। दासन का वियोग पप्पन को अनाथ बना रहा है।...

कटे पड़े धान के खेत के बीच से होकर जाने वाली चंद्रिका को देखकर उसकी बेचैनी बढ़ गई। छोटे-छोटे लाली लिए नारियल के पेड़ की छायाओं वाले नदी-तट की ओर वह चली जा रही है। किसलिए, यह पप्पन को पता है।...

दासन और चंद्रिका के आपसी संबंध के बारे में और किसी से भी अधिक पप्पन को पता है।

उस संबंध को 'प्रेम' नाम देकर पुकारने का मन नहीं हुआ है उसका। दासन ने भी एक बार कहा था, "मर्द के रूप में पैदा होने पर एक औरत को चुन लेना पड़ेगा। पूर्व जन्मों में ही इस जन्म के लिए मैंने चंद्रिका को चुन लिया था..."

"मन में आग लिए घूमने के दिनों में चंद्रिका एक तसल्ली थी।" दासन उससे कहा करता था।

चंद्रिका नदी-तट पर पहुंच चुकी थी।

उसे कुछ भी पता नहीं होगा। पता होता तो आती ही नहीं। वह भी इंतजार कर रही है—कभी न लौटने वाले दासन का।

काली-काली घटाओं में कनकमला की पहाड़ियां अदृश्य थीं। आसमान नीचे उतरता आ रहा है। नदी से आने वाली हवा में नमी थी। कनकमला के ऊपर पानी बरस रहा होगा।

दूर पर उथली मय्यषी नदी के सुनसान तट पर एक परछाईं जैसी चंद्रिका को वह देख रहा है। कितनी देर तक वह ऐसे इंतजार करती रहेगी ?

यह बेमतलब की इंतजारी अब आगे जारी नहीं रहने देनी है। जिस आदमी का वह इंतजार कर रही है, वह अब आएगा नहीं, ऐसा किसी को उससे जाकर कहना है। तकदीर उसे ही वह मार सौंप रही है, ऐसा पप्पन को लगा।

उसने उठकर कमीज पहन ली। गली में कीच थी—न जाने कब बरसे पानी की।

चंद्रिका से यह बात कैसे कही जाए ? उसके चेहरे पर देखते हुए वह खड़ा कैसे रह पाएगा ? उसे पता नहीं था। फिर भी वह उसकी ओर बढ़ा।

खेतों से ऊपर चढ़ते ही बरसा की पहली बूंद सिर पर पड़ी। हवा तेज हो गई थी। लाल-लाल नारियल के पेड़ों ने रोना शुरू कर दिया था।

यहां मिट्टी का रंग बदल गया है। मिट्टी जैसी बालू। उस पर उसने पैरों के निशान देखे। आपस में सटे हुए छोटे और बड़े दो जोड़ी पैरों के निशान। दासन और चंद्रिका के पैरों के निशान।

वह चंद्रिका के पास गया। उसके पैरों की आहट सुनकर भी उसने मुड़कर नहीं देखा। वह नदी की ओर देखती खड़ी थी। वह पीछे खड़ा रहा। उसके बाल हवा में उड़ रहे थे। दासन की उंगलियों के निशान वाले बाल...

"चंद्री !..."

उसने बुलाया। उसने न तो मुड़कर देखा और न ही पुकार सुनी।

क्या कहे, क्या करे, यह जाने बिना पप्पन पीछे खड़ा रहा। कुछ देर बाद उसे लगा कि वह रो रही है। बोलने की ताकत वह सहेज रहा था।

"रोओ मत।"

पप्पन ने लार पी ली। वह रो क्यों रही है। दासन के आने में देर हो जाने से ? ऐसा हो तो वह अब कभी भी वापस नहीं आएगा, यह पता चल जाने पर ?

"चंद्री..."

पप्पन ने एक बार फिर बुलाया। उसने उंगलियों से आंखें पोंछ लीं। उसने मुंह मोड़कर पहले पहल पप्पन को देखा। नदी का उथलापन लिए उसके चेहरे पर आंसू के निशान उसे दिख रहे थे।

"कालेज नहीं गई ?"

"नहीं।"

उसने सिर हिलाया। मतलब की बात करने का साहस न होने के कारण वह और न जाने क्या-क्या कहने लगा।

"अब कौन-सा साल है ?"

"पहला।"

फिर खामोशी का अंतराल। पानी बरसने लगा था। नदी के ऊपर उसने बूंदों को टपकते देखा। दूर पर कनकमला पर घटाएं उमड़-घुमड़ रही हैं। वहां तूफान उठ रहा है क्या ?

"एक बात बताने मैं आया हूं।"

उसने सिर उठाया नहीं। गालों पर सूखे आंसुओं के निशान थे।

"वायदा करो। तभी मैं बता पाऊंगा।"

जवाब नहीं मिला। रोओ मत, ऐसा कैसे कहा जाए ? दासन के लिए उसके अलावा आंसू बहाने वाला और है ही कौन ?

"दासन–" पप्पन ने फिर से लार निगल ली, "दासन कल वापस नहीं आया।"

"पुलिस ने पकड़ लिया। है न ?" चंद्रिका आंसू बहाते हुए मुस्कराई। वह चंद्रिका के चेहरे पर देखता हुआ भौंचक्का रह गया।

"मुझे पता चल गया पप्पन !"

एक काठ के उल्लू की तरह वह उसके चेहरे पर देखता खड़ा रहा।

"पप्पन जाओ।"

फिर उसके पास कहने को कुछ भी बाकी नहीं था। कुछ करने को भी नहीं था। पप्पन का फर्ज पूरा हो गया। अब वह जा सकता है।

पानी जोर से बरस रहा था। पप्पन घर वापस पहुंचा। लगातार पानी बरसने से खेत डूब गए। दोपहरी ढल गई। तब भी दूर नदी-तट पर खड़ी चंद्रिका को वह देख सकता था।

मामा का हाथ पकड़कर वह सीढ़ियां चढ़ी। चंद्रिका को देखकर लीला से रहा न गया। पानी में पूरी तरह भीग गई थी। साड़ी का छोर बरसात के पानी पर लहरा रहा था। बाल खुले पड़े थे।

"तू कहां थी इतनी देर तक ?"

चंद्रिका कुछ कहे बिना अंदर चली गई। वे पीछे-पीछे गईं।

"कहां हैं तेरी किताबें ?"

हाथ में किताबें नहीं थीं। कहां रख दीं, यह उसे याद नहीं था।

"नदी-तट पर बैठी थी बरसात में।"

मामा ने कमीज उतार दी। उन्होंने सिर और गर्दन का पानी तौलिया से पोंछ डाला।

"बुलाने पर सुने तब न ? कहने पर माने तब न ?"

मामा ने ब्योरा दिया, "इस लड़की से तो तंग आ गया। यहां तक कैसे आ पाई, कुछ पता नहीं।"

लीला को गुस्सा आया या दुःख हुआ, कुछ पता नहीं।

उसने चंद्रिका का सिर पोंछ दिया। जुकाम से बचने के लिए काली मिर्च का चूर्ण सिर पर मल दिया। कुर्सी पर बिठाकर एक कंबल से ढंक दिया।

"दासन दादा..."

कंबल ओढ़े वह फूट-फूटकर रोई। बुखार आने जैसे उसकी ठोढ़ी कांप रही थी।

"वह सब कुछ सहने के लिए तैयार होकर ही निकला है।"

लीला को मन में दुःख था। बाहर दिखाया नहीं।

आज नहीं तो कल दासन को यह सहना पड़ेगा, ऐसा उसे डर था। अंत में वही हुआ।

वह चंद्रिका को तसल्ली नहीं दे सकी। कौन दे सकता है ?

पानी लगातार बरसता रहा। नदी घहराती हुई बह रही थी। खेत धीरे-धीरे पानी में डूब गए।

मय्यषी से समुद्र का गरजना हमेशा सुनाई पड़ता था।

प्रलय होने वाली है क्या ?

दूसरे दिन के अखबारों में मुखपृष्ठ पर ही दासन के गिरफ्तार होने की खबर थी, उसकी फोटो भी।

पांडुचेरी में पढ़ते समय की फोटो। छोटे-छोटे बाल और घनी मूंछ। आंखों में चट्टान की दृढ़ता।

दासन के लिए बहुतों ने आंसू बहाए। कौसू अम्मा बेहोश-सी थीं। गिरिजा के रोने के लिए एक कारण और हो गया। आंसू सूख जाने वाली उसकी आंखें और भी आंसू बहा सकती हैं क्या ?

दावीद साहब की अदालत ने दासन को बारह साल कारावास की सजा दी थी।

वैसे अपने द्वारा शुरू किया गया यज्ञ खत्म होने के पहले दासन तिरोभूत हो गया।

तीस

गिरिजा की शादी बिना किसी धूमधाम के संपन्न हो गई। इकलौती बेटी है। दो-चार लोगों को बुलाकर यथासंभव शोभा के साथ संपन्न करने की इच्छा मुंशीजी की नहीं थी, ऐसी बात नहीं है।

"किसी मर्द का हाथ पकड़ाने के लिए मेरी एक ही बेटी है। फिर भी ऐसे एक का हाथ पकड़ना ही बदा है उसे, यह किसे पता था !"

अच्चू ही उनकी बेटी को मंगल-सूत्र पहना रहा है—कितनी ही दलीलें पेश करने पर भी उसे तसल्ली नहीं होती। मन को चैन नहीं पड़ता।

"शामियाना डाले बिना, शहनाई बजवाए बिना, दो-चार लोगों को बुलाए बिना कैसी शादी है ?"

कुरम्बी अम्मा से सहा नहीं गया। उन्होंने फेंटे से डिबिया निकालकर चुटकी भर सुंघनी हथेली पर उड़ेल ली।

गिरिजा के सयानी होने के पहले ही उसकी शादी का सपना देखने लगी थी न ? अच्चू ने उसे खुश कर दिया। वह है गिरिजा का मर्द, ऐसा सोचकर वह फूली नहीं समाई। फिर भी शामियाना और शहनाई के बिना शादी कैसी ?

"और कुछ न हो तो कम-से-कम सामने तो शामियाना डलवा देना, दामू !"

"शामियाना डलवाकर शादी करवाने की हालत है यहां क्या ? एक जेल काट रहा है। उसकी मां को चारपाई से उठे कितने दिन हो गए ?"

कौसू अम्मा न तो नहाती हैं और न खाती हैं। दासन के जाने के बाद से चारपाई से उठी ही नहीं हैं। गिरिजा को तो कोई आंसू के बिना देख ही नहीं पाता। यह कोई शादी का घर है या मरघट ?

कुरम्बी अम्मा ने चुटकी भर सुंघनी फिर से उड़ेलकर सूंघ ली। वे बरामदे के खंभे के सहारे झुकी बैठी रहीं। इस घर को कुछ हो गया है। यहां आंसू सूखते नहीं दीखते। पहले तो गरीबी और तकलीफें ही थीं। कोई रोता नहीं था। आज तो हर समय वही हो रहा है।

घर-घर में खुशियां मनाई जाएं, यही तमन्ना थी कुरम्बी अम्मा की। वह मय्यषी

के लोगों को धूमधाम और हंसी-खुशी से रहते देखने की तमन्ना रखने वाली थी। शाम के समय पातार समुद्र-तट पर शिरीष के वृक्षों के नीचे से होते हुए हाथ में हाथ डाले, हवा खाने-वाले गोरे साहबों और मेमों की तरह... । घोड़ागाड़ियों पर बैठे हंसते हुए और टोपी उतारकर हवा में हिलाते हुए सैर करने वाले कोट-पतलून वालों जैसे... । रंगीन बत्तियों, बैंड और भीड़ वाले कत्तोर्स ष्ुईए (फ्रेंच रिपब्लिक डे) की तरह...

लेकिन कहीं कुछ गड़बड़झाला है, ऐसा उन्हें लगता था। जोशीले नौजवान जेल जा रहे थे। मां-बहनों की आंखों से आंसू कभी सूखते ही नहीं। सड़क पर पुलिस और फौज के सिपाही बढ़ते दिखते।...

कुरम्बी अम्मा आंखें बंद किए बैठी रहीं। आंखें मुंदने से पहले क्या-क्या देखना-सुनना पड़ेगा, कौन जाने !

अच्चू ने इरिमीस के पास एक मकान किराए पर ले लिया। उसने रामन बढ़ई को घर में बुलाकर चारपाई और मेज-कुर्सियां बनवाईं। लोहारों से तांबे के बर्तन और थालियां ले आया। उसके घर में रोज कोई-न-कोई कुछ-न-कुछ सामान लेकर आता।

शादी के बहुत पहले ही अच्चू का घर सज गया। एक दिन खाना खाकर दफ्तर जाते समय अच्चू ने कहा, "शाम को मैं नहीं आऊंगा।"

"हूं।"

मुंशीजी बरामदे में बैठे थे।

"घर में सब सामान हो गया। आज से घर में रहना शुरू कर दूं, यह सोच रहा हूं।"

"अच्छा।"

जब घर-द्वार नहीं था, जानवरों की तरह घूमता-फिरता था, तब यहां रहा। यहीं रहकर आदमी बना। अब अपना अता-पता हो गया, घर हो गया। अब वह यहां क्यों रहे ?

"अच्छा रहा, अच्चू।"

मुंशीजी ने दुबारा कहा। अच्चू को सुपाड़ी के इश्तहार वाले झोले में अपनी धोती-कमीज और 'शेविंग सेट' रखते हुए वे खड़े देखते रहे।

किसी जमाने में अच्चू की सबसे कीमती संपत्ति कटारी थी जो अब उस झोले में नहीं थी। बहुत समय तक वह खिड़की पर पड़ी रही। धार पर जंग लग गई। एक दिन वह कटारी उस खिड़की से गायब भी हो गई।

सबकी आंख बचाकर अच्चू ने उसे मय्यषी नदी के सुपुर्द कर दिया था।

"तो मैं जा रहा हूं।"

अच्चू झोला पकड़े धीरे-धीरे सड़क पर से चलता बना।

आंखों से ओझल होने तक मुंशीजी और कुरम्बी अम्मा उसे देखती खड़ी रहीं।

अच्चू के चलने के ढंग में भी परिवर्तन आ गया था। कटारी घुमाते चलते बदमाशों जैसी चाल नहीं है अब। अब बातचीत करने, चलने वगैरह सबमें एक तरह की शिष्टता आ गई है।

अब अकेला चला करता है। पुराने संगी-साथी नहीं हैं।

"मोम कोप्पेन (प्यारे दोस्त), तुम हमें भूल गए ?" एक दिन पुलिस वाले अंत्रु ने रास्ते में रोककर पूछा। अच्चू यों ही जरा मुस्करा दिया।

वह पुलिस वाला अंत्रु—मय्यषी में शरणार्थी बनकर आने के दिन से कितने ही सालों तक उसका जिगरी दोस्त था। उसके साथ कितनों को मारा पीटा था। कितनी-कितनी बार रंडीबाजी की थी।...

अब वह ताड़ी के ठेके पर जाता नहीं। जाता भी तो नाम के वास्ते घूंट भर पी लेता।

दूसरे दिन अच्चू कुरम्बी अम्मा को अपना घर दिखाने के लिए ले गया। उन्होंने जरीदार धोती पहनी। हाथी-दांत वाली डिबिया फेंटे में रख ली। पैदल चलने भर की दूरी थी। फिर भी अच्चू घोड़ागाड़ी ले आया। अच्चू के साथ घोड़ागाड़ी पर बैठते समय वे फूली नहीं समाईं। ब्रिगादिए चेट्टियप्पा के घर के सामने पहुंचते समय उन्होंने गाड़ी रुकवा दी।

"नाणी, नाणी, तू यहां नहीं है क्या ?"

"कुरम्बी अम्मा, तुम कहां हो ?"

नाणी और देवी बाहर निकलीं।

"अच्चू के घर।" गर्व से उन्होंने बताया, "नए जमाई का घर है न, वह ? इसीलिए।"

घोड़ागाड़ी में बैठे-बैठे नाणी से बातें करते समय कुरम्बी अम्मा का गला रुंध गया—आनंद और गर्व से। कितने ही समय से मय्यषी के लोगों को घोड़ागाड़ी पर सैर करते देखती आ रही हैं वे। लेकिन वे कितनी बार घोड़ागाड़ी पर सवार हुई हैं ? जिंदगी-भर में सिर्फ एक बार...

वह लेस्ली साहब के जमाने में था। मिस्सी के बीमार हो जाने वाले दिन गस्तोन घोड़ागाड़ी लेकर बुलाने आया।

उसके बाद कितना अरसा बीत गया। लेस्ली साहब स्वर्ग सिधार गए। मिस्सी भी उनके पीछे चल बसीं। दाढ़ी-मूंछें बढ़ाए गस्तोन साहब अपने कमरे में कैदी की तरह जी रहे हैं...

"आओ, अंदर आओ, जरा चाय पीकर जाओ।" नाणी ने न्योता दिया। पहले अच्चू करीब-करीब रोज चेट्टियप्पा से मिलने आया करता था न ? वहां सीढ़ियां चढ़े महीने ही बीत गए।

"अभी नहीं। जब ब्रगादी होंगे, तब आऊंगा।"

उसने बहाना बनाया।

अच्चू और कुरम्बी अम्मा आगे चल दिए। और बहुतों के घर के सामने भी गाड़ी रुकवाकर कुरम्बी अम्मा ने बातें कीं।

उनके लिए वह दिन अविस्मरणीय था। घोड़ागाड़ी के मालिकों को श्रद्धा की दृष्टि से देखने वाली और घोड़ागाड़ी का सपना देखने वाली उनको उस गाड़ी पर बैठने के लिए सालों इंतजार करना पड़ा।

कुरम्बी अम्मा रोज या हर दूसरे दिन अच्चू के घर जातीं। रामन बढ़ई द्वारा बनाई गई चारपाई पर लेटतीं। जिंदगी में पहली बार वे चारपाई पर लेटी थीं। केलुअच्चन के समय से लेकर वे काठ के संदूक पर ही तो लेटती आ रही हैं।

"अच्चू की शादी हो जाने के बाद वे उनके साथ ही रहा करेंगी, ऐसा कुरम्बी अम्मा ने कहा। अच्चू के लिए वह एक खुशी की बात थी।

शादी के दिन को कुरम्बी अम्मा अपनी उंगलियों पर गिनने लगीं। आखिर कालचक्र के अविरत भ्रमण में वह दिन आ भी पहुंचा।

तब भी गिरिजा में कोई परिवर्तन नहीं आया। बोलने की ताकत खो जाने जैसे वह बिना हिले-डुले बैठी रही। न जाने किस-किसने उसे नहलाया-धुलाया और रेशमी साड़ी पहना दी। सिर पर चमेली के फूल खोंस दिए। कई बार उन लोगों ने उसकी आंखों में काजल और गालों पर पाउडर लगाया। वह सब उसकी अश्रुधारा ने बहा डाला।

किसी को भी न्योता नहीं दिया था। मेयर के दफ्तर जाते समय अच्चू और गिरिजा के अलावा पांच-छह लोग ही थे। गवाह के रूप में आए नाणू वकील और ओस्सिये नायन भी साथ थे।

मेयर के दफ्तर के रजिस्टर में दस्तखत करने के बाद वे अच्चू के घर जा पहुंचे। वहां जलपान का इंतजाम किया गया था।

"मैं यहां का बाशिंदा नहीं हूं। फिर भी मेरे मेल-जोल वाले दो-चार लोग हैं। उन्हें बुलाकर कम-से-कम एक गिलास चाय पिलाई जाए, ऐसी मेरी ख्वाहिश है।"

मुंशीजी के धूमधाम का विरोध करने पर अच्चू ने कहा। मुंशीजी की बोलती फिर बंद हो गई। वह अच्चू का अपना मामला है न।

अच्चू के घर के सामने घोड़ागाड़ियां और कारें आकर खड़ी होने लगीं। मेहमान आने लगे।

उन लोगों ने अच्चू से हाथ मिलाते हुए उसका अभिनंदन किया।

पार्टी खत्म होते-होते बहुत देर हो चुकी थी। इरिमीस की पुरानी समाधियां और क्रूस चांदनी में जाग रहे थे। ताड़ी के ठेके बंद हो चुके थे। कुरम्बी अम्मा लेस्ली साहब के घोड़े की टापों की आवाज सुनने लगी थी।

आखिरी मेहमान के भी चले जाने के बाद अच्चू न जाने क्यों टूटा-सा बैठ

गया। आगे वाले दरवाजे की कुंडी बंद करते समय हाथ कांपने लगे।

आखिर वह दिन आ ही गया।—अच्चू के पुरुषार्थ पाने का दिन।

शयन-कक्ष में प्रवेश करते समय पैर भी कांपने लगे। मेयर के दफ्तर से लौट आने के बाद उसने गिरिजा को देखा ही नहीं था। मेहमानों की खातिरदारी में जुटा रहा। आंसुओं से गीले उसके गालों के पाउडर की गंध के लिए वह लालायित था। उसके आंसू पोंछने के लिए वह तरस रहा था।

अंदर अंधेरा था। देहरी पर वह हिचकिचाता खड़ा रहा।

"गिरिजा !..."

बुलाए बिना ही अंदर घुस सकता था। कुछ भी कर सकता था। फिर भी उसने बुलाया। लेकिन क्या आवाज बाहर निकली ?

"मुझसे नाराज हो ?"

वह अंदर घुसे बिना ही खड़ा रहा। नाराज थी, यह उसे पता था। उसके लगातार बहने वाले आंसू वह देख रहा था। लेकिन अच्चू ने मन ही मन प्रतिज्ञा की थी—"प्यार से ही मैं तुम्हारे आंसू पोंछूंगा। प्यार से मैं अपना भूतकाल जलाकर भस्म कर दूंगा। प्यार से मैं तुम्हें वश में कर लूंगा।"

उसके जवाब के इंतजार में वह खड़ा रहा। पल बीतते जा रहे थे। वह अंदर घुसा। चमेली के फूलों और पाउडर की सुगंध की जगह वार्निश की बू ही उसे महसूस हुई।

उसने दियासलाई जलाई। रामन बढ़ाई द्वारा बनाई गई चारपाई खाली पड़ी थी। उसने जोर से उसका नाम पुकारा। बत्तियां एक-एक करके जल उठीं। जलता चिराग हाथ में पकड़े वह बाहर निकला। चांदनी में डूबे अनफूले पारिजात के नीचे से उसने सिसकियां सुनीं।

"गिरिजा !"

"मैं नहीं आऊंगी।"

उसने घुटनों में मुंह छिपा लिया। बालों वाले फूल जमीन पर विखरे पड़े थे। ब्लाउज का आगे वाला हिस्सा आंसुओं से भीगा था। चिराग की रोशनी में वह सब कुछ देख सका।

"यह कैसा बच्चों का खेल है ? कोई देख ले तो ?"

उसने घुटनों से सिर उठाया ही नहीं। थोड़ी देर तक वह निश्चल खड़ा रहा।

अचानक वह उसकी ओर मुड़ा। मय्यषी की पुत्रियों से बलात्कार करने वाला पुरुष। उसके शिला जैसे मजबूत हाथों ने उसे एक बच्ची जैसे उठा लिया। उसे हाथों में उठाए एक तूफान की तरह वह शयन-कक्ष की ओर बढ़ा...

पीछे के दरवाजे बंद हो गए।

कुकुही ने बांग दी। बंद दरवाजों के पीछे से गिरिजा की सिसकियां सुनाई

पड़ रही थीं। लेकिन मय्यषी की पुनीत माता के गिरिजाघर से प्रभात के घंटानाद होते समय उसके खिलखिलाकर हंसने की आवाज और चूड़ियों की खनखनाहट सुनाई देने लगी।

सवेरे फटे भगचर्म के साथ बाहर आई तो चेहरे पर आंसुओं के निशान नहीं थे। गाल लाल-लाल और आंखें खिली-खिली थीं।

हल्की-सी चाल और आवाज के लिए उसका मन तरसने लगा। वह रोमांचित हो उठी। हंसी। अच्चू नामक पुरुष ने उसके सारे दुःखों को मिटा दिया।

फिर कभी गिरिजा की आंखें गीली नहीं हुईं।

इकत्तीस

दासन के अभाव ने कणारन दादा को बहुत बेचैन कर दिया। आंदोलन के नेता यद्यपि वे थे, लेकिन उसका प्रमुख सूत्रधार दासन ही था। गोरों का इतिहास तथा मनोविज्ञान और किसी से भी ज्यादा उसे मालूम था। दासन को सजा दी गई थी, यह जानने पर कुछ दिन तक कणारन दादा का खाना-पीना और सोना हराम हो गया। सहारे की लकड़ी खो जाने वाले लंगड़े की तरह वे चकराने लगे।

"कणारन दादा, उसे बारह साल की सजा ही मिली है। उन लोगों ने उसे जान से नहीं मार डाला है। इसलिए हमें खुश होना चाहिए।"

यह वासूट्टी ने कहा था। पप्पन कुछ भी बोले बिना बैठा था।

"गलती तो मेरी ही है। दासन से ज्यादा है मेरी उम्र। मय्यषी जाते समय मुझे उसे रोकना चाहिए था।"

"यह सब कहने से अब क्या फायदा ?"

"गलती तो हम लोगों की नहीं है। उसके पिता की है उस हरामजादे की, जिसने अपने कलेजे के टुकड़े के साथ ऐसी करतूत की। बाहर पुलिस वालों के रहते उसे फटकारकर घर से ढकेल दिया था न ?"

पप्पन का चेहरा तमतमा उठा।

"गलती किसी के भी मत्थे मढ़ने से कोई फायदा नहीं। जो होना है सो समय आने पर होकर ही रहेगा।"

कणारन दादा ने अपने-आपको तसल्ली देने की कोशिश की। वे भाग्य और भगवान पर विश्वास रखने वाले हैं। आजादी की लड़ाई के चरमसीमा पर पहुंचते समय भी वे मंदिर जाया करते थे। पौष और माघ के महीनों में वे मछली नहीं खाते थे।

कुछ दिनों तक पित्त रोगी की तरह कणारन दादा ऊंघते बैठे रहे। लेकिन वे यह सब अधिक दिन तक जारी न रख सके। वे कर्मक्षेत्र में थे। कर्तव्यों ने उन्हें जगा दिया। मय्यषी का रोदन फिर से उनके कानों में गूंजने लगा।

दासन का दुःख भूलकर वे लक्ष्य की ओर बढ़ने लगे।

मय्यषी की सीमाओं पर स्वतंत्रता के खद्दरधारी योद्धा दिन दूने रात चौगुने

बढ़ने लगे। गांधीजी के जमाने में सत्य और स्वतंत्रता का संदेश फैलाने वाले देवदूतों के पुनरवतार थे वे।

एक बार मय्यषी में छिपे तौर पर काम करने वाला जनार्दन एक खबर लाया—

"सेक्रत्तेर करुणन हामी भरने की हालत में हैं।"

इस बीच मय्यषी के अनेक कर्मचारी नौकरी से इस्तीफा देकर आंदोलन में शामिल हो गए थे। त्रावो प्यूब्लिक का अब्दुल्ला, ओस्सिये नाथन, कूर कोम्प्लमान्तेर के प्रोफेसर केशवन, लबूर्दने कालेज की अध्यापिका लक्ष्मी जैसे कितने ही लोग। लो, अब गोरों का पहरेदार करुणन भी समय की पुकार सुनने लगा है।

कणारन दादा ने कई बार सेक्रत्तेर करुणन के नाम चिट्ठियां लिखी थीं। समय की पुकार सुनने की मांग की थी उनसे। गोरों के दलाल के रूप में अब तुम अधिक समय तक रह नहीं पाओगे। कणारन दादा ने लिखा। आज नहीं तो कल वे चले जाएंगे। तब हम लोग तुम्हें सजा देंगे। उस सजा से बचो। मय्यषी के लोगों के प्रति किए गए अन्याय और अत्याचार हम माफ कर देंगे। तुम हम लोगों के साथ आओ।...

पहले तो करुणन वे सारी चिट्ठियां मसल-मसलकर फेंकता रहा। फिर पढ़ना शुरू कर दिया। एक बार कणारन दादा की चिट्ठी गोद में रखे वे बहुत देर तक बरामदे में आरामकुर्सी पर चिंता में डूबे पड़े रहे। उसे लगा जैसे उनका सिंहासन हिल रहा है। पैरों तले की जमीन खिसक रही है।

उन्होंने दुबारा कणारन दादा की चिट्ठी पढ़ी। काले सूजे चेहरे पर पसीना आ गया। शराब के नशे में चूर उनका चेहरा पीला पड़ गया। आखिर जिस हाथ में चिट्ठी थी, वह कांपने लगा।...

समय की पुकार सेक्रत्तेर करुणन के कानों में जा पहुंची थी।

"सोते क्यों नहीं ?"

सौमिनी अम्मा ने कई बार बरामदे में आकर पूछा। वे शयन-कक्ष में गए ही नहीं। या तो वे आरामकुर्सी पर लेटे रहे या हाथ पीठ पीछे बांधे चहलकदमी करते रहे। वैसे कुञ्चक्कन के द्वारा जलाई गई नगरपालिका की बत्तियां बुझ गईं।

"नींद नहीं आती। तुम जाकर सो जाओ, सौमिनी !"

नींद आती क्यों नहीं, यह उसने पूछा ही नहीं। अंदर जाकर लेट गई।

दशाब्दियों से मय्यषी के शासन की बागडोर संभालने वाले सेक्रत्तेर करुणन के मन का क्षोभ सौमिनी अम्मा भांप नहीं सकीं। मय्यषी में जो कुछ हो रहा था, उसका उसे कुछ भी पता नहीं था। दिन का ज्यादातर हिस्सा वे सोकर बिता देती थीं। बाकी समय पूजा के कमरे में बिताती थीं। वे जरूरत से ज्यादा मोटी, आंखों में रहम वाली एक भोली-भाली औरत थीं।

आधी रात बीत चुकी थी। सफेदी पुती चहारदीवारी के बाहर वाली सड़क

सुनसान पड़ी थी। रात में बाहर निकलने में मय्यषी के लोग डरने लगे थे। संदेह हो जाने पर पुलिस वाले या गुंडा लोग मारपीट करेंगे...।

शराब के नशे में जिंदगी बिताने वाले आलसी और निठल्ले मय्यषी के लोगों के जीवन में संघर्ष घुस आया है।

उस रात को ही नहीं, कई रातों में करुणन वैसे नींद न आने के कारण बरामदे में चहलकदमी करते रहे। वे याद कर रहे थे—परदे के पीछे चले जाने वाले अच्छे दिनों के बारे में। कोट-पतलून पहने टोपी लगाए घोड़ागाड़ी पर सवारी करने, बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले में दावत पर जाने, शाम को सौमिनी के साथ समुद्र-तट पर हवा खाने के दिन...वे दिन खतम हो रहे हैं।

घोड़ागाड़ी की जगह पर आज कार है। लेकिन आज दावतें नहीं हैं। शाम को हवा खाने के लिए गोरों या उच्च पदाधिकारियों को हिम्मत नहीं होती। संघर्ष के दिन। छिपे हुए खतरे के दिन।

समय बदल रहा था। उसकी समझ में आ गया। बीते हुए दिन अब वापस नहीं आएंगे तो फिर उनके बारे में सोचकर खोपड़ी खराब क्यों की जाए ? समय के अनुसार उन्हें भी बदलना है। उसने तय किया। वैसे उन्होंने कणारन दादा की चिट्ठियों का एक जवाब पहली बार लिखा। कणारन दादा उससे फूले नहीं समाए।

"जनार्दनन, तुम जाकर करुणन से मिलो।"

"लेकिन कणारन दादा, उस पर भरोसा किया जा सकता है क्या ?"

वासूट्टी को डर हुआ। कणारन दादा अपने प्रतिनिधि जनार्दनन को और किसी के पास नहीं, सेक्रत्तेर करुणन के पास भेज रहे हैं। डटे बिना कैसे रह सकता है ? पकड़कर पुलिस के हवाले नहीं कर देगा, इसका क्या पता ?

"अब वे हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। कुछ करें तो वह आग से खेलना होगा।"

जनार्दनन हिम्मती था।

सेक्रत्तेर करुणन के बंगले में घुसते समय रत्ती भर भी भय नहीं था। मय्यषी के लोगों को सताते रहने का एक जमाना था। आज वह जमाना उनके खिलाफ खड़ा है। अब उनमें सताने की हिम्मत नहीं रही।

कणारन दादा की चिट्ठी लेकर गया था। इसलिए जनार्दनन को पहचानने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं हुई।

"बैठो...।"

ऊपर वाले दफ्तर के कमरे में जनार्दनन बैठा था। दीवार पर बड़े फ्रांसीसी साहब का मढ़ा हुआ एक चित्र टंगा था।

"मोस्सिए कणारन की सब चिट्ठियां मुझे मिलती रही हैं..."

करुणन जनार्दनन के सामने बैठ गया। वह फीतेदार पतलून पहने हुए था।

इसलिए असामान्य रूप से बढ़ा हुआ सफेद बालों वाला बच्चा जैसा दीख रहा था करुणन।

पांच मिनट की बातचीत से ही जनार्दनन को विश्वास हो गया कि किसी फंदे में फंसाने का इरादा नहीं है। तब वह खुलकर बातें करने लगा। बीच-बीच में बीड़ी सुलगाते हुए उसने विमोचन आंदोलन की प्रगति का ब्योरा दिया।

"अब हमें कोई भी नहीं रोक सकता—यहां तक कि ईश्वर भी नहीं।" जनार्दनन ने उद्दंडता से घोषणा की।

"सरकारी कर्मचारी, आप लोग हमारा साथ दें। यह शासन-सत्ता को नाकाम करने में सहायक सिद्ध होगा। इस तरह हमारा काम कम हो जाएगा। आप क्या कहते हैं, मोस्सिए ?"

करुणन कुरसी पर जरा उचककर बैठ गया।

"पैसा जितना चाहो, मैं दे दूंगा। और कुछ करने के लिए आप लोग मुझे मजबूर न करें।"

"आपका सिर्फ पैसा ही नहीं, आप लोगों की भी जरूरत है हमें।"

"मेरी मजबूरी आप लोग समझने की कोशिश कीजिए। मैं कौन हूं, यह आप लोगों को पता है न ?"

"पता है। बड़े फ्रांसीसी साहब का दाहिना हाथ बने शासन की बागडोर संभालने वाले सेक्रत्तेर करुणन। अच्छी तरह पता है। इसीलिए हम लोग आपको मजबूर कर रहे हैं।"

करुणन उठकर कमरे में चहलकदमी करने लगे। उनका मोटा-तगड़ा शरीर कुर्सियों और सोफों के बीच से लक्ष्य-बोध नष्ट हो जाने जैसे चलता-फिरता रहा। बड़े फ्रांसीसी साहब का चेहरा उनके मन की आंखों के सामने साफ-साफ दीखने लगा। दो-तीन दशाब्दों तक गोरों की सेवा की। उनका नमक खाकर बड़ा हुआ वे कणारन से जा मिले, यह जानने पर बड़े फ्रांसीसी साहब सह पाएंगे क्या ?

अपने ही मालिक को काट खाने वाले कुत्ते की तरह वे सिमट गए।

वे टहलते ही रहे। वैसे चलते-चलते पैर घिस जाएंगे; ऐसा लगा। करुणन का चेहरा पसीने से सराबोर हो गया। वे हांफने लगे।

करुणन के भाव-परिवर्तन को देखते हुए उनके ओठों के चलने की प्रतीक्षा में जनार्दनन बैठा रहा।

आखिर सेक्रत्तेर करुणन के पैर निश्चल हो गए। वे जनार्दनन के सामने आकर खड़े हो गए। उनके पीले पड़े ओठ हिलने लगे :

"जाकर कणारन से कहो कि वह जो कुछ कहेगा, वह सब मानने के लिए मैं तैयार हूं।"

"मेर्सी मोस्सि..."

जनार्दनन खुशी के साथ उठ खड़ा हुआ। वह कालीन बिछी सीढ़ियां बहुत जल्दी-जल्दी उतरा। बंगले का फाटक पारकर तेजी से चलता बना...।

"वह उस कुट्टिअच्चन का छोटा बेटा है न ? वह इस आधी रात के समय क्यों आया ?"

जनार्दनन के चले जाने पर सौमिनी अम्मा धीरे से बाहर निकलीं। करुणन ने उनकी बात सुनी नहीं। उन्होंने सिगरेट का डब्बा खोलकर एक 'गोल्वा' सिगरेट निकालकर सुलगाई। मन के बेचैन हो जाने पर ही कभी-कभी वे सिगरेट पिया करते हैं। पिछले कुछ दिनों में उन्होंने इतनी अधिक सिगरेटें पी हैं कि जिसका कोई हिसाब नहीं।

तीन-चार दिन बीत गए।

"सौमिनी, तुम बच्चों को लेकर कण्णूर चली जाओ। यहां कोई चैन नहीं। झंझटें खतम हो जाने के बाद वापस आना काफी है।"

"यहां कौन-सी झंझट है अब ?"

"झंझटें आने वाली हैं।"

"तो आप ?"

"छुट्टी मिले तो मैं भी आ जाऊंगा। तुम बच्चों के साथ आज ही चली जाओ।"

सौमिनी अम्मा ने बात मान ली। उन्हें संदेह करने जैसी कोई बात नहीं लगी। उसी दिन वे अपने तीनों बच्चों को लेकर अपने घर चली गईं।

दूसरे दिन रात को सीमा पार करने का निश्चय करुणन ने कर लिया था। सरकारी कर्मचारी और दूसरे लोग मय्यषी छोड़कर आए दिन बाहर भाग रहे थे। उसको रोकने के लिए सीमा पर पुलिस का बंदोबस्त किया गया था।

सीमा पार करने का समय और स्थान कणारन दादा ने पहले से ही निश्चित कर लिया था। सभी कुछ उसने विस्तार के साथ लिखकर करुणन को सूचित भी कर दिया था। आम आदमी के लिए सीमा पार करना खतरा मोल लेना है। फ्रांसीसी पुलिस की गोलियों का शिकार बन सकता है। लेकिन गोरों के दाहिने हाथ सेक्रत्तेर करुणन के लिए यह आसान होगा। उस पर पुलिस वाले कैसे संदेह करेंगे ? मय्यषी के सारे लोगों के चले जाने पर भी गोरों का साथ देने का फर्ज है न उसका ?

उस दिन भी रोज की तरह सेक्रत्तेर करुणन ने कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए कार में बड़े फ्रांसीसी साहब के दफ्तर जाकर काम किया। दोपहर में गोरों के साथ खाना खाया। शाम को सेक्रत्तेरिया से बाहर निकलते समय उसकी आंखों में आंसू भर आए। कोट की जेब से रूमाल निकालकर दूसरों की आंख बचाकर उन्होंने आंसू पोंछ लिए। फाटक के पास कार खड़ी थी। उसने अंतिम बार मुड़कर देखा। लहराने वाले समुद्र के पैरों तले, मय्यषी नदी के तट पर, पहाड़ी पर बना हुआ बड़े फ्रांसीसी साहब का बंगला। बंगले की परछाईं में स्थित सेक्रत्तेरिया। चौबीस साल से भी अधिक

समय जहां बैठकर उसने शासन किया, वह सेक्रत्तेरिया।...

अदिए विदा ! उनके ओठ फुसफुसाए।

सौमिनी और बच्चों के अभाव में खाली पड़े बंगले में बैठकर उन्होंने बोतल खोली। रात के ग्यारह बजे जब जनार्दनन आया तो बोतल खाली हो गई थी।

जनार्दनन के साथ सिर झुकाए वे कार में घुसे। सीमा से कुछ दूर पर उन्हें उतारकर ड्राइवर कार वापस ले गया। करुणन हांफते हुए आगे बढ़े।

सीमा पर अंधेरा था। मुख्य सड़क से दूर पर पहरा देने वाले पुलिस के पहरेदार सामू ने सलामी दी। वह कणारन दादा से हमदर्दी रखने वाला था। सीमा के उस पार हलके अंधेरे में कणारन दादा का दुबला-पतला रूप करुणन ने देखा। अंधेरे में उनके दांत चमक रहे थे।

"धन्यवाद करुणन !"

अपनी ओर आने वाले करुणन को देखकर कणारन मुस्कराए। उन्होंने करुणन को बांहों में भर लिया। तुरंत कणारन दादा ने अपने हाथ खींच लिए।

करुणन की देह बर्फ जैसी ठंडी थी। वे अपनी जगह पर खड़े-खड़े जरा चकराए। उसके बाद पीछे गिर गए। जाल से बंधे सफेद बालों पर लगी टोपी दूर जा गिरे।

पुलिस वाले सामू और जनार्दनन के भौंचक्के खड़े रहते समय कणारन दादा सेक्रत्तेर करुणन के पास घुटनों के बल खड़ा रहा। उसकी सांस रुक गई थी। कणारन दादा ने देखा—सेक्रत्तेर करुणन का निर्जीव शरीर सीमा के उस पार फ्रांसीसी मिट्टी में पड़ा विश्राम कर रहा है।

उस मिट्टी से वे जाएं तो जाएं कहां ?

बत्तीस

सत्ताईस अप्रैल, 1954 के दिन विमोचन आंदोलन के योद्धाओं की एक टोली ने बंदूकों को चुनौती देते हुए मय्यषी के एक हिस्से चेरुकल्लायी को विमुक्त करने की कोशिश की। फौज ने गोली चला दी। कामरेड अच्युतन और अनन्तन शहीद हो गए।

सवेरे की गाड़ी से बडकरा हाट में जाने वाला कुञ्ञाणन वापस आ गया।

"कुञ्चक्कन है न वह ?"

कुरम्बी अम्मां सवेरे उठकर बैठक में बैठी थीं—दिन की पहली सुंघनी का मजा लेते हुए। उसकी आंखों की रोशनी बहुत कम हो गई। बुद्धि भी क्षीण हो गई है।

"मैं कुञ्ञाणन हूं कुरम्बी अम्मा !"

"होते-होते अब आंखों की रोशनी भी चली गई, कुञ्ञाणन ! तुम इतने तड़के कहां से आ रहे हो ?"

"हाट गया था। सीमा पार करने ही नहीं देते वे—उस कणारन के लोग।"

"सो क्यों कुञ्ञाणन ?"

"आंदोलन है, आजादी-आंदोलन के मारे और लोगों की जिंदगी भी दूभर हो गई है।"

"आंदोलन कौन कर रहा है, कुञ्ञाणन ?"

"तुम्हारा दासन है न—उसने ही तो यह झंझट मोल ली है !"

कुरम्बी अम्मा हक्की-बक्की-सी रह गईं। दासन जेल में है, यह उन्हें पता है। किसी को भी कोई खबर नहीं। पुलिस वाले किसी को भी उससे जेल में मिलने नहीं देते। कभी-कभी दासन के बारे में सोचते-सोचते वे फूट-फूटकर रो पड़ती थीं।

"मैं जा रहा हूं।"

सड़क पर खड़े कुञ्ञाणन ने कहा।

सिर पर बंधी तौलिया लेकर चेहरा पोंछते हुए वह चलने लगा। आधी बांहों वाली मलमल की कमीज की जेब में पैसों की बड़ी थैली दीख रही थी।

काफी दिनों से बस्ती में न जाने क्या-क्या हो रहा है। कुरम्बी अम्मा को पता है। पुलिस वालों और गुंडों ने घर में घुसकर जो कुछ दिखा, वह सब तोड़-फोड़ डाला

था। दामू को जेल में बंद कर दिया था। जंगी जहाज आए थे। अब तो दासन जेल में पड़ा है।

कहीं कुछ गड़बड़ी है। जमाना बदल रहा है। उसमें कुरम्बी अम्मा को कोई शिकायत नहीं। लेकिन यह आंदोलन गोरों को मय्यषी से भगा देने के लिए है, यह जानने पर कुरम्बी अम्मा चौंक पड़ीं। दासन को गोरों ने ही जेल में बंद किया है, इस पर उन्हें विश्वास नहीं हुआ।

"वे उसे जेल में क्यों बंद करेंगे ?"

"दासन गोरों का दुश्मन है।"

"मेरे दासन के बारे में अनाप-शनाप मत बको'। सुना, उण्णिनायर ?"

चेतावनी के स्वर में कुरम्बी अम्मा ने कहा था। दासन के बारे में अनाप-शनाप बातें वे सह नहीं सकतीं। फिर भी बस्ती वालों ने कहा। खासकर उण्णिनायर और कुञ्ञाणन ने।

दासन गोरों का दुश्मन है। आज या कल से वे ऐसा नहीं सुन रही हैं, काफी दिनों से सुन रहीं है। बावजूद इसके आज भी वे उस पर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं होतीं।

"मेरा दासन वैसा करेगा ही नहीं। मेरा दासन वैसा करेगा ही नहीं..."

तनाव की स्थिति में कुरम्बी अम्मा बात को दोहरातीं। भूतकाल के एक बड़े हिस्से पर परछाईं पड़ी है। याददाश्त शिथिल हो गई है...।

हाट जाने वाला कुञ्ञाणन ही वापस नहीं आया था। पंसारी का सामान खरीदने के लिए तलश्शेरी जाने वाली बैलगाड़ियों को विमोचन आंदोलन के योद्धाओं ने पुल के ऊपर रोक दिया। खाली बैलगाड़ियां एक-एक करके वापस आ गईं। दूसरे दिन कारक्कल से चावल लादकर लाने वाली मालगाड़ी भी विमोचन आंदोलन के योद्धाओं ने रोक दी।

मय्यषी से न तो कोई बाहर जा पाता और न ही अंदर आ पाता था। कोषिक्कोड और वडकरा से तलश्शेरी जाने वाली बसों और अन्य गाड़ियों का मय्यषी में घुसना रोक दिया गया। इसलिए मय्यषी गए बिना दूसरे लंबे रास्तों से गाड़ियां आने जाने लगीं। उसके लिए विमोचन आंदोलन के योद्धाओं ने नया रास्ता बना दिया था।

रोक जारी रहने के कारण मय्यषी एक टापू के समान अकेला पड़ गया। आवागमन के अभाव में सड़कें सुनसान पड़ी रहीं। विमोचन आंदोलन के योद्धाओं की सीमा पर रोक लगा देने से चावल, चीनी और तेल मिलना मुश्किल हो गया। दुकानें बंद पड़ी रहीं।

"चार दिन का चावल ही बचा है। उसके बाद गोरे क्या करेंगे ? बस्ती वाले चावल दो, चावल दो ऐसा पुकार-पुकारकर कहेंगे न ? उन सबको भूखों मारना है क्या ?"

"बस्ती वाले फाका कर सकेंगे। साग-सब्जी और कंदमूल खाकर रह लेंगे। लेकिन गोरे लोग क्या खाकर रहेंगे, जनार्दनन ?"

वासूट्टी ताली बजाकर हंसा।

"बड़े आफत के फंदे में हम लोगों ने उन्हें फंसा लिया है।"

"अब ज्यादा से ज्यादा दस दिन। दस दिन बाद मय्यषी हमारी हो जाएगी कणारन दादा !"

विमोचन योद्धाओं की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती रही। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी और कणारन द्वारा शुरू किया गया आंदोलन एक महासागर की तरह तरंगायित हो उठा। सरकारी कर्मचारी, अध्यापक वगैरह टोलियां बनाकर मय्यषी से भागकर आंदोलन में शामिल होने लगे। एक हफ्ता बीतते-बीतते जैसा अंदाज लगाया था, वैसे ही मय्यषी में चावल का एक दाना तक सुलभ नहीं रहा। अस्पताल में पड़े बीमारों को देने के लिए कोई दवाई नहीं। अध्यापकों के अभाव में स्कूल बंद कर दिए गए। कर्मचारियों के अभाव में शासन नाकाम हो गया...।

तेल न होने के कारण नगरपालिका की बत्तियां जली ही नहीं। अंधेरे में फौजियों के पैरों की आवाज सुनाई पड़ती थी। भोजन के बिना मय्यषी के लोग घबराकर दरवाजा बंद किए बैठे रहे। किसी जमाने में शराब बहाने वाली मय्यषी एक नरक बन गई।

"लो जनक्रांति अब शुरू होने वाली है। मय्यषी के लोगो जागो ! जागो !..."

सीमा पर से मय्यषी की ओर मुंह किए लाउडस्पीकर से पप्पन और वासूट्टी रात-दिन पुकार-पुकारकर कहते रहे।

पश्चिमी सीमा वाले पुल पर संघर्ष बढ़ गया। एक ओर नारा लगाने वाले अनगिनत विमोचन योद्धा। दूसरी ओर बंदूकें ताने खड़े फौज के सिपाही। वे आमने-सामने एक-दूसरे का चेहरा देखते खड़े रहे।

उनके पैरों के तले से होकर मय्यषी नदी समुद्र में जा गिरती।

"कणारन दादा, मुझे एक झंडा दे दो..."

"किसलिए पप्पन ?"

"दे दो न !"

पप्पन ने किसी के हाथ से एक तिरंगा झंडा छीन लिया। उसकी आंखें भट्टी की तरह आग उगलने लगीं। जगी हुई क्रांति की चेतना से वह गरज उठा। उसकी मानवता अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई। ऊपर उठाए हुए तिरंगे झंडे के साथ वह पुल के ऊपर से आगे बढ़ा। उसके पीछे-पीछे नारे लगाते हुए अनगिनत विमोचन योद्धा...

दूसरी सीमाओं से भी वे मय्यषी में घुसे जा रहे थे...

"चेरुकल्लायी कब्जे में कर लिया। पुल भी उन्हीं के कब्जे में है।"

दोपहर के पहले ही ठेका बंद करके घर जाने वाला उण्णिनायर हांफ रहा था।

यह सुनते ही अच्चू के पैरों से एक सुन्नापा ऊपर चढ़ने लगा। सारी सड़कें सुनसान पड़ी हैं। फौज टोलियों में सीमाओं की ओर बढ़ रही थी।

"क्या है अच्चू दादा ?"

गिरिजा बाहर आई। उसकी आंखें केले की पिंडी की तरह सूजी हुई थीं। हाथ में कच्ची इमली थी।

"चेरुकल्लायी आजाद हो गया। पुल भी उन लोगों ने कब्जे में कर लिया है। गिरिजा, मैं जरा बाहर जाकर आता हूं।"

"बाप रे, अच्चू दादा ...!"

"क्या हो रहा है, जरा देखूं तो। मैं अभी आया, गिरिजा !"

वह धोती उचकाकर बांधे सड़क पर चल पड़ा। गले तक आई उल्टी को दबाकर डरती हुई वह उसे देखती खड़ी रही।

आधे घंटे के बाद वह वापस आ गया।

"सड़क पर इस ओर सौ गज तक वे आगे आ पहुंचे हैं। दक्खिन में भी वे आगे बढ़ आए हैं। चुंगी भी पार कर ली है उन लोगों ने।"

मय्यषी को इंच-इंच करके आजाद करते हुए विमोचन योद्धा आगे बढ़ते आ रहे थे।

"मुझे भी डर लग रहा है।"

"इसमें डरने की कौन-सी बात है ?"

"वे हमें सताएंगे नहीं क्या ?"

शिथिल हुई गिरिजा ने उसके कंधे पर सिर रख लिया। उसका सिर चकरा रहा था।

"गिरिजा, तुम जाकर लेटो।"

दीवाल पकड़े-पकड़े वह अंदर चली गई।

अच्चू धड़कते दिल के साथ बरामदे में खड़ा रहा। उसके दिल की धड़कन बढ़ती गई। किसी समय स्कूल के अहाते में, वाचनालय में, सड़क पर सब जगह कुत्तों जैसे उसके द्वारा मारे-पीटे गए बच्चे। वे बड़े हो गए हैं। शक्तिशाली बन गए हैं। चेरुकल्लायी और पल्लूर आजाद कर दिए गए हैं। किसी भी पल मय्यषी हाथ से निकल सकता है। जमाने द्वारा दिया गया कवच पहनकर, आंखों में आजादी की आग लिए वे आ धमकने वाले हैं। चारों ओर से उनके पैरों की आवाज उसके कानों में गूंज रही है...

"बेटे अच्चू..."

वह चौंक पड़ा। मुंशीजी ने बुलाया था। एक हाथ से कौसू अम्मा को थामे हुए वे अहाते में खड़े हैं। पीछे-पीछे कुरम्बी अम्मा लड़खड़ाती हुई चली आ रही थीं।

"क्या है पिताजी ?"

"वह कणारन, वासूट्टी वगैरह यहां आ धमके हैं। गोरों का साथ देने वालों को यों ही नहीं बख्शेंगे। अच्चू, मैं गोरों के पक्ष में रहा हूं।"

मुंशीजी की बूढ़ी आंखों में भय छिपा पड़ा था।

अच्चू लाजवाब हो गया। दासन को पुलिस के जिम्मे कर देने वाला मुंशीजी। वे दासन के पिता हैं। तो भी वे लोग उसे यों ही नहीं छोड़ेंगे। पप्पन, वासूट्टी वगैरह से परिचित अच्चू उस विचार से भयभीत हो गया। उसकी जीभ पर ताला पड़ गया। कुछ भी बोल नहीं सका।

मुंशीजी से भी बड़ा अपराध करने वाला है न वह ? पहले तो उसे ही बचने का रास्ता ढूंढ़ निकालना है।

"संकट के समय हमेशा तूने ही मेरी और मेरे परिवार की लाज रखी। अच्चू बेटे, मेरी रक्षा करो..."

दमे के मरीज मुंशीजी अहाते में खड़े-खड़े हांफने लगे।

"मेरा जमाना लद चुका है। फिर भी आइए।"

मुंशीजी और उनका परिवार अंदर घुस गए।

गिरजाघर के ऊपर वाले क्रूस पर आंखें गड़ाए अच्चू खड़ा रहा।

"भारतमाता की जय !"

पास कहीं से एक आवाज आई। भागती आने वाली भीड़। गिरजाघर में लगातार घंटा बजता जा रहा था...

चौदह जुलाई, 1954 के दिन अस्त्र-शस्त्र सहित अगणित विमोचन योद्धाओं का नेतृत्व करते हुए कणारन और उनके साथी मय्यषी की ओर बढ़े। छिपे-छिपे फिरने वाले स्वतंत्रता के समर्थक लोग भी एक साथ बाहर निकलकर उनके साथ हो लिए। जुलूस बनाकर वे लोग बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले की ओर चल पड़े। ऊपर उठे अनगिनत तिरंगे झंडे। गूंज उठने वाले नारे।

वे बंगले के सामने जा पहुंचे। पातार समुद्र-तट जय-जयनाद से थरथराने लगा। समुद्र और नदी भी नारे लगाने में शामिल हुए। बड़े फ्रांसीसी साहब धीरे-से ऊपर आकर खड़े हो गए। उनके सामने फैले पड़े 'आजादी... आजादी...' ऐसे विलाप करने वाले मय्यषी के लोगों को वे अपलक देखते खड़े रहे। किसी जमाने में देवता के रूप में उनकी पूजा करने वाले मय्यषी के लोग। उनकी प्यारी प्रजा...।

बड़े फ्रांसीसी साहब सीढ़ियां उतरकर धीरे-से नीचे आए।

भूख और नींद से शिथिल, दाढ़ी-मूंछ बढ़ाए वज्र देहाती कणारन दादा को बड़े फ्रांसीसी साहब ने पहचान लिया। उन्होंने कणारन दादा की धंसी आंखों में आंखें डालकर देखा। बड़े फ्रांसीसी साहब का दाहिना हाथ कणारन दादा के कंधे पर जा पड़ा।

"माहे सेत्ताबू..." (मय्यषी तुम लोगों की है।)

कणारन दादा फूट-फूटकर रो पड़े।

मय्यषी के ऊपर स्वतंत्रता का सूर्य उदित हो ऊपर चढ़ रहा था। वैसे समुद्रों में तूफान और तटों पर प्रलय लाने वाला काल-प्रकृति का नियम अलंघ्य हो आगे बढ़ रहा था।

तैंतीस

बंदरगाह से जहाजों की सीटियां बजती रहीं। मय्यषी से हमेशा-हमेशा के लिए विदा लेकर जाने वाले गोरों के लिए आया जहाज...

वे लोग जा रहे हैं। मय्यषी के लोगों की तकदीर की बागडोर हमेशा के लिए हाथ से गंवा देने वाले वे लोग जा रहे हैं।

"हम भी जा रहे हैं।"

"कहां ?"

पप्पन के सवाल का जवाब उण्णिनायर के पास नहीं था। लेकिन वह इतना जानता है—गोरे जहां जा रहे हैं वहां। वह इस धरती के उस छोर तक उनके साथ जाने का निश्चय कर चुका था।

"गोरे लोग यों ही चले जाएंगे, ऐसा मत समझो। वे वापस आएंगे। जहाज और तोपें लेकर आएंगे। देख लेना।"

काल का नियम न जानने वाले कुञ्ञाणन ने घोषित किया।

"गोरे अब वापस नहीं आएंगे।"

शताब्दियों से समुद्र की ओर बहने वाली मय्यषी नदी का पानी लौटकर नहीं आता।...

"हम देखेंगे।"

ऐसे उण्णिनायर, कुञ्ञाणन, कुञ्चक्कन वगैरह भाग्य की दुरूहता की ओर यात्रा करने की तैयारियां करने लगे। वे करीब सौ लोग थे।

बंदरगाह पर सबसे पहले पहुंचने वाले कुञ्चक्कन और कुञ्ञाणन थे। पांच दशाब्दियों से ढोकर ले जाने वाली सीढ़ी और तेल का पीपा कुञ्चक्कन छोड़ आया था। कुञ्ञाणन ने अपनी दुकान हमेशा के लिए बंद कर दी थी। दूर पर धुआं उगलने वाले जहाज में आंखें गड़ाए अपनी बारी की इंतजारी में वे समुद्र-तट पर खड़े रहे।

तब अकेले और टोलियों में मय्यषी के लोग बंदरगाह की ओर चल पड़े।

"अच्चू, तुम चलते नहीं क्या ?"

कंधों पर गठरी लादे उण्णिनायर सामने आया। अच्चू बाहर नहीं दिखाई पड़ा। उण्णिनायर के सवाल का जवाब भी नहीं मिला।

कुञ्जाणन की तरह हमेशा के लिए अपना ताड़ी का ठेका बंद करके उण्णिनायर गठरी के साथ आगे बढ़ा।

जाने के लिए तैयार खड़े बढ़ई रामन ने अपनी घरवाली से विदा मांगी :

"मैं फ्रांस में जाकर घरद्वार बनाकर वापस आऊंगा तुम्हें और बच्चों को ले जाने के लिए।"

"मुझे और बच्चों को भूल मत जाना।"

बढ़ई की घरवाली ने आंसू पोंछ लिए।

उण्णिनायर के पीछे-पीछे रामन चल दिया। उसके कंधे पर गठरी थी। मय्यषी के कितने ही लोगों के लिए चारपाई बनाने वाला औजार उसने छोड़ दिया था।

खिड़की पर खड़ा अच्चू सब कुछ देख रहा था। कणारन दादा वगैरह के मय्यषी में घुसते ही उसके मन की चैन मिट गई थी। किसी जमाने में मय्यषी के लोगों के साथ किए गए अत्याचार वह एक-एक करके याद कर रहा था। सजा पाने का समय आ पहुंचा है, ऐसा अच्चू को लगा। पप्पन, वासूट्टी या और कोई किसी भी क्षण यहां आ सकते हैं। वे बदला ले सकते हैं...उसके बारे में सोचते-सोचते अच्चू पसीने से तर हो गया। बाहर किसी के पैर की आहट सुनकर वह चौंक पड़ता।...

शाम हो जाने पर भी कोई उसकी खोज में नहीं आया। धीरे-धीरे उसे तसल्ली हुई।

अच्चू को ही नहीं, मुंशीजी को भी। पिछली रात वे पलक तक झपका नहीं सके।

"तुम डर क्यों रहे हो ? तुमने तो किसी का कुछ बिगाड़ा नहीं।"

"कुछ करने-धरने से मैं जेल गया था, अच्चू ? अपनी समझ से तो मैंने किसी का कुछ भी नहीं बिगाड़ा। ऐसे मुझे उन्होंने जेल में डालकर मारा-पीटा था न ?"

"वह तो गोरों के जमाने में था न ? वे जा रहे हैं।"

गोरे जा रहे हैं। मुंशीजी को यह पता है। वे हमेशा-हमेशा के लिए जा रहे हैं। लेकिन वह भले के लिए है या बुरे के लिए ? उन्हें पता नहीं।

आजादी के आंदोलन की जीत हो चुकी है। यह भी मुंशीजी को पता है। लेकिन उसके लिए सबसे अधिक त्याग सहने वाला वही हैं। उनका-परिवार बरबाद हो गया। इकलौता बेटा हाथ से निकल गया...

"पुनीत माता, मेरी एक ही प्रार्थना है," गिरजाघर के ऊपर वाले क्रूस की ओर देखते हुए मुंशीजी खड़े हो गए, "आइंदा मेरी परीक्षा मत लेना। मेरे परिवार की भलाई करना...।"

अच्चू की आंखें भी वहां सुदूर पर दीखने वाले क्रूस पर जा टिकीं। वह भी चुपचाप प्रार्थना कर रहा था। बंदरगाह पर लंगर पड़े जहाजों के चले जाने के बाद एक नए युग की शुरुआत होगी। वह शांति और संतोष का हो। उसका ही नहीं,

मय्यषी के सारे लोगों का जीवन सुख-चैन से भर जाए...।

दीवाल पर टटोलते हुए कुरम्बी अम्मा धीरे-धीरे उनके पास आ खड़ीं हुईं।

"उण्णिनायर भी चला गया और बढ़ई भी। हम भी चलें, अच्चू ?"

"हमें कहां चलना है, दादी ?"

"हम भी बड़े फ्रांसीसी साहब के साथ चलें?"

"गोरे लोग अपने देश वापस जा रहे हैं।"

"हमारा देश तो यही है न ?"

कुरम्बी अम्मा ने दीनभाव से अच्चू के चेहरे पर देखा। बड़े फ्रांसीसी साहब और मय्यषी के लोगों के देश अलग-अलग हैं क्या ?

"गोरे लोग वापस आएंगे, बेटे ?"

यदि वे लोग वापस आते तो कुरम्बी अम्मा को तसल्ली हो जाती। वैसा हो तो वे उनके इंतजार में बैठी रहतीं।

कुरम्बी अम्मा के सवाल का जवाब अच्चू ने नहीं दिया। वह अपने आपसे भी यही सवाल पूछ रहा है, "गोरे लोग वापस आएंगे ?"

कुरम्बी अम्मा कुछ देर तक अच्चू के चेहरे पर देखती खड़ी रहीं। फिर वे बरामदे में पड़ी बेंच पर जाकर बैठ गईं। आंखें बंद करके वे किसी सोच-विचार में डूबी रहीं।

"वे लोग आएंगे। आए बिना नहीं रहेंगे।" कुरम्बी अम्मा ने अपने आपसे कहा।

ब्रिगादिए चेट्टियप्पा कोट-पतलून पहने, टोपी लगाए तैयार खड़ा रहा। कत्तोस झुइये (फ्रेंच रिपब्लिक डे, 14 जुलाई), नोयेल (क्रिसमस) आदि त्योहार के दिनों में ही चेट्टियप्पा वरदी में प्रकट होता था। उसके पास एक बड़ा संदूक पड़ा था।

"रोओ नहीं..."

देहरी पर खड़ी नाणी रो रही है। उसकी आड़ में खड़ी देवी भी सिसकियां भर रही थी। दोनों की धोतियों के छोर पकड़े चेट्टियप्पा के बच्चे खड़े थे।

"मैं वापस आ जाऊंगा।"

उसने ऊखली जैसी फैली अपनी गरदन का पसीना तौलिए से पोंछ डाला। चेट्टियप्पा को पता है कि उसका कहना सही नहीं है। मय्यषी की मिट्टी में आगे कभी भी उसे पैर रखने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

चेट्टियप्पा नाणी और देवी को ज्यों-ज्यों तसल्ली दे रहा था त्यों-त्यों उनका रोना जोर पकड़ रहा था। यह देखकर चेट्टियप्पा के बच्चों ने भी रोना शुरू कर दिया।

चेट्टियप्पा फिर वहां रुका नहीं। अपनी रखैलों और बच्चों को पीछे छोड़कर वह चलता बना। पीछे-पीछे संदूक सिर पर उठाए पुलिस स्टेशन का शंकु भी।

कुञ्ञिचिरुता के घर के सामने खड़े होकर दावीद साहब ने भी विदा मांगी—

"मैं आऊंगा। तब तुम्हें और बच्चों को फ्रांस ले जाऊंगा।"

"मेरे बच्चों का अपना कोई भी नहीं है।"

"मैं आऊंगा।"

कुञ्चिचिरुता के चेहरे पर देखे बिना दूर से सुनाई पड़ने वाली जहाज की सीटी पर ध्यान देते हुए दावीद साहब ने दोहराया। फिर हाथ हिलाते हुए विदा लेकर वह सड़क पर चलता बना।

दावीद साहब का ऊंचा और जरा-सा झुका हुआ शरीर सड़क के छोर पर अदृश्य हो गया। कुञ्चिचिरुता अपने बच्चों को सटाए खड़ी फूट-फूटकर रो पड़ी।

जहाज की सीटी बार-बार बजती रही। तब भी रियू द्युगुवर्णमां से होकर संदूक और गठरियां लिए मय्यषी के लोग बंदरगाह की ओर बढ़ते रहे।

समुद्र-तट पर विदा देने वाले लोगों की संख्या बढ़ती गई। चिलचिलाती धूप में वे चुपचाप बड़े फ्रांसीसी साहब का इंतजार करते खड़े रहे।

बड़े फ्रांसीसी साहब अपने बंगले की बालकनी में आखिरी बार आकर खड़े हुए। गिरिजाघर के क्रूस पर उनकी आंखें जा टिकीं, उसके बाद शिरीष वृक्षों के लाल-लाल फूलों से भरी पड़ी रियूद रसिदाम्स पर, फिर मय्यषी नदी के ऊपर वाले पुल पर दूर पर दिखाई पड़ने वाली हरी-हरी पहाड़ियों पर...

बड़े फ्रांसीसी साहब की आंखों ने अंतिम बार मय्यषी का आश्लेष किया...।

समुद्र से लहरों का संगीत निनादित हुआ। गोरों और वर्णसंकरों का जुलूस धीरे-धीरे बंदरगाह की ओर बढ़ा।...

वे बंदरगाह पर जा पहुंचे। जमाने का संदेश सुनाते हुए समुद्री हवा चलती ही रही।

बड़े फ्रांसीसी साहब की नीली-नीली आंखें समुद्र-तट पर एकत्रित हुए मय्यषी के लोगों को एक-एक करके आश्लेषित करती रहीं।

विदा, प्रजाजनो !...

उनका दाहिना हाथ धीरे-से ऊपर उठा। भीड़ के बीच में अच्चू का हाथ पकड़े खड़ी कुरम्बी अम्मा सिसक-सिसककर रोईं।

जहाज का लंगर उठाया गया।

दूर-दूर होते जाने वाले जहाज पर आंखें टिकाए बंदरगाह पर खड़े मय्यषी के लोग रोते रहे। उनके आंसुओं से गरम-गरम बालू गीली हो गई। धीरे-धीरे समुद्र की विशालता में क्षितिज के उस पार जहाज ओझल हो गया।

चौंतीस

जेल का दरवाजा पूरा खुल गया। दासन बाहर आया। सालों के बाद उसकी धंसी आंखों में धूप की किरणें आ पड़ीं। कल हुई बरसात का गीलापन लिए मिट्टी पर उसने पैर रखा।

किधर जाना है, यह जाने बिना जेल के सामने पल-भर खड़ा रहा...पिता, मां, चंद्रिका, दादी, गिरिजा...उन सबके चेहरे सिनेमा की तरह उसकी आंखों के सामने से गुजर गए। जेल में उससे मिलने की अनुमति किसी को नहीं थी। नहीं तो कोई-न-कोई आता। पिता और गिरिजा शायद नहीं आते। मां को शायद पिता आने नहीं देते। और कोई नहीं तो कम-से-कम चंद्रिका तो आती ही।

दूर पर बड़े फ्रांसीसी साहब के टीले पर उसने तिरंगा झंडा फहराते देखा। सड़क पर चलने वाले लोगों के हाथों में भी कागज के झंडे दीख रहे थे।

लो, आखिर विमोचन का पल आ ही गया...।

रियूद रसिदाम्स से होता हुआ वह आगे बढ़ा।

पुल पर से लोग मय्यषी की ओर टोलियों में आ रहे थे। उनमें दूर देशों से आने वाले लोग भी थे। एक महान नाटक का अंतिम दृश्य देखने के लिए आने वाले मय्यषी के लोगों के मित्रगण...सभी सड़कों पर भीड़। अपरिचित चेहरे। उनके बीच से होता हुआ दासन चलता रहा।

रियूद लग्लीस से, रियूद लागार से, रियूद ला प्रिसोम से...उसने चलना जारी रखा। मय्यषी के कोने-कोने में उसके पीले पड़े पैरों के निशान पड़ गए।

आखिर एक बत्ती के खंभे वाली कंकड़ों से भरी सड़क के शुरुआत में पहुंचते ही दासन के पैर मिट्टी में रुक गए। दूर पर उसने अपना घर देखा। हिलने-डुलने में असमर्थ वह स्तब्ध खड़ा रहा।

"निकल रे कुत्ते बाहर...!"

पिता की आवाज किसी और दुनिया से आती हुई-सी उसने सुनी। जेल में पड़े-पड़े सूरज की किरणों के अभाव में उसकी पीली पड़ी आंखों के सामने बाहर की ओर हाथ से इशारा करते खड़े पिता की तस्वीर साफ-साफ दीखने लगी।

अचानक वह मुड़कर चल दिया।

पिता को खो बैठा। गिरिजा चली गई। सुध और बेसुध के बीच पड़ी रुग्ण मां और दादी से मिलने की इच्छा दासन को थी। लेकिन उसके लिए पिता के घर में जाना है ?

दासन ने चलना जारी रखा। वैसे चले कितने ही साल हो गए। जेल में छह फुट का कमरा ही था उसकी दुनिया।

सड़क की भीड़ दासन को पहचान नहीं पाई। कारावास ने उसमें उतना अधिक परिवर्तन ला दिया था। खासतौर पर बालों का अभाव। कोई उसे पहचाने, इसकी इच्छा भी उसमें नहीं थी। इच्छा इसके विपरीत थी। कोई उसे पहचान न पाए, यही मना रहा था।

जिन सड़कों से होकर वह गया था, उन्हीं सड़कों पर उसके पैर दुबारा पड़े। वह अपनी जन्मभूमि का पुनर्दर्शन कर रहा था। देखो, यहीं पर वैश्रवणन चेट्टियार ने सांप का रूप धरकर कुञ्ञिम्माणिक्यम से संपर्क किया था। यह देखो, यहां सफेद घोड़े पर सवार होकर वेलुत्तच्चन ने शीतला माता से युद्ध किया था। देखो, यहां पर नारियल की कोंपलें पहने गुलिकन के द्वारा दंडित कुञ्चक्कन के प्रपितामह पैर के टूट जाने से गिर पड़े थे। देखो, यहीं पर मलयन उत्तमन मुखौटा लगी गर्दन के टूट जाने से छटपटाता हुआ मर गया था। यह देखो, इसी रास्ते से रोज तड़के बेहोश पड़े भालू साहब को थामे हुए मेरी जाया करती थी। इस दीमक लगे दुमंजिले मकान में बैठकर रोज आधी रात को हिजड़ा साहब अपना दुःख-राग अलापते थे...

"दासन...!"

सड़क के किनारे वाली सीमेंट की बनी बेंच पर बैठे दासन ने सिर उठाकर देखा। चलते-चलते थककर चूर हुआ दासन हांफ रहा था।

"ऐसी कोई जगह नहीं बची, जहां मैंने तुम्हें न खोजा हो ! इतनी देर तक तुम कहां रहे ?"

हाथ पर पट्टी बांधे जनार्दनन सामने खड़ा है। हाथ गर्दन से बंधी पट्टी पर लटकाए है।

"तुम्हारे हाथ को क्या हुआ ?"

"कोम्मीसार की भेंट।"

वह मुस्कराया।

"यह सब छोड़ो। बातें फिर होंगी। चलो चलें।"

"किधर ?"

"कणारन दादा ने मुझे भेजा है। तुरंत तुम्हें बुला लाने के लिए। पहले हम लोग तुम्हारे घर पर चलें। फिर कणारन दादा के पास।"

"मेरा कोई घर नहीं।"

जनार्दनन ने भौचक्के हो दासन के चेहरे पर देखा।

"मुझे राज्य मिल गया लेकिन घर खो गया।"

"ऐसा मत कहो।"

जनार्दनन ने प्रार्थना की। उसने दासन को हाथ पकड़कर उठाया।

दासन घर नहीं गया। वे पातार समुद्र-तट की ओर चल पड़े।

वहां झंडों और बंदनवारों का जलसा था। जहां देखो, वहां कमानें और बंदनवारें। बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले के सामने सजा-धजा बड़ा शामियाना दीख रहा था। वहां गांधीजी और नेहरूजी की बड़ी-बड़ी तस्वीरें सजाकर रखी गई थीं। मैदान लोगों से खचाखच भरा पड़ा था। सभी ने छाती पर तिरंगे झंडेवाला बिल्ला लगा रखा था। बच्चों के हाथ में कागज के तिरंगे झंडे। बड़े फ्रांसीसी साहब के टीले वाले खंभे पर ही नहीं, रियूद रसिद्मन्स के सभी बंगलों के ऊपर तिरंगे झंडे फहरा रहे थे।

दूर पर शोरगुल सुनाई पड़ा। एक लंबा जुलूस चला आ रहा था। बैंड की आवाज रियूद ला प्रिसोम से गूंज उठी। जुलूस में मय्यषी के सारे मर्दों और बच्चों ने भाग लिया था। लेकिन पास-पड़ोस से आए मय्यषी के लोगों के मित्रों की बाढ़ में मय्यषी के लोग डूब गए थे। एक सजी-धजी खुली जीप में कणारन दादा और वासूट्टी हाथ जोड़े खड़े थे। उनकी गर्दनें फूलमालाओं से बहुत ज्यादा लदी थीं।

जुलूस के पास आ जाने पर भीड़ ने दासन को सड़क के पीछे की ओर धकेल दिया। नारे लगाने और जयभेरी बजाने वाले उन लोगों की लातों से बचने के लिए वह नाले में उतरकर खड़ा हो गया। साथ ही जनार्दनन भी। जीप और बैंड वाले उनको पीछे छोड़ गए। पीछे-पीछे हाथों में मशाल लिए नाचने वाले मुखौटे। उनके पीछे मुसलमानों का डंडे बजाते हुए नाचना-गाना...।

जुलूस निकल जाने के बाद सड़क सुनसान हो गई। वहां से चलकर गए हजारों लोगों के पैरों के निशान ही बाकी बचे थे।

"जनार्दनन, पप्पन कहां है ? उसे तो जीप में देखा ही नहीं।"

"पप्पन अस्पताल में है। चेरुकल्लाई में हाथ में गोली लग गई थी।"

चेरुकल्लाई में गोली चली, यह सुनते ही दासन ने समझ लिया था कि पप्पन वहां जा पहुंचा होगा। जहां खून बहता है, वहां पप्पन का होना जरूरी है।

"जनार्दनन, मेरी एक ख्वाहिश है।"

"क्या ?"

"तुम जाकर कहीं से थोड़े-से फूल लाओ, कुञ्ञनन्तन मास्टरजी के लिए।"

जनार्दनन का चेहरा खिल उठा।

पहाड़ी की तराई के मरघट में एक सुनसान कोने में हाथ में फूल लिए दासन खड़ा

रहा। अनगिनत कार्तिक महीनों की बरसातों ने कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की समाधि को चौरस कर दिया था। सूखी पड़ी मिट्टी में छुईमुई के पौधे...

तब भी दूर से बैंड की आवाज सुनाई पड़ रही थी।

"जनार्दनन, अब तुम जाओ।"

वापस जाते समय दासन ने कहा। कहीं जाकर थोड़ी देर अकेले बैठने की इच्छा थी उसकी।

"कणारन दादा से मिलना नहीं है क्या ?"

"भीड़-भाड़ जरा कम हो जाने दो। अब तो जब चाहें हम मिल सकते हैं। हम आजाद हैं।"

बहुत विवश करने पर जनार्दनन चला गया। दूर से बैंड और नारों की आवाज फिर से सुनाई पड़ी। किधर जाना है, यह जाने बिना दासन सड़क के बीचोबीच खड़ा रहा। पहाड़ी की चोटी पर खड़े पर्वतारोही के मन की शून्यता का गुंजन था उसकी खोपड़ी में। संभोग के बाद अनुभव होने वाली शिथिलता इंद्रियों में परिव्याप्त थी।

आखिर वह समुद्र-तट की ओर चल पड़ा। वहां भीड़ और कोलाहल नहीं था। निश्चल पड़ा फेनिल समुद्र। नक्षत्रों के प्रकाश में दूर पर चमचमाने वाली सफेद चट्टान उसे दीख रही थी। जन्मों और पुनर्जन्मों के बीच का विश्राम-स्थल ! तब भी आत्माएं वहां तितलियों की तरह उड़-उड़कर खेल रही थीं।

पैंतीस

चंद्रिका के घर के पास ही एक अधबना घर था। वह घर पेनांग वाले अबूट्टी मुसलमान का था। घर पूरा बनने के पहले ही रक्तचाप से अबूट्टी मुसलमान मर गया। चबूतरे पर दीवारें आधे से अधिक बन चुकी थीं।

बिना छत वाली दीवारों की छाया में बहुत सारे अड़ूसे के पौधे बढ़े खड़े थे। कमरों में छुईमुई के पौधे जमे खड़े थे। जंगली पौधे भी। दीवारों के संधि-स्थलों पर चकोरों ने घोंसले बना रखे थे।

दासन और चंद्रिका के मिलने का संकेत।

"दासन दादा, आपके कारावास के दिनों में मुझे नींद आती ही नहीं थी। दो-तीन साल कैसे काटे, यह मुझे और भगवान को ही पता है।"

कुछ भी कहे बिना वह उसका हाथ सहलाता रहा। वह बहुत दुबली हो गई थी। हाथ की काली चूड़ियां कभी-कभी निकल जाती थीं। इतनी ज्यादा दुबली हो गई थी वह।

"जेल में रहते समय आप मेरे बारे में सोचा करते थे, दासन दादा ?"

अपराधी की तरह उसने कहा : "नहीं।"

"सो तो मैं जानती हूं। आपके पास सोचने के लिए कितनी सारी बातें हैं। मेरे लिए तो आप ही हैं।"

उसने याद किया : कारावास के समय कभी-कभी सोचते-सोचते अंदर और बाहर उबल जाता। रात में नींद ही नहीं आती। तब औषधियुक्त नारियल के तेल की शीतलता लिए हवा उसे सहलाती-सी लगती थी। तब उसके बारे में ही वह सोचा करती होगी न ? उसके बारे में उसकी यादगारें हवा के रूप में आकर सहलाया करती थीं न ?

"मुझे जेल में आने की इच्छा थी। आकर आपको तसल्ली देना चाहती थी। किसी ने उसके लिए मुझे इजाजत नहीं दी, मां तक ने नहीं दी इजाजत।"

सिर झुकाए बैठी उसने कहा। उसकी डबडबाई आंखें वह देख रहा था। दासन बदनसीब है। उससे वास्ता रखने वालों पर भी आफत आ लगती है, चेचक की तरह।

"तूने पढ़ना छोड़ दिया है, ऐसा पप्पन ने कहा। सच है यह ?"

"हां।"

उसने हामी भरी। दासन के जेल चले जाने के बाद वह कालेज गई ही नहीं।

"क्यों, चंद्री ?"

"पढ़ने से क्या फायदा, दासन दादा ?"

अब किसी भी बात में उसका मन नहीं लगता। उसकी वेशभूषा और हाव-भाव यही दिखा रहे हैं। बिना इस्तरी की 'वोयल' साड़ी वह पहने है। कानों के छेदों में सींकें खोंसे है। गाहे-बगाहे हंसना।

"क्या हो गया चंद्री, तुझे ?"

"कुछ भी नहीं।"

उसकी आंखों से आंसू झर पड़े। वह सिर झुकाए बैठी रही।

"तू दुःख मत कर। तेरे पास पैसा है। जान से भी अधिक प्यार करने वाले मां-बाप हैं। तेरे पास सब कुछ है...।"

"सिर्फ मन की शांति ही नहीं।"

वह खामोश बैठा रहा। आजादी की लड़ाई खत्म हो गई। कणारन दादा, वासूट्टी, पप्पन वगैरह आज आजाद हैं। उनके सामने कोई समस्या नहीं। लेकिन उसकी समस्याएं समाप्त नहीं होतीं...।

"दासन दादा, अब आप कभी भी घर नहीं जाएंगे ?"

"नहीं।"

वह सिसक उठी। कुछ देर बाद तर्जनी से उसने अपने आंसू पोंछ लिए। उसके चेहरे पर आंसुओं के निशान भरे पड़े थे।

"तू ऐसे रोया मत कर। जेल से आने के बाद तेरा हंसता हुआ चेहरा देखा ही नहीं।"

पल भर में रोने-हंसने का स्वभाव था न, उसका ? अब सहसा रोने ही लगती है, मानो हंसना भूल ही गई हो...

उसने चंद्रिका को अपने शरीर से सटाकर पकड़ लिया। कुछ भी बोले बिना वे वैसे ही बैठे रहे। उसके दिल की धड़कनें सुनाई दे रही थीं उसे। उसके आंसुओं का खारापन उसने चख लिया। नंगी दीवार से सटे हुए वे मिट्टी में एक साथ लेटे रहे।...पहली चूड़ी टूट जाने पर दीवालों के संधि-स्थलों से चकोर उड़ गए।...

सांझ हो गई। अधबने मकान की बिना छत वाली दीवारों पर शाम की लाली ने घोंसला बनाया। चकोर बाहर बेचैन हो उड़ रहे थे।

चकोरों के घोंसलों में लौटते समय घना अंधेरा छा गया था। धीरे-धीरे यह एक रोजमर्रे की बात हो गई।

"दासन दादा, आपको यों लेटना पसंद है ?"

"हूं।"

"मुझे भी।"

और सब कुछ भूलने की कोशिश में उसकी ऊष्मा और गंध में वह बेहोश-सा पड़ा रहा। उसने उसमें अभय पाने की कोशिश की।

मुझे एक सहारा चाहिए। दासन ने अपने आपसे कहा। बोझ जरा उतारकर रखने के लिए।

इस जिंदगी में उसकी सफेद चट्टान थी, चंद्रिका। उस पर वह विश्राम पा रहा था। उस पर एक तितली की तरह भार बने बिना वह उड़-उड़कर खेल सकता था।

लेकिन अधबने मकान से बाहर निकलते ही स्वयं एक प्रश्नचिह्न बन जाता था। जाए तो जाए किधर ?

मय्यषी के बाहर आंदोलन के दिनों में जहां जी करता, वहां लेट जाता। अब वैसे जाकर लेट सकता है ?

कुछ दिन लीला दीदी के घर में रहा।

"बहुत दिनों तक घर-द्वार के बिना घूमा-फिरा। अब भी वैसे ही रहना है ?" रोज लीला दीदी ताना मारतीं।

"जो भी हो, मुंशीजी तुम्हारे पिता हैं। पिता को बेटे से माफी मांगने की जरूरत नहीं।"

"मैं सब कुछ समझता हूं, लीला दीदी ! कोई मुझे उपदेश न दे।"

एक बार सख्ती से कहा। लीला दीदी को मानो काठ मार गया। सीधे ऊपर जाकर लेट गईं।

फिर तीन-चार दिन वहां गया ही नहीं।

"तुम मेरे घर चलो।"

पप्पन रोज बुलाता। विमोचन आंदोलन के बाद उसके पिता मय्यषी वापस आ गए थे। उस बड़े घर में फिर से रोशनी आ गई।

"तुम मेरे साथ रहा करो। इससे बड़ी और कोई खुशी मेरे लिए नहीं है।"

"मेरे लिए कमर सीधी करने के लिए कोई ठौर-ठिकाना नहीं रहा। मेरी तकदीर...।" यह कहते समय बीड़ी के निशान पड़े ओठों पर एक मुस्कान थी।

"तकदीर नहीं। तुम्हारी अपनी करतूत।"

"पप्पन, तुम भी मुझे दोष मत दो। मेरे कुछ आदर्श हैं। चाहो तो उन्हें जिद्द कह सकते हो। वही मुझे अस्तित्व देता है।"

दासन का आदर्श महत्तर हो या बदतर उसका अभाव उसे नंगा कर डालेगा। निहत्था बना देगा।

कभी-कभी दासन पप्पन के घर में लेट जाता। और दिनों में चंद्रिका के यहां। वह उसे अच्छा नहीं लगा। उसे स्वयं यह भद्दा लगता।

जैसे-तैसे थोड़ा-सा पैसा कमाकर एक छोटा-सा घर किराए पर ले ले तो ? नहीं तो एक कमरा ही सही। तब लगता कि समय आया नहीं। भविष्य के बारे में बहुत सारा सोच-विचार करना है। सोच-विचार कर तय करना है। इस जन्म में ही वह पुर्नजन्म लग रहा है। नई जिंदगी के कायदे बनाने हैं। क्या बनना है, यह तय करना है...

लेकिन कुछ भी कर नहीं पाता। सोच भी नहीं पाता। मन साथ नहीं देता।

इसलिए यों ही इधर-उधर घूम-फिरकर बहुत सारी बीड़ियां पी डालता। कभी-कभी पैसा होने पर दो घूंट ठर्रा पी लेता।

कानों में सूनेपन की गूंज लिए बैठते समय एक दिन अच्चू को अंदर आते देखा। पप्पन का पिता वहां नहीं था। सिर्फ पप्पन ही वहां था।

"यह जिद्द भले के लिए नहीं है।"

अहाते में खड़े अच्चू ने कहा। उसे देखते ही पप्पन अंदर घुस गया। किसी ने भी उससे बैठने तक को नहीं कहा–

"तुम क्या चाहते हो, अच्चू ?"

अहाते में खड़े-खड़े ही उसने कहा :

"तुम्हें साथ ले चलने के लिए ही मैं आया हूं। जो कुछ हो गया, उसे होनी समझकर भूल जाओ, दासन, आओ।"

"बुलाने वाले आकर बुलाएं तो मैं आऊंगा।"

"मैं कोई गैर हूं क्या ?"

अच्चू गिरिजा का पति है। उसके बच्चों का पिता है। फिर भी वह उसके परिवार का एक अंग है, ऐसा दासन सोच भी नहीं पाता। दासन की आंखों में आज भी अच्चू वही पुराना अच्चू ही है।–बोझा ढोने वाले कुमारन की बेटी के साथ बलात्कार करने वाला अच्चू। वासूट्टी के दांत तोड़ देने वाला अच्चू। भूतकाल से उसे छुटकारा नहीं।

दासन को चुपचाप खड़ा देखकर अच्चू बैठक में घुस आया।

"दासन, मुंशीजी तुम्हारे पिता हैं। पिता को बेटे से मुंहकी खानी है क्या ?"

"नहीं।"

"अपने पिता को तुम समझ नहीं पाए। पिता किसी के सामने सिर नहीं झुकाएंगे।"

"उसमें मुझे खुशी ही है।"

अच्चू कुछ देर तक चुपचाप खड़ा रहा। वहां और कोई नहीं था। पप्पन बाहर निकला ही नहीं।

"तुम्हें घर जाने में ही हिचक है न ? तो एक काम करो। मेरे घर चलो।"

अच्चू वहां तक पहुंच गया। उसका कहा सुनकर दासन जरा हंस भर दिया।

अच्चू इसके बाद भी कई बार आया। लेकिन दासन नहीं माना।

जेल से आने के बाद दासन एक दिन अच्चू के घर गया था—गिरिजा और बच्चों से मिलने के लिए। अच्चू घर में नहीं था।

वह मोटी हो गई थी। गोरी भी। देखने पर पहचान में नहीं आई।

भाई को देखकर वह सकपका गई।

बाहर निकले बिना दरवाजे के पीछे आधी छिपी खड़ी रही। दासन के सामने वह कैसे आकर खड़ी होती ?

"राजी-खुशी है न, गिरिजा ?"

उसने सिर हिला दिया।

"तुम्हारे कितने बच्चे हैं ?"

"दो।"

दोनों लड़के। अच्चू की तरह मोटे-ताजे स्वस्थ बच्चे।

वह दरवाजे के पीछे और दासन बरामदे में खड़ा रहा। उनके बीच खामोशी छाई रही।

उन्हें आपस में कुछ कहना नहीं है क्या ?

उन दिनों मय्यषी में छिपकर आ पहुंची उस विनाश की रात में उसके हाथों में रोती पड़ी प्यारी छोटी बहिन—उसे भाई से कुछ भी कहना नहीं है क्या ?

समय के प्रवाह में कर्म के रंगमंच पर नाटक चलते समय अपनी आत्मा के अंश भी अपरिचित हो गए थे।

"मैं जा रहा हूं।"

गिरिजा कुछ कहने को हुई। आवाज बाहर नहीं निकली।

वह फाटक पार कर चुका था।

फिर वह वहां गया ही नहीं।

घर जाने के लिए सभी ओर से दबाव डाले गए। सिर्फ पप्पन ही नहीं, कणारन दादा और वासूट्टी भी उसे सलाह दे रहे थे वापस जाने की।

"राज्य के लिए तुमने घर त्याग दिया। आज तुम आजाद हो। जाकर घर की देख-रेख करो।"

"उन्हें अब मेरी जरूरत नहीं है।"

पिता को पेंशन मिलने लगी। गिरिजा का ठौर-ठिकाना हो गया। इतना ही नहीं, घर-बार देखने के लिए अच्चू भी है ही?

" 'मैं मानव-प्रेमी हूं,' ऐसा तुम कहा करते थे न ?" वासूट्टी ने पूछा, "वह मानव-प्रेम अब कहां गया ? अपनी मां के आंसू तुम देख नहीं पाते क्या ?"

"मुझ पर शासन करने वाले कुछ नियम हैं। मेरे मानव-प्रेम पर भी वे ही शासन चलाते हैं।"

"तुम और तुम्हारे आदर्श..."

वासूट्टी गुस्से से उठकर चला गया।

वासूट्टी मिला ही नहीं करता था, ऐसा कहा जा सकता है। रास्ते में कहीं मिल जाने पर वह कुशल-समाचार पूछता। घर जाने की सलाह देता। बस इतना ही।

कणारन दादा आज शासन-समिति के प्रधान हैं। बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर रहते हुए मय्यषी पर शासन कर रहे हैं।

शासन की बागडोर हाथ में ले लेने के कुछ दिन बाद कणारन दादा ने आदमी भेजकर दासन को बुलवाया। ठेके से सीधे बंगले पर गया। ठर्रे की बू आती होगी मुंह से।

बंगले का फाटक पार करके बगीचे के बीच से एक बार फिर चला। बाहर और भी कई लोग कणारन दादा से मिलने के लिए इंतजार कर रहे थे। दासन को इंतजार नहीं करना पड़ा...

रेशमी परदा हटाकर कालीन के ऊपर से अंदर पहुंचा, दासन देहरी पर सहसा रुक गया—

मय्यषी के लोगों द्वारा अवतार माने जाने वाले अनेक देवतुल्य बड़े फ्रांसीसी साहब लोग सौ साल से अधिक जिस कुर्सी पर बैठकर शासन चलाते आए थे, उसी कुर्सी पर कणारन दादा बैठे थे। सिर पर धुली और इस्तरी की गई खद्दर की टोपी लगाए थे।

दीवारों पर से नेपोलियन, षानदार्क आदि लोगों के चित्र गायब हो गए। उनकी जगह गांधी और नेहरू की तस्वीरों ने ले ली थी।

बंगले के नीचे पहाड़ी की तलहटी में तरंगें आ टकराईं।

"मुझे सब कुछ पता चल गया। तुम्हें क्या हो गया बेटे ?"

"आपने मुझे क्यों बुलवाया है, कणारन दादा ?"

"तुम ऐसे आवारा घूमते हुए दिमाग और तंदुरुस्ती बरबाद मत करो। मैं तुम्हें नौकरी दे दूंगा। मेयर के दफ्तर में चाहिए या सेक्रत्तेरिया में ? बोलो बेटे..."

पहले कभी बड़े फ्रांसीसी साहब द्वारा कहे गए वे ही शब्द।

"कणारन दादा, आपके द्वारा दी जाने वाली नौकरी पर किसी समय मैंने लात मार दी थी। उससे बड़ी कोई नौकरी आप दे सकते हैं ?"

"तुम्हें क्या चाहिए बेटे ? बोलो।"

"मुझे कुछ भी नहीं चाहिए, कणारन दादा। आपका स्नेह काफी है।"

कणारन दादा दासन के चेहरे पर देखते ही रह गए। चलने को हुआ तो उन्होंने दुहराया—

"यह बंगला तुम्हारा भी है दासन। रहने की जगह न हो तो तुम यहीं रह सकते हो।"

बड़े फ्रांसीसी साहब की कुर्सी पर वे बैठे थे। फिर भी कणारन दादा में कोई

परिवर्तन नहीं आया। मेयर के दफ्तर और सेक्रत्तेरिया की नौकरी एक समय में अस्वीकार कर दी थी। वह दुनिया उसके लिए निषिद्ध थी। अब इस अकाल में वहां क्यों जा पहुंचे ?

जीने के लिए अभी बहुत सारा समय बाकी पड़ा है। कैसे जीना है ? पता नहीं। सोचते समय दिमाग बेबस हो जाता है...

छत्तीस

गोरों के जहाज को मय्यषी छोड़े तीन-चार महीने हो गए। मरघट तक गोरों का साथ देने के लिए तैयार होकर देश और घर-बार छोड़कर जहाज में गया उण्णिनायर मय्यषी में एक दिन प्रकट हो गया।

"तुम फ्रांस नहीं गए क्या ?"

उण्णिनायर को देखकर पादरी के सेवक ने दांतों तले उंगली दबा ली। सफेद दाढ़ी और मूंछें बढ़ गई थीं। आंखें धंस गई थीं। चलने की ताकत भी उण्णिनायर में नहीं थी।

पादरी के सेवक के सवाल का जवाब दिए बिना उसने अपने घर की राह ली।

दूसरे दिन मंगलापुरम मेल के स्टेशन पर रुकते समय उसमें से कुञ्चक्कन लंगड़ाता हुआ नीचे उतरा, पीछे-पीछे कुञ्ञाणन भी। वे परेशान थे। दाढ़ी और मूंछें बढ़ी हुई थीं।

कुञ्चक्कन को सहारा देते हुए कुञ्ञाणन मय्यषी की ओर चला।

दो-तीन दिन बाद रामन बढ़ई भी लौट आया। लंबे सफर के निशान चेहरे पर थे। फाका करते और घूमते-फिरते थक गया था।

कुछ ही दिनों में मय्यषी से जहाज पर गए सबके सब एक एक करके रेलगाड़ी और बस द्वारा वापस आ पहुंचे...।

कोलंबो होते हुए पांडुचेरी बंदरगाह पर जहाज का लंगर डालते समय उण्णिनायर जैसे मय्यषी के लोगों को वहां उतरना पड़ा। उनको छोड़कर पांडुचेरी वगैरह के अनेक गोरों और वर्णसंकरों के साथ जहाज ने यात्रा जारी रखी।

"फ्रांस जा नहीं पाए तो क्या, हम लोग जहाज पर बैठ लिए न ? कोलंबो देख लिया न ?"

रामन बढ़ई के लिए इतना काफी था।

कुछ दिन तक उण्णिनायर बाहर निकला ही नहीं। निकलते समय पादरी के सेवक ने दुबारा पूछा :

"क्या उण्णिनायर, तुम फ्रांस नहीं गए?"

"मजाक मत उड़ाओ। मैं जाऊंगा।"

"कब उण्णिनायर ?"

"जब जाऊं तब देखना।"

जोश के साथ उण्णिनायर चलता बना।

उण्णिनायर ने फिर से ठेका खोल दिया। कुञ्चक्कन ने फिर से नगरपालिका की बत्तियां जलानी शुरू कर दीं। रामन बढ़ई ने फिर से औजार उठा लिए...

"हम जाएंगे। हमें ले जाने के लिए दूसरा जहाज आएगा।"

उण्णिनायर ताड़ी के ठेके पर बैठा-बैठा कहा करता। वह वैसा विश्वास करता रहा। उण्णिनायर दो गोरों के जहाज के इंतजार में बैठा है। वही नहीं और भी बहुत सारे मय्यषी के लोग इंतजार में हैं।

"गोरे लौटकर आएंगे, उण्णिनायर ?"

बैठक में पैर पसारे बैठी सुंघनी सूंघने वाली कुरम्बी अम्मा अपनी तिमिर लगी आंखें मींचकर खोलते हुए पूछतीं। तब अपने बढ़े आत्म-विश्वास के साथ उण्णिनायर जवाब देता :

"वे आएंगे।"

नदी-तट की चट्टान से दिन की गर्मी हटी नहीं थी। रेलवे पुल के नीचे से बहती हुई निर्मल नदी समुद्र की ओर बहती जा रही थी। दूर पर शाम की धूप में डूबी पड़ी कनकमला की पहाड़ियां।

दासन और पप्पन चट्टान पर बैठे बातें कर रहे थे।

पुल को हिलाती हुई एक रेलगाड़ी निकल गई।

"रेलगाड़ी देखते समय मेरे मन में न जाने क्या-क्या उठता है। कहीं चले जाने का...किसी अनजाने देश की ओर..."

दूर-दूर होती जाने वाली गाड़ी की आवाज पर पप्पन कान लगाए बैठा रहा।

"एक दिन मैं चला जाऊंगा—नए ज्ञान की खोज में..."

मय्यषी के विमोचन के साथ पप्पन की क्रांति की आग बुझ गई थी। आंखों की आग भी ठंडी पड़ गई थी। बीच-बीच में अपने गोली लगे बाएं हाथ को देखता वह बैठा रहता; रणक्षेत्र से संबंधित दुःखद चिंताओं में डूबा रहता।

"तुम कहीं मत जाओ।"

"मेरे लिए अब यहां कुछ भी करने को नहीं है।"

नए कर्मक्षेत्र खोजने हैं। क्रांति की नई ज्वाला जलानी है। मय्यषी में रहकर वह अब कुछ भी कर नहीं सकता।

"तुम बस्ती मत छोड़ो। कालेज में जाकर पढ़ाई जारी करो।"

"अब मुझसे पढ़ा नहीं जाएगा। आंदोलन करना और पुलिस की लातें खाना

ही मुझे आता है।"

आंदोलन अब उसके जीवन की दिनचर्या बन गया है। और तरह का जीवन अब वह जी नहीं सकता।

पप्पन आलसी और निकम्मा बन गया। वह खूब पड़ा-पड़ा सोया करता। जागने पर दासन को खोजकर उसके साथ घूमा-फिरा करता। कभी-कभी वासूट्टी भी साथ होता।

आंदोलन में भाग लेने से नौकरी खो देने वाले बहुत सारे लोग थे। उनमें से बहुतेरों को नौकरी फिर से मिल गई। वासूट्टी को भी। लेकिन उसने अपनी नौकरी स्वीकार नहीं की।

"समय नहीं आया।" वासूट्टी ने कहा—"मैं जरा सोच-विचार करूं।"

खोई हुई नौकरी के बारे में हमेशा शिकायत करने वाले वासूट्टी के नई नौकरी न स्वीकार करने पर सब दंग रह गए।

"मैं तुम सबको चकित कर दूंगा।" एक दिन वासूट्टी ने पप्पन से कहा, "उस दिन का इंतजार करो।"

एक हंसी के साथ वह चलता बना।

वासूट्टी ने दासन और पप्पन के साथ चलना छोड़ दिया। वह हर जगह अकेला ही जाया करता। कभी-कभी बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर कणारन दादा के पास जा बैठता। कभी-कभी लगातार कई दिनों तक वह बाहर दिखता ही नहीं।

नियमानुसार भारत संघ में शामिल होने से पहले मय्यषी के लोगों को मनचाही नागरिकता स्वीकार करने की छूट दी गई थी। वैसे मय्यषी के लोग एक-दूसरे परीक्षण-क्षेत्र में लाए गए। एक चुनाव के लिए उन्हें विवश होना पड़ा। दो निर्णयों के बीच वे हक्के-बक्के से रह गए।

"उण्णिनायर..."

रियूद सिमित्तियेर से होता हुआ चला जा रहा था उण्णिनायर। तब नाणी ने बुलाया।

" 'ओप्स्योम' का मतलब क्या है, उण्णिनायर ?"

उण्णिनायर की खोपड़ी भी 'ओप्स्योम' की चिंता से भरी पड़ी थी। उस शब्द का अर्थ उसने पहले ही पूछकर समझ लिया था।

"इसका मतलब यह कि तुम चाहो तो गोरी बन सकती हो। यही है इसका मतलब।"

"सो कैसे उण्णिनायर ? मैं काली हूँ न ? गोरे लोग शिरीष के फूल की तरह लाल-लाल हैं न ?"

"इसका मतलब यह नहीं कि चमड़ी गोरी हो जाए।" उण्णिनायर ने स्पष्ट किया—"फ्रांस के नागरिक बन सकते हैं। यही है इसका मतलब।"

नागरिक शब्द का अर्थ भी उण्णिनायर को बताना पड़ा। फिर भी नाणी की समझ में नहीं आया। आखिर सब कुछ समझ जाने पर नाणी जल्दी-जल्दी पूछ बैठी–

"उससे कोई फायदा होगा, उण्णिनायर ?"

"इसमें पूछने की बात कौन-सी है ?"

बैठक में घुसकर उण्णिनायर तौलिए से बेंच पोंछकर वहां बैठ गया। चेट्टियप्पा के चले जाने के बाद नाणी और उसका परिवार दुबारा लाचार हो गया था। पकाने के लिए चावल नहीं। पहनने के लिए कपड़े नहीं। चेट्टियप्पा के द्वारा बनवाकर दिए गए गहने एक-एक करके नदारद होते जा रहे थे...

"ओप्स्योम करने वालों को फाका नहीं करना पड़ेगा। गोरे लोग पैसे देंगे। फ्रांस जाने की इच्छा रखने वाले जा सकते हैं। सरकारी नौकर हों तो ढेर सारा पैसा कमा सकते हैं।"

फ्रेंच नागरिक बन जाने से सुलभ होने वाले सौभाग्यों का उण्णिनायर ने गिन-गिनकर ब्योरा दिया।

फ्रांस जा सकते हैं, यह जानकर नाणी मन के लड्डू खाने लगी। जहाज में बैठकर चले जाने के बाद चेट्टियप्पा की कोई खबर नहीं थी। किसी तरह फ्रांस पहुंच जाने पर नाणी, देवी और उनके पांच बच्चे बच जाएंगे।

"सभी लोग ओप्स्योम कर पाएंगे, उण्णिनायर ?"

"कर क्यों नहीं पाएंगे ?"

"तुम भी करोगे ?"

"उसमें पूछने की कौन-सी बात है," इस ढंग से उण्णिनायर जरा हंस दिया।

जाते समय उसने एक बार फिर मजबूर किया, "तुम और देवी 'ओप्स्योम' करो, नाणी। पांच बच्चे हैं न, तुम लोगों के। उनकी खातिर ही सही, कर लो। बच्चों को भूखों मत मारो।"

नाणी सोचती बैठी रही।

वही नहीं, मय्यषी के लोगों में से एक बड़ा हिस्सा यही सोच रहा था। उण्णिनायर वगैरह इसका प्रचार करते घूमते रहे।

"फ्रांस में जाने की इच्छा रखने वाले फ्रांस जा सकते हैं। बेकारों को नौकरी। पैसे की जगह पैसा। फिर क्यों हिचक रहे हो दोस्तो ?"

उस समय फौज वाला कप्पोरल किट्टु इण्डो–चीन से वापस आया। उसके द्वारा कीमती सिगरेट पीना और पैसा पानी की तरह बहाना मय्यषी के लोग देख रहे थे।

"फ्रांस में स्वर्ग है।"

रोज शाम को किट्टु सज-धजकर टीले पर जाकर खड़ा हो जाता। मय्यषी के लोगों से बातें करता, "औरत की जगह औरत, शराब की जगह शराब। पैसे की बात कहें तो उसकी कोई कीमत ही नहीं।"

अधभूखे मय्यषी के लोग यह सुनकर मुंह बाए खड़े के खड़े रह जाते। उनके कानों में कप्पोरल किट्टु के शब्द गूंजते रहते। बेकारों को नौकरी। ढेर सारी तनख्वाह। या फ्रांस न जाएं तो भी क्या, हर महीने पैसा आएगा न ?

"मैं और घर वाली गोरे बनने जा रहे हैं।"

रामन बढ़ई ने अपना निश्चय ताड़ी के ठेके पर कह सुनाया। उसके पहले ही उण्णिनायर नागरिकता स्वीकार कर चुका था। उसके ठेके पर बैठकर ताड़ी पीने वाले कुञ्चक्कन, कुञ्ञाणन, पादरी के सेवक वगैरह से उण्णिनायर ने कहा, "अब तुम लोग दूसरा ठेका ढूंढ निकालो। मैं तो फ्रांस जा रहा हूं।"

"हम भी फ्रांसीसी हैं। हम भी फ्रांस चल रहे हैं।" कुञ्चक्कन ने बताया। कुञ्ञाणन ने सिर हिलाया। ठेके के एक कोने में पीते बैठे पुलिस वाले कण्णन को हंसी आ गई—

"तुम लोग एक बार जहाज पर चढ़कर गए थे न ? फिर क्या हुआ।"

"जहाज आएगा भी और हम लोग चले भी जाएंगे। तुम देख लेना।"

उण्णिनायर ने जोश से कहा।

शाम को टहलने के लिए निकला कप्पोरल किट्टु नाणी के घर के सामने जाकर खड़ा हो गया। सिर से टोपी उतारकर अंदर की ओर देखते हुए कप्पोरल ने पूछा—

"नाणी ! देवी ! तुम लोग हिचकिचाती क्यों हो ? उण्णिनायर, कुञ्ञाणन वगैरह सबने 'ओप्स्योम' कर लिया है न ?"

"उण्णिनायर का कहना सौ फीसदी सही है क्या ? हम लोग फ्रांस जा पाएंगे क्या ?"

" 'ओप्स्योम' करो। दस दिन के अंदर तुम दोनों फ्रांस में जा पहुंचोगी—चेट्टियप्पा के बंगले में।"

कप्पोरल बैठक में घुसकर बेंच पर बैठ गया। टोपी गोद में रख ली।

"तुम इन बच्चों के बाप से मिले थे ?"

नाणी और देवी की आंखें खिल उठीं।

"क्या पूछा 'मिले'। हम तो रोज ही मिलते थे। मैं और चेट्टियप्पा दोनों एक साथ समुद्र-तट जाया करते थे।"

"बच्चों के बाप मोटे हो गए हैं क्या ? खिलाने-पिलाने के लिए कोई है ?"

"अलमेलू और बच्चे वहीं हैं न ?"

यह सुनते ही नाणी और देवी का खून एक साथ खौल उठा।

सांझ ढलने तक कप्पोरल वहां बैठा बातें करता रहा। फ्रांस की अजब-गजब बातों का ब्योरा दिया। उसने कभी भी फ्रांस देखा ही नहीं था। चार साल तक इंडो-चीन में युद्ध किया। हाथ में चोट लग जाने पर फौज से निकाल दिया गया।

चलते समय उसने एक बार फिर कहा : "तुम लोग 'ओप्स्योम' करने में

हिचको नहीं। उसके दूसरे दिन जहाज में चढ़ जाओगी।"

वैसे नाणी और उसकी बेटी देवी ने फ्रांस की नागरिकता स्वीकार कर ली। उसी दिन कुञ्चिरुता ने भी।

पप्पन और जनार्दनन ने बस्ती भर में घूम-घूमकर कहा, "ओप्स्योम करने से पुराने सरकारी नौकरों को ही फायदा होगा। तुम लोगों में से कोई भी फ्रांस नहीं जा पाएगा।..."

उनके शब्द किसी के भी कानों में घुसे ही नहीं। आगे आने वाले दिनों में भी बहुतों ने फ्रांस की नागरिकता स्वीकार कर ली। कुछेकों ने पैसे और ओहदे के लोभ में। कुछ ने हृदय में सोई पड़ी राजभक्ति के कारण। कुञ्चिरुता और नाणी जैसे लोगों ने हाथ से निकल गए दावीद साहबों और चेट्टियप्पाओं को हथियाने के लिए।

वासूट्टी द्वारा फ्रांस की नागरिकता स्वीकार कर लेने की खबर जान लेने पर मय्यषी के लोगों ने दांतों तले उंगली दबा ली।

कणारन दादा का सिर चकराने लगा।

"अभी उसकी बुद्धि ठिकाने लग पाई है।" उण्णिनायर फूला नहीं समाया।

कणारन दादा, दासन, वासूट्टी वगैरह को वह दिल से नफरत करता था। बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले पर कणारन दादा ने जब रहना शुरू किया तो उसके दिल के टुकड़े-टुकड़े हो गए। वह हमेशा उन लोगों को कोसा करता था।

वासूट्टी उसके शाप से मुक्त हो गया।

"मर्द है तो वही।"

उण्णिनायर ने खुशी से कहा।

सारे बस्ती वालों के बीच वासूट्टी चर्चा का विषय बन गया। दफ्तर से आए अच्चू ने बैठक की आरामकुर्सी पर लेटे ऊंघने वाले मुंशीजी को बुलाकर जगाया :

"आपको पता लगा ? उस वासूट्टी ने 'ओप्स्योम' किया।"

"तुमसे किसने कहा ?"

मुंशीजी को यकीन नहीं हुआ। उनकी नींद हवा हो गई। आरामकुर्सी पर सीधे बैठकर उन्होंने अच्चू के चेहरे पर देखा—

"तब फिर वह गोरों के खिलाफ आंदोलन चलाने क्यों गया ?"

अच्चू की भी समझ में यह नहीं आया। आंदोलन के नाम पर नौकरी से इस्तीफा देने वाला व्यक्ति है, परिवार को फाका करवाने वाला है।

"यह बुद्धि पहले आ जाती तो उस कोढ़ी को भूखों नहीं मरना पड़ता।"

मुंशीजी आरामकुर्सी से उठकर बरामदे में टहलने लगे। बोझा ढोने वाला पोक्कनच्चन फाका करते-करते मरा था। मरते समय गला सींचने के लिए एक बूंद

मांड़ तक नसीब नहीं हुआ था। मुंशीजी वह सब सोच रहे थे।

"सबका दिमाग ठिकाने लग रहा है..." न जाने क्या सोचते हुए मुंशीजी ने अपने आपसे कहा। वे दुबारा आरामकुर्सी पर आकर बैठ गए।

"मेरे बेटे जैसा तो नहीं बना वह। इतना ही काफी है।"

वह आंखें मींचे लेटा रहा।

वासूट्टी कुछ दिन तक बाहर निकला ही नहीं। बहुत से लोग उससे मिलने गए। वासूट्टी उनसे मिला ही नहीं। कणारन दादा ने कई बार आदमी भेजकर बुलवाया। वह नहीं गया।

एक हफ्ते के बाद वासूट्टी बाहर निकला। वह सीधे पप्पन के घर गया। दासन भी वहीं मिलेगा, यह उसे पता था।

"पप्पन यहां नहीं है क्या ?"

अहाते में खड़े-खड़े उसने पूछा। पप्पन और दासन ऊपर से उतरकर आए। वे खड़े एक-दूसरे का चेहरा देखते रहे।

"मैं विदा लेने आया हूं।" वासूट्टी ने कहा , "कल मैं पांडुचेरी जाऊंगा। वहां से फ्रांस जाने के लिए जहाज में चढ़ूंगा।"

दासन और पप्पन ने वासूट्टी को अचरज से देखा।

"वासूट्टी, तुम्हें ऐसा सूझने का कारण क्या है ?"

"वासूट्टी, मैं तुम्हें फ्रांस जाने ही नहीं दूंगा। उसके पहले मैं तेरा काम तमाम कर दूंगा।"

पप्पन का शरीर कांप रहा था।

वासूट्टी हंस पड़ा। वह धुली हुई कमीज और धोती पहने था। तेल लगे बाल एक तरफ मांग निकालकर काढ़े हुए था।

"बोलो वासूट्टी, तुमने ऐसा किया क्यों ?"

"किसी को सफाई देने की जरूरत नहीं है। विमोचन आंदोलन समाप्त हो चुका है। आज हमें मनचाहा करने की आजादी है।"

"तुम्हारी अपनी अंतरात्मा नाम की कोई चीज नहीं है क्या ? तुम्हारे आदर्श कहां...?"

"मेरे पुराने आदर्श मय्यषी की आज़ादी के साथ-साथ पूरे हो गए। अब मेरे पास नए आदर्श हैं।"

"आदर्श तुम्हारे लिए कपड़ों जैसे हैं—बदल-बदलकर पहनने के लिए ?"

"आदर्श बदलते हैं—समय बदलने के साथ-साथ।"

वासूट्टी ने आगे कहा, "गोरों से मुझे कभी भी घृणा नहीं थी। मैंने उन लोगों से मय्यषी छोड़ जाने की सस्नेह मांग की थी। वह युग की मांग थी। उनकी समझ में यह न आने से मैंने उन्हें समझा दिया...।"

"आगे कहो, वासूट्टी ! हम भी जरा सुनें।"

वासूट्टी जरा हिचकिचाया। फिर दासन के चेहरे पर देखते हुए आगे कहा, "वे चले गए। इसलिए अब वे हमारे दुश्मन नहीं रहे। अब वे हमारे कोई भी नहीं। इसलिए मैं या तुम आज फ्रांस की नागरिकता स्वीकार करें तो ब्रिटिश नागरिकता या अमेरिकन नागरिकता स्वीकार करने के समान है।"

"वासूट्टी, मैं तुम्हें समझ नहीं पा रहा हूं।"

वासूट्टी ने गला साफ किया। उसने रूमाल लेकर गर्दन और चेहरा पोंछा।

"लेकिन पैसा कमाने और वैसे अपने परिवार की गरीबी दूर करने हेतु जब मैं फ्रांस के लिए जहाज पर चढूंगा तो सिर्फ एक व्यक्ति ही मुझे समझ पाएगा—दोनों पैर खो देने वाले, कूल्हे पर नासूर हो जाने पर फाका करते-करते मरने वाले मेरे पिताजी।"

फिर किसी को कुछ भी कहना नहीं था।

"अद्ये..."

हाथ बढ़ाते हुए वासूट्टी ने विदा मांगी। लेकिन दासन या पप्पन ने उसके बढ़ाए हुए हाथ को अपना हाथ नहीं दिया। हाथ बढ़ाए वह पल-भर यों ही खड़ा रहा। फिर बाहर निकलकर चलता बना।

दूसरे दिन वासूट्टी पांडुचेरी के लिए रेलगाड़ी पर चढ़ा। पांडुचेरी से एक हफ्ते के बाद जहाज पर चढ़ गया।

सैंतीस

पेंशन पाकर भरतन गांव आ पहुंचा। समुद्रों और बंदरगाहों से उसने हमेशा-हमेशा के लिए विदा ले ली। पिछली बार उसके गांव आते समय दासन जेल में था। जेल में जाकर दासन से मिलने की उसने कोशिश की थी। लेकिन उसको भी अनुमति नहीं मिली।

रेलगाड़ी से उतरकर घर पहुंचते समय बरामदे में सभी खड़े थे। लीला, चंद्रिका, बुढ़ापे के कारण खड़े होने में भी असमर्थ मामा और बंधु-बांधव।

इस बार संदूक और सूटकेस हर बार से ज्यादा थे। आखिरी आगमन है न।

बरामदे में खड़े सभी को उसने सरसरी निगाह से देखा। दासन नहीं दिखा। गाड़ी से उतरने पर उसने सबसे पहले दासन के बारे में ही सोचा था। मय्यषी आजाद हो गई थी न! मय्यषी की आजादी दासन की याद दिला रही है।

दासन को रेलवे स्टेशन पर भी नहीं देखा। उसने सोचा कि घर में वह व्यस्त होगा। मय्यषी अब उसके और उसके साथियों के हाथों में होगी न!

खाना खाते समय भरतन ने पत्नी से पूछा, "दासन आता नहीं है क्या ?" उन्होंने यों ही सिर हिला दिया। चंद्रिका ने अचानक खाना बंद कर दिया।

"वह अब कर क्या रहा है ?"

भरतन को जानने की उत्सुकता थी भरतन को। उसका जीवन, संघर्ष और तूफान से भरा था। अब भी उसे जिंदगी का कोई किनारा मिल जाता तो अच्छा होता।

लीला ने धीरे-धीरे दासन के बारे में कहना शुरू किया। तब उसे याद आया। दासन जिद्द पकड़े हुए है, घर पर जाता ही नहीं– ऐसा लीला ने लिखा था।

सब कुछ जान लेने पर भरतन को दुःख हुआ।

"वह सुधर जाएगा।" उसने अपने आपसे कहा।

"मैं उससे जरा बात करके देखूं।"

तब उसने देखा कि चंद्रिका खाए बिना थाली में देखती बैठी है।

"तुम खाती क्यों नहीं, बिटिया ?"

"भूख नहीं, पिताजी !"

"उसे अब भूख और नींद नहीं आती।" लीला ने कहा, "उसके दिमाग में क्या भरा है, पता नहीं। औरों को तो डर लगता है।"

चंद्रिका बहुत दुबली हो गई थी। चेहरा छोटा हो गया था। ढेर सारे बढ़े लंबे बाल ही हैं सिर्फ।

बिना काजल लगी फीकी आंखें।

उसके बारे में बातें शुरू हो जाने पर चंद्रिका उठकर अंदर चली गई।

उस दिन शाम को भरतन बाहर नहीं निकला। बरामदे में बैठा वह पत्नी के साथ भावी योजनाएं बनाता रहा। एक बड़ा मकान बनवाना है। चंद्रिका के हाथ पीले करने हैं। वह भविष्य को साफ-साफ देख रहा है। उठते-बैठते, चलते-फिरते समय वह इसी धुन में रहता।

दो दिन बीत गए थे उसके दासन से मिले बगैर।

"तुम जीत गए, है न ?"

दासन आज़ाद मय्यषी की मिट्टी पर खड़ा था।

"कभी न कभी तुम्हारी जीत जरूर होगी, यह मुझे पता था। कुञ्ञनन्तन मास्टरजी की आत्मा को कम-से-कम अब मुक्ति तो मिली।"

"हां, भरतन दादा !"

वह दुःख की हंसी हंसा।

"लेकिन सिर्फ मेरी आत्मा को ही मुक्ति नहीं मिली, भरतन दादा !"

पहले भरतन ने सोचा था कि दासन किसी ऊंचे ओहदे पर काम करते हुए शान-शौकत से जीवन बिता रहा होगा। लेकिन उसने दासन में कोई तब्दीली नहीं देखी। बिना इस्तरी वाली आधी बांह की कमीज। झाड़ जैसे बढ़े खड़े बाल। दाढ़ी बनाए एक हफ्ता बीत गया। बिना किसी तब्दीली वाला दासन। आंखों में पुरानी दृढ़ता भी ज्यों की त्यों है।

"अब रहते कहां हो ?"

दासन के कंधे पर हाथ रखे वह रियूद लग्लीस से होता हुआ चलता रहा।

"कमर सीधी करने के लिए इस धरती पर मेरे लिए कोई जगह नहीं है क्या ?"

"पप्पन के घर में रहते हो ?"

"रहना मेरे लिए कोई समस्या नहीं है, भरतन दादा !"

"मेरा घर रहते कहीं दूसरी जगह रहना है क्या ?"

"भरतन दादा, माफ कीजिए।"

"मुझे एक बात कहनी है।" भरतन ने कहा, "ऐरे-गैरे के घर में पड़े रहने से अच्छा है मेरे घर में पड़ा रहना।"

"मैं सोचूंगा, भरतन दादा !"

चंद्रिका के घर में रहने से बढ़कर खुशी की और कौन-सी बात उसके लिए हो सकती है ? सदा-सर्वदा उसकी पायलों की रुनझुन सुनते रहना। औषधियुक्त तेल लगे बालों की महक भरे चंद्रिका के चलने-फिरने वाले कमरों में हमेशा चलना-फिरना। उसकी परछाई में जीना...

लेकिन हमेशा वहां वह रह नहीं पाएगा। अपना घर निषिद्ध हो जाने पर खुली सड़क ही है उसका घर।

पातार समुद्र-तट पर बैठे हुए उन लोगों ने सूर्यास्त देखा। उन सभी मौकों पर भरतन को कहने का मन हुआ—यह बेकार की जिद मत करो। घर वापस जाओ। बिना किसी घर के कितने दिन ऐसे खुली सड़क पर काट पाओगे ? वह दासन से सहमत हो ही नहीं सका। लेकिन वह यह उससे कैसे कहे ? उसे कैसे सलाह दे ?

उम्र के लिहाज से दासन उसका बेटा है। लेकिन उसके सामने खड़े होने पर उसे लगता है कि वह उससे कहीं छोटा हो जाता है।

अंत में सूरज के डूबने पर समुद्र धुंधला हो गया। अंधेरा हो जाने पर उसने कह ही दिया।

"मैं जाऊंगा।" दासन ने कहा, "पिता ने ही मुझे दुत्कारकर निकाला था। पिता ही मुझे बुलाएं।"

"तुम्हारे पिता वैसा करेंगे नहीं।"

दासन को उसका कोई जवाब देना ही नहीं था।

बहुतों ने मुंशीजी को मजबूर किया, दासन को बुलाने के लिए। तब मुंशीजी ने कहा, "मेरे बुलाने से वह इस घर में पैर नहीं धरेगा।"

मुंशीजी को भरतन भली-भांति जानता है। वह बेटे के सामने सिर नहीं झुकाएगा।

"तुम अपने पिता को माफी नहीं दे सकते क्या ? तुम्हारे खातिर बहुत तकलीफ झेली है उन्होंने। जेल गए हैं।"

"मय्यषी की आजादी के लिए वह पिता की भेंट है। किसी राज्य की आजादी कोई छोटा काम नहीं है। वह खून और आंसू मांगती है।..."

भरतन मौन हो गया।

मैं तुमसे बहस में जीत नहीं सकता, बेटे। वह मन ही मन कह रहा था—तुम मुझसे कितने महान हो !...

दासन कभी-कभी भरतन के घर जाता। कभी-कभी वहीं ठहर भी जाता। पहले जैसे लीला उससे बातें नहीं किया करतीं। उनकी हंसी-मजाक मानो खत्म हो गई हो। लीला की आंखें हमेशा उसके पीछे लगी रहतीं। न जाने कौन-सा डर उनमें घर कर गया है।

अधबने घर में घास बढ़ी खड़ी दीवाल से सटकर लेटते समय चंद्रिका के

बालों पर हाथ फेरते हुए उसने कहा, "तुम्हारी मां मुझे नापसंद करने लगी हैं।"

"लेकिन मैं आपसे ज्यादा प्यार करने लगी हूं।"

चंद्रिका की दबी हंसी की आवाज। उसकी पायलों की रुनझुन...

वासूट्टी के चले जाने के कुछ ही दिनों बाद पप्पन भी गांव छोड़कर चला गया। अपने-आपको भी अनजाने किसी लक्ष्य की खोज में किसी अज्ञात राज्य की ओर।

एक दिन कंधे पर झोला लटकाए पप्पन दासन के सामने आकर खड़ा हो गया :

"मैं जा रहा हूं।"

"कहां, पप्पन ?"

"मुझे पता नहीं। दूर किसी राज्य में।"

बहुत दिनों से पप्पन बस्ती छोड़ जाने की बात कह रहा है। कुछ दिनों से उसकी बातचीत का विषय सिर्फ वही हुआ करता है। कभी-कभी रेलवे स्टेशन पर बैठे-बैठे दूर से आने और दूर को जाने वाली गाड़ियां देखता रहता।

"तुम वापस कब आओगे ?"

"वो भी मुझे पता नहीं, दासन !"

दासन रेलवे स्टेशन तक पप्पन के साथ गया।

"मैं चिट्ठी लिखूंगा। मेरी ओर से चंद्रिका से विदा मांग लेना।"

साढ़े बारह और एक बजे दो गाड़ियां मय्यषी से होकर गुजरती हैं—दक्खिन और उत्तर से आने वाली, भिन्न-भिन्न जगहों पर जाने वाली मेल गाड़ियां। वे गाड़ियां मय्यषी में हमेशा देरी से ही आया करती थीं। कौन-सी गाड़ी पहले आएगी, यह कहा नहीं जा सकता।

"पहले आने वाली गाड़ी में मैं चढ़ जाऊंगा। मेरा कोई लक्ष्य नहीं।"

पप्पन ने प्लेटफार्म पर खड़े होकर पटरियों पर देखा। गाड़ी आने का समय नहीं हुआ था।

"दासन, तुम कोई निश्चय करो। कब तक ऐसे रह पाओगे ?"

"मैंने कुछ-कुछ तो तय कर रखा है।"

कूर कोम्प्लमान्तेर में एक अध्यापक की जगह खाली है। बिना किसी कठिनाई के वह मिल जाएगी। प्लास दार्मिन के पास वर्णसंकरों से भरी पड़ी जगह में एक कमरा चाहे तो मिल सकता है।

यह जानकर पप्पन को खुशी हुई।

"हम नए अड्डों की खोज में हैं..."

दूर पर रेलगाड़ी की 'छक्...छक्...' सुनाई पड़ी। कोई गाड़ी आ रही है। पप्पन ने वायदा निभाया। पहले आई गाड़ी में वह घुस गया।

"मैं वापस आऊंगा किसी दिन।"

चलने वाली गाड़ी से बाहर देखता हुआ पप्पन हाथ हिलाता रहा। गाड़ी के आंखों से ओझल हो जाने तक दासन उससे खड़ा देखता रहा। फिर धीरे से वह मुड़कर चल पड़ा।

अड़तीस

लेस्ली साहब के बहुत पुराने बंगले का सामने वाला दरवाजा खुला।

छड़ी के सहारे खड़े गस्तोन साहब ने दीमक लगी खिड़की से मय्यषी को देखा। पुरानी होने पर भी साफ-सुथरी कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए थे वे। गर्दन पर चौड़ी लाल टाई बांधे थे।

छड़ी टेकते हुए वे धीरे-धीरे सड़क पर आए। तीस साल बाद वैसे पहली बार हिजड़ा साहब अपने बंगले से बाहर आए। पूरे सफेद हुए बाल सफेद तंतुओं की तरह कंधे पर लटके पड़े थे। अपाहिज बनी किसी पुण्यात्मा की तरह थे वे।

छड़ी टेकते हुए साहब रियूद रसिदाम्स से होकर धीरे-धीरे चले। वे चलना भूल चुके थे। एक बच्चे के डगमगाकर चलने जैसी थी उनकी चाल।

कुछ दूर चलने के बाद साहब सड़क पर रुक गए। हल्की धूप में उनका शरीर झुलस गया। सूरज की किरणें पड़े तीन दशाब्दियां बीत चुकी हैं न।

कुछ देर हांफकर सुस्ताने के बाद गस्तोन साहब फिर चल पड़े। पूर्वजन्म की यादगारों जैसे रियूद रसिदाम्स और उसके आसपास की जगह उनकी आंखों के सामने साफ-साफ दीखने लगीं। तीव्र दुःख से झुलसी आंखों में आंसू झलक रहे थे।

पातार समुद्र-तट सुनसान पड़ा था। सूरज निकले ज्यादा देर नहीं हुई थी। चांदनी की तरह हल्की धूप समुद्र और नदी पर फैली पड़ी थी।

गस्तोन साहब को सबसे पहले देखने वाला पादरी का सेवक था। सवेरे के घंटे बजाने के बाद वह गिरिजाघर से वापस जा रहा था। छड़ी के सहारे खड़े गस्तोन साहब ने उसे देखा। वे एक-दूसरे को पहचान नहीं पाए।

"मेरी पुनीत माता–!"

व्यक्ति को पहचान लेने पर पादरी के सेवक के मुंह से एक चीख निकल पड़ी। गस्तोन साहब अपना लंबा कारावास खत्म करके बाहर आ गए हैं। भागकर गिरिजाघर के सभी घंटे एक साथ बजाने का मन हुआ उसका।

"पीटर है न ?"

गस्तोन साहब के ओठ हिल उठे। पादरी का सेवक गस्तोन साहब के पास जा खड़ा हुआ। एक हाथ से छड़ी टेकते हुए दूसरा हाथ कंधे पर रखे वे आगे बढ़े।

चाय बनाने वाला पत्रोस हक्का-बक्का रह गया। पत्रोस की चाय की दुकान पर जोर से अखबार पढ़ने वाले केलू मास्टरजी खामोश हो गए। धर्मशाला के कमरे से पीलपांव वाला अन्तोणी घसीटता हुआ आया। सब के सब गस्तोन साहब को देखते खड़े रह गए। साहब के चेहरे ने उन्हें डरा दिया। उसका शरीर किसी प्रेत की तरह पीला पड़ गया था। हिजड़े साहब की निगाह इंसानों जैसी नहीं थी। उनमें अमानवीयता का कुछ भाव था।

पत्रोस के सड़क पर आ जाने पर साहब ने पादरी के सेवक के चेहरे पर देखा।

"चाय बनाने वाले पत्रोस को क्या आप भूल गए ?"

पत्रोस की आवाज रुंधी हुई थी।

"तुम पारक्कल में थे न ?"

गस्तोन साहब के इस दुर्घटना के शिकार होते समय पत्रोस की दुकान पारक्कल में थी।

"पढ़ते समय मैं और दामू तुम्हारी दुकान से चाय पिया करते थे। तुम्हारे उबाले हुए केलों का स्वाद अब भी मेरी जीभ पर है। वह सब तुम्हें याद है, पत्रोस ?"

पत्रोस को देखकर साहब मुस्कराए। पत्रोस रो पड़ा। केलु मास्टरजी, पीलपांव वाला वगैरह तब तक सड़क पर आ पहुंचे थे। गस्तोन साहब की आवाज सुनकर वे सब फूले नहीं समाए—सालों से सुनकर भूली हुई गस्तोन साहब की आवाज।

"आप आइए साहब। आपको मैं अपना उबाला हुआ केला दूंगा।"

पत्रोस का गला रुंध गया। दुकान के सामने वाली सीढ़ियां चढ़ने में उसने साहब को सहारा दिया। छड़ी दीवाल के सहारे रखकर गस्तोन साहब बेंच पर बैठ गए। टोपी उतारकर बगल में रख ली। हल्की धूप से उनके पसीना निकलने लगा था।

पत्रोस ने कांपते हाथों से भाप निकलता उबाला केला साहब के सामने लाकर रख दिया। एक बड़े गिलास में चाय भी।

"तो भी आपने बड़ी बेमुरव्वत बरती। हम सबको भूल बैठे न ?"

"मैं अपने आपको ही भूलने की कोशिश कर रहा था केलु मास्टरजी !"

अब आप बाहर आ गए, इतना ही काफी है।"

पत्रोस को उसमें खुशी हुई।

सीढ़ियों के पास अन्तोणी खड़ा था। उसके दोनों पैरों पर पीलपांव हो गया था। पांव की दरारों पर मक्खियां भिनभिना रही थीं। गस्तोन साहब ने पतलून की जेब से चवन्नी निकाल कर अन्तोणी के फैलाए हाथ पर रख दी...

पादरी के सेवक के कंधे पर हाथ रखे रियूद लग्लीस की ओर चल पड़े। टीले पर चढ़ते समय वे पहाड़ी पर चढ़ने जैसे हांफते रहे। सड़क के पास वाले घरों से स्त्रियाँ और बच्चे बाहर निकल आए। किसी को भी गस्तोन साहब पहचान नहीं सके। हर घर के सामने वे छड़ी के सहारे खड़े हुए। घर का पास-पड़ोस देखकर

उन्होंने व्यक्तियों को पहचानने की कोशिश की।

"कणारी नहीं है यहां ?"

बैंड वाले कणारी के घर के सामने खड़े होकर उन्होंने पुकारकर पूछा। कणारी को मरे हुए बहुत साल हो जाने पर भी उसकी तुरही बरामदे की दीवाल पर अभी भी टंगी हुई थी।

"वे चल बसे।"

अहाते में बैठी नारियल के पत्ते बुनने वाली नाणी उठ खड़ी हुई।

"यह लड़की कौन है ?"

"बेटी है, देवी।"

"ये बच्चे ?"

चेट्टियप्पा के बच्चों को देखते हुए साहब ने पूछा। वे सब कुछ पूछताछ करके जानने की कोशिश कर रहे थे। मय्यषी के लोगों की याद ताजा कर रहे थे और नयी स्मृतियों के बीज बो रहे थे।

रियूद ला सिमित्तियेर—गस्तोन साहब के ओठ पीले पड़ गए। मरघट जाने का रास्ता था वह। पापा और मम्मी की अंतिम यात्रा का रास्ता। कल उसके जाने का रास्ता...

"क्या हुआ, साहब ?"

"कुछ नहीं, पीटर।"

गस्तोन साहब ने कोट की जेब से रूमाल निकालकर आंखें पोंछ लीं। सेवक के कंधे पर हाथ धरे वे फिर से चल पड़े। अब चलने में एक तरह का सिलसिला बन रहा था। वे चलना सीख गए। दूर पर मुंशीजी का घर देखते ही साहब के पैरों की चाल तेज हो गई। किसी समय उनका दिली दोस्त था दामू। किसी समय उन्हें छाती से चिपटाए दूध पिलाने वाली कुरम्बी अम्मा...

सेवक के कंधे से हाथ हटाकर छड़ी जोर से टेकते हुए वे मुंशीजी के घर में घुस गए। गस्तोन साहब की आवाज सुनने पर कुरम्बी अम्मा में मानो बिजली दौड़ गई। ऊंचा सुनने वाली कुरम्बी अम्मा के कानों को दशाब्दियों पीछे से आने वाली उस आवाज को पहचानने में कोई दिक्कत नहीं हुई।

"गस्तोन ? मेरे प्यारे बेटे, तुम !"

तिमिर लगी उनकी आँखों को गस्तोन साहब को देखने के लिए दृष्टि फिर से मिल रही थी क्या ?

मुंशीजी, कौसू अम्मा और गिरिजा बैठक में आ पहुंचे थे। मुंशीजी ने गस्तोन को पकड़कर आरामकुर्सी पर बिठाया। कुछ देर तक वहां खामोशी छाई रही। खामोशी में कुरम्बी अम्मा की सिसकियां ही सुनाई दे रही थीं।

"मेरी बेटी है, गिरिजा।"

गस्तोन के गिरिजा को ही देखते रहने पर मुंशीजी ने बताया। उसे गस्तोन साहब ने देखा नहीं था।

"बड़ा लड़का था न ? वह कहां है ?"

दामू की पहली संतान लड़का था, यह गस्तोन साहब को याद था। उसके सवाल का किसी ने भी जवाब नहीं दिया।

"यहां नहीं है क्या ?"

"उसकी कहानी बता दूंगा। बहुत कुछ कहना है।"

दासन की कहानी वह एक-दो शब्दों में कहकर खत्म नहीं कर सकता। दासन की कहानी सुनाते समय साथ-साथ आंसू भी बहाने पड़ेंगे। वह इन्सान की तकदीर की कहानी है।...

मुंशीजी और गस्तोन साहब बैठक में बैठे-बैठे बातें करने लगे। उन्हें न जाने कितनी-कितनी बातें करनी हैं।—कुरम्बी अम्मा गस्तोन के पैरों के पास बैठकर उनकी बातचीत सुनती और बीच-बीच में आंसू बहाती रही। खाना तैयार होते-होते मुंशीजी अपनी दुरन्त कहानी का अधिकांश भाग सुना चुके थे।

"तुम घबराओ नहीं मोनमी (दोस्त)।" गस्तोन साहब ने अपने दोस्त को तसल्ली दी—"दासन आएगा।"

धूप कम होने पर गस्तोन साहब अपनी छड़ी लेकर बाहर निकले। सेवक के कंधे पर अपना हाथ धरे वे चल पड़े...।

गस्तोन साहब अपने बंगले से बाहर निकल आए थे, यह खबर अब तक मय्यषी के सारे लोगों ने जान ली थी। उन्हें एक नजर देखने के लिए वे सड़कों पर खड़े-खड़े इंतजार कर रहे थे। रास्ते में जगह-जगह पर रुकते हुए समय द्वारा बदले हुए चेहरे-मोहरों को पहचानते हुए साहब सांझ ढल जाने तक चलते ही रहे। आखिर वे मय्यषी की पुनीत माता के गिरिजाघर के सामने छड़ी का सहारा लिए कांपते हुए खड़े रहे। फाटक के ऊपर हाथ पसारे खड़े क्रूस की ओर और मय्यषी की आत्मा का रोदन प्रतिध्वनित करने के लिए बने बड़े-बड़े घंटों की ओर वे खड़े देखते रहे। पुनीत आत्माओं की तस्वीरों और स्फटिक दीपों से अलंकृत गिरिजाघर की वेदी के सामने वे घुटनों के बल गिर पड़े...।

छाती पर सिर सटाए वे न जाने क्या-क्या फुसफुसाते रहे। दुबारा सिर उठाने पर मोमबत्ती पिघलने जैसे आंखों से आंसू बह रहे थे।

गिरिजाघर से बाहर आए गस्तोन साहब ने पादरी के सेवक से विदा ली।

लहरों से रहित भरे पड़े समुद्र का रास्ता रोके पड़े रहने तकवे फिर भी चलते ही रहे। उसके उस पार जाने की उनकी इच्छा थी ही नहीं। वे अपने लक्ष्य तक पहुंच चुके थे। उनके हाथ से छड़ी धीरे-से नीचे खिसक गई...

फिर कभी भी मय्यषी के लोगों ने हिजड़े साहब का दुःख-गीत सुना ही नहीं।

उनचालीस

आसमान गिरिजाघर के ऊपर वाले क्रूस तक उतरा पड़ा था। मय्यषी के ऊपर लगातार पानी बरसता रहा। घुल-मिलकर लाल हुई नदी बरसात के घने ओट में नीचे समुद्र की ओर बहती जा रही थी। आखिर एक दिन नदी सीमाओं को तोड़कर आगे बढ़ने लगी। तात्तकुलम और उसके पास-पड़ोस पानी में डूब गए। रियूद लागार से नावें चलने लगीं। बत्ती वाले एक खंभे के सिवा सारा कुछ पानी में डूबा हुआ था। बढ़कर चढ़ने वाले पानी से बचने के लिए असंख्य जीव-जंतु उस खंभे से सटे पड़े रहे।–बिच्छू, सांप, जोंक, मेंढक, कीड़े-मकोड़े।

चंद्रिका के घर के तीनों ओर पानी भरा था। कभी न रुकने वाली बरसात की घनघोर आवाज। दिन-भर भरतन ऊनी कपड़े पहने सामने वाली मेज पर अपने बनवाने वाले घर का नक्शा देखता बैठा रहा।

अबूट्टी मुसलमान के अधबने घर वाला बगीचा भरतन ने खरीद लिया। कभी-कभी वह दासन के साथ अधबने घर के पास जाकर खड़ा होता। वे बगीचे में घूमते-फिरते। भरतन के हाथ में जो बंगला वह बनवाने जा रहा है, उसका नक्शा होता। वह उसे हाथ से नीचे रखता ही नहीं था। मेज पर फैलाकर वह घंटों उस पर आंखें गड़ाए बैठा रहता। पेंसिल से निशान लगाता, लिखता और मिटाता। रात में बिस्तर पर भी वह कागज फैला रहता।

"देखो, यही है हमारा शयन कक्ष।"

उसने अपनी छड़ी से मिट्टी पर निशान लगाया।

"यहां गुसलखाना। फिर यहां देखो, एक छोटी बालकनी होगी। शाम को बैठकर हम लोगों के गप्पें मारने के लिए है यह। थोड़ा-सा गला तर करने के लिए भी।"

दासन को देखकर भरतन तोंद हिलाते हुए खिलखिलाकर हंसा। बस्ती में आने के बाद वह कुछ ज्यादा मोटा हो गया था। चेहरे पर काजू जैसी लालिमा।

"पिताजी, अबूट्टी मुसलमान का यह घर क्या आप तुड़वा रहे हैं ?"

उनके साथ आई चंद्रिका ने पूछा। चंद्रिका दासन की परछाईं में खड़ी थी।

"तुड़वाए बिना और क्या करना है बेवकूफ ?"

"उसे मत तुड़वाइए।"

"तो मैं उसे नहीं तुड़वाता।" भरतन ठहाका मारकर हंसा, "शादी के बाद तू और तेरा पति उसी में रहना। दासन, तुम्हारी राय क्या है ?"

कुछ बोले बिना वह लार निगलकर रह गया।

कूर कोम्प्लमान्तेर के अध्यापक का काम मिलने वाला है। एक हफ्ते के अंदर नियुक्ति-पत्र दिलवा देने का वायदा कणारन दादा ने किया है। उसके बाद भरतन से बातचीत करनी होगी। उसके लिए हिम्मत संजो रहा है दासन।

वे अधबने मकान में घुसकर यों ही घूमे-फिरे। अंडे सेंकने वाली चकोर ने घोंसले में बैठे-बैठे शोर मचाया। बढ़ी खड़ी घास वाली दीवार के पास पड़ी एक पायल दासन की निगाह में पड़ी। चारों ओर बीड़ी के टुकड़े भी। उसने चंद्रिका के पैरों को देखा। एक पैर में ही पायल थी...।

उस दिन शाम को उसने वह पायल उसके पैरों में बांध दी।

दो-तीन दिन बाद भरतन के मजदूरों ने वह अधबना घर तोड़-फोड़कर समतल बना दिया। अंडे सेंकने वाली चकोर रुंधे गले से रोती हुई लाल-लाल पंखों को फड़फड़ाती हुई उड़ गई। उसके अंडे गिरकर चकनाचूर हो गए। दीवारें जमीन पर गिर गईं।...

चंद्रिका के सिर के बालों पर खोंसने वाली 'हेयर पिन' और टूटी चूड़ियों के ऊपर सिर्फ मिट्टी का एक बड़ा ढेर ही रह गया।

दासन खड़ा देखता रहा—उसकी परछाईं में सिसकियों को दबाए खड़ी चंद्रिका भी।

दूसरे दिन आसमान बादलों से भर गया। धीरे-धीरे वर्षा होने लगी। बाद में उसने घनघोर रूप धारण कर लिया और मय्यषी में प्रलय ला दी।

बाहर घना अंधकार छाया हुआ था। चारों ओर वर्षा की बूंदें गिरने से बेचैनी भरी आवाज हो रही थी। आधी रात बीत चुकी थी। मय्यषी के लोगों द्वारा भयावने सपने देखने का समय।

भरतन के घर में अचानक दीया जला। हाथ में चिराग लिए वह ऊपर गया। पीछे-पीछे लीला भी। वे चंद्रिका के कमरे के सामने जाकर खड़े हो गए। दरवाजा अंदर से बंद था।

उसने दरवाजा खटखटाकर बुलाया। अंदर से कोई जवाब नहीं मिला। लीला जाने क्या बुदबुदाई। चिराग की रोशनी में भरतन की गर्दन की नसें फूली दीख रही थीं। उसकी आंखें सिकुड़ गई थीं।

"चंद्री, दरवाजा खोलने में ही तेरी भलाई है। नहीं तो मैं लात मार-मारकर तोड़ डालूंगा।"

"पिताजी, आप चाहते क्या हैं ?"

"दरवाजा खोलने में ही तेरी भलाई है। मैं तुझे जिंदा नहीं छोड़ूंगा..."

भरतन के हाथ का दीया कांपने लगा।

दरवाजा खुला। दासन और भरतन एक-दूसरे के चेहरे पर देखते खड़े रहे। दासन के पीछे खुले बालों के साथ चंद्रिका दुबकी खड़ी थी।

दुःख और गुस्से से भरतन की आंखों के आगे अंधेरा छा गया।

"दासन, तुम ऐसा करोगे, मैंने नहीं सोचा था।"

लीला की आंखें भर आईं। भरतन को सांस लेना दूभर हो गया था।

"मेरे साथ ऐसा नहीं करना था, दासन !"

बात करने में उसे दिक्कत हुई। शब्द गले में अटके रहे।

"यही है तेरा आदर्श। है न ? आदर्श का ढोल पीटने वाला... ।"

"पिताजी, आप दासन दादा को डांटें-फटकारें नहीं।" दासन के पीछे खड़ी-खड़ी उसने कहा, "मेरे बुलाने पर ही दासन दादा आए थे।"

"जबान बंद रख...!"

बरसात और हवा को भी मात दे गई उसकी आवाज, "दासन, नीचे उतरकर आ।"

दीया लिए वह नीचे उतरा। पीछे-पीछे दासन भी।

"तुम्हें कोई सफाई देनी है ?"

"देनी है, भरतन दादा...!"

अभी तक चुप्पी साधे खड़े दासन ने कहा, "अपनी याद में मैं एक दिन भी चैन से रह नहीं पाया हूं। मय्यषी की आजादी ने मेरे अलावा सबकी आंखों के आंसू पोंछ दिए। भरतन दादा, आज मेरी एकमात्र खुशी चंद्री है। वह न हो, तो मैं पागल हो जाऊं..."

"तुझे पागल होने से बचाने के लिए मेरी बेटी को व्यभिचार करना है क्या ?"

"भरतन दादा, आप अनजानों की तरह बातें कर रहे हैं।"

"हां रे, मुझे कुछ भी पता नहीं। मैं बेवकूफ हूं, ऐसा तूने समझा।"

"भरतन दादा, आप पहली बार मुझे और चंद्री को देख रहे हैं। इसीलिए आप आगबबूला हो रहे हैं। लेकिन भरतन दादा, यह पहली बार नहीं है। हम..."

अचानक बाहर की ओर हाथ से इशारा करते हुए उसने आज्ञा दी, "निकल बाहर...!"

वह खड़ा-खड़ा कांपता रहा। ऐसा लगा जैसे हाथ वाला दीया नीचे गिर जाएगा। दासन ने उसके चेहरे पर घबराहट के साथ देखा। भरतन को इतना अधिक कुपित उसने कभी नहीं देखा था।

"मेहरबानी करके भरतन दादा, आप जरा शांत होइए। मुझे जो कुछ कहना है, वह सुनिए।"

"मुझे अब कुछ भी नहीं सुनना है। दूध पिलाने वाले हाथ पर ही तूने डंसा है।"

"भरतन दादा..."

"अब तेरे लिए इस घर में जगह नहीं। निकल बाहर–"

भरतन ने दरवाजा खोला। बाहर मूसलधार वर्षा हो रही थी। खेतों पर घना अंधेरा छाया हुआ था...

"दासन दादा, जाइए नहीं।..."

"तुझे मैं जान से मार डालूंगा, पगली !" भरतन चंद्रिका की ओर मुड़ा–"जा अंदर..."

"मैं फिर आऊंगा चंद्री..."

"इस घर के अंदर आगे कभी पैर न रखना...।"

दासन के आगे दरवाजा 'फटफट' आवाज करता बंद हो गया।

वह अहाते में उतरा। पल-भर में वर्षा में वह नहा गया। ठंडी हवा में वह थरथर कांपने लगा...

कीचड़ और पानी वाली मेंड़ से वह चलने लगा। एक बार फिर दासन को दुत्कारकर बाहर निकाला जा रहा है। पहली बार पिता के दरवाजा खोलने पर बाहर गो[illegible] फौज दीख पड़ी। और आज प्रलय।

दासन अधिक दूर तक जा नहीं सका। पीछे बंद पड़ा चंद्रिका का मकान। सामने ओर-छोर के बिना फैला पड़ा पानी। उसका होश गायब हो रहा है, ऐसा उसे लगा।

'विज्ञानपोषिणी' वाचनालय मय्यषी के बुद्धिजीवियों का ठिकाना था। वहीं बैठकर कुञ्ञनन्तन मास्टरजी ने नई पीढ़ी में क्रांति का बोध जगाया था। चर्चाएं और गरम-गरम बहसें वहां हुआ करती थीं। मय्यषी के इतिहास में परिवर्तन लाने में 'विज्ञानपोषिणी' वाचनालय का भी हाथ था।

दासन के बचपन में विश्व-साहित्य का मार्ग दिखाने वाला था वह वाचनालय। फ्रांस की क्रांति और इतिहास के बारे में प्राथमिक ज्ञान उसे वहीं से मिला था। रूसो की 'क्रोन्त्रा सोस्याल' नामक किताब हाथ लगने पर बालक दासन घर की ओर बेतहाशा भागा। कितनी ही रातों में चिराग के धूमिल प्रकाश में शब्दकोश पास रखे बैठे दासन ने वह किताब पढ़ डाली। बेल्जाक के उपन्यासों की परंपरा से फ्रांस के समाज के रूप और परिणाम दासन ने समझ लिया। आन्द्रे षीद की रचनाओं ने इंसान की तकदीर के गर्भगृह का रास्ता दासन को दिखा दिया...।

मय्यषी की ही नहीं, दासन की तकदीर भी संजोने में 'विज्ञानपोषिणी' वाचनालय का हाथ था।

बहुत अरसे के बाद दासन फिर एक बार वाचनालय में जा पहुंचा–हाथ में

एक झोला लिए। लंबी मेज के दोनों ओर पड़ी बेंचों पर बैठे नौजवान पढ़ते बैठे थे।

"जनार्दनन नहीं है क्या ?"

दासन को देखते ही जयरामन उठ खड़ा हुआ। वह वाचनालय का सहायक सचिव है और जनार्दनन अध्यक्ष।

जयरामन और अन्य नौजवानों ने बड़े दुःख से दासन की ओर देखा। दासन मैली-कुचैली पोशाक में था। सिर के बालों से भी बड़ी दाढ़ी चेहरे पर थी। दिशाबोध रहित दृष्टि। आंखों में चिंताओं की अराजकता प्रकट हो रही थी।

"जनार्दनन अभी आएंगे। बैठिए।"

जयरामन ने कुर्सी बढ़ा दी। सचिव के बैठने की कुर्सी।

नौजवानों में से बहुतों को दासन से बातें करने की इच्छा थी। उनमें से कुछ लबूर्दने कालेज में और कुछ कोम्प्लमान्तेर में पढ़ने वाले विद्यार्थी थे। दासन की जीवनी उन्हें मालूम है। सोने का ठौर-ठिकाने खोजने वाला और मैले-कुचैले कपड़ों वाला होगा वह। फिर भी उनकी दृष्टि में वह महान था। पहाड़ जैसा ऊंचा था।

उन लोगों ने न जाने क्या-क्या पूछा। दासन ने न जाने क्या-क्या जवाब दिया। थोड़ी देर बाद जनार्दनन आ गया। दासन को देखकर वह फूला नहीं समाया। उन्हें आपस में मिले बहुत दिन हो चुके थे।

"जनार्दनन, मुझे लेटने के लिए कोई जगह नहीं।"

"मुझे सब पता चल गया।"

"वाचनालय में लेटने में तुम्हें कोई एतराज है ?"

"एतराज ! यह तुम्हारा अपना वाचनालय है दासन।"

दासन के सवाल ने जनार्दनन को दुःखी कर दिया।

"अधिक जगह की मुझे जरूरत नहीं। रात में कमर सीधी करने के लिए एक बेंच चाहिए। इतना ही काफी है।"

यह सुनकर जनार्दनन सह नहीं सका। वह दासन का झोला लेकर वाचनालय के ऊपर गया। नीचे था वाचनालय। ऊपर कैरम्स, शतरंज, ताश आदि खेले जाते थे।

"दासन, तुम जब चाहो यहां आ-जा सकते हो। यह तुम्हारा अपना घर है, यही समझ लो।"

जनार्दनन ने चाबी के गुच्छे से एक चाबी निकालकर दासन की ओर बढ़ाई।

"शुक्रिया, जनार्दनन !"

दासन के बीड़ी के निशान पड़े दांत मुस्कराए।

वैसे उस दिन से 'विज्ञानपोषिणी' वाचनालय हो गया दासन का बसेरा।

चालीस

काली घटाएं मय्यषी नदी को छोड़कर वापस चली गईं। सूरज की नई रोशनी में गिरजाघर के ऊपर वाला क्रूस चमचमा उठा। खेतों और सड़कों से पानी उतर गया। शांत नदी के ऊपर से चिड़ियां फिर से उड़कर मय्यषी आ पहुंचीं।

प्रलय का अंत हुआ। बरसात का मौसम बीत गया।

"अब हम काम शुरू करें।"

कोरन मिस्तरी भरतन के सामने अदब से खड़ा रहा।

"मुखौटे लगाने वाले मेले के पहले काम पूरा हो जाना है। तुम कर पाओगे मिस्तरी ?"

"उसका जिम्मा मैं लेता हूं। लेकिन बाहर से मजदूर लाने पड़ेंगे।"

"ले आओ। उसमें हिचकने की कोई जरूरत नहीं, मिस्तरी ! मेले के पहले मेरा मकान बनकर तैयार हो जाना है। मुझे इतना ही चाहिए।"

"मैं जिम्मा लेता हूं।"

कोरन मिस्तरी ने वचन दे दिया।

भरतन ने अलमारी में रखा नक्शा निकालकर मिस्तरी को दे दिया। हाथ जोड़ते हुए मिस्तरी वापस चला गया।

घर का काम झट से शुरू हो गया। पूरब से एक लारी में बहुत सारे मजदूर आए। सब जगह धूल और मिट्टी। उसके बीच अबूट्टी मुसलमान के गिराए गए मकान की जगह भरतन का बंगला चमकने लगा...

कुर्सी पर बैठा भरतन घर की प्रगति देखता रहता। गोद में सिगरेट का पैकेट। उसके पास ही कीमती साड़ी पहने लीला दूसरी कुर्सी पर बैठी रहती।

"तू चलेगी नहीं ?"

बंगला बनने का काम देखने जाते समय उन्होंने चंद्रिका से पूछा।

"नहीं।"

उसने सिर हिलाया।

"तेरा मकान है।" भरतन ने कहा : "तेरे लिए ही तो बनवा रहा हूं। तुझे अपना बंगला नहीं देखना है क्या ?"

"मुझे बंगले की क्या जरूरत है, पिताजी ?"

उसने साड़ी के छोर से आंसू पोंछ लिए। उसे किसी में रुचि नहीं है। कहीं भी नहीं जाती। विधवा जैसी हो गई है उसकी हालत।

प्रलय वाले दिन दासन चला गया था। फिर उसने दासन को नहीं देखा। कहीं भी अकेले जाने की इजाजत नहीं दी उसे भरतन ने। उसकी इजाजत मिलते ही वह दासन के पास भागकर जा पहुंचेगी, यह उसे पता है।

दासन अब कभी भी उसके घर के फाटक के अंदर पैर नहीं रखेगा। भरतन को यह पता है। उसमें भरतन और लीला को दुःख था। आज या कल तो शुरू नहीं हुआ है दासन से उनका वास्ता। कुञ्जनन्तन के साथ पहली बार जब दासन आया था। उसकी याद अभी भी लीला को है। उसकी मूंछें निकली नहीं थीं। मय्यषी के लोगों का स्नेह उन दिनों उसी पर था।

आज उसकी जरूरत किसी को नहीं है। वह नाचीज हो गया।

"वह सब उसकी अपनी करनी है। उसका साथ हमारी तकदीर में बदा नहीं है।"

कभी-कभी उनकी आंखें भर आतीं।

उस दिन जेल से बाहर निकलने पर दासन सीधे अपने घर गया होता, कणारन दादा द्वारा दी गई कोई नौकरी स्वीकार कर ली होती...भरतन को ऐसी इच्छा हुई। तब तो दासन की तकदीर ही बदल जाती...

मुखौटे वाले मेले के पहले ही मकान बनकर तैयार हो गया। मकान के चारों ओर बनाई गई नारियल के पत्तों की ओट जब हटाई गई तो लेस्ली साहब के बंगले को भी मात करने वाला भरतन का बंगला मिट्टी से फूट निकले किसी अचरज की तरह प्रकट हो गया। समुद्र के उस पार वाले देशों में भरतन द्वारा देखे गए मनोहर महलों की कमानें और सज्जाएं भी उसमें थीं। देखने वाले सभी लोगों ने दांतों तले उंगली दबा ली।

"तेरा बंगला है चंद्री..."

बरामदे में चंद्रिका के कंधे पर हाथ रखे खड़े भरतन ने उसे अपना नया बंगला दिखा दिया।

"कितनी भाग्यशालिनी है तू, मेरी बेटी..."

उस बंगले के नीचे अबूट्टी मुसलमान का अधबना घर नहीं है क्या ? उसके अंदर उसके हाथों से टूटकर गिरी हुई चूड़ियां, उसके सिर से गिरी हुई 'हेयर पिनें' नहीं हैं क्या ? – उस याद में एक बार फिर उसकी आंखें भर आईं।

पूरी रात भरतन सो नहीं पाया। वह सोच-विचार में डूबा पड़ा रहा। बीच-बीच में उठकर सिगरेट पीता रहा। आधी रात बीत जाने पर उसकी पलकें सूज गईं।

पौ फटते समय उसकी आंखें झपक गईं। तुरंत वह चौंककर जाग उठा। आंखें

खुलीं तो देखा कि बगल में पत्नी जगी हुई लेटी है। ऊपर टंगे स्फटिक दीप को देखते हुए वे पड़ी हैं। बाहर आसमान धुंधला होता जा रहा था।

"लीला, तुम जाग गईं ?"

"हां।"

वह करवट बदलकर लेट गई। कहीं एक मुर्गी ने बांग दी।

भरतन की तरह वे भी सोई नहीं थीं। चिंताओं ने उनकी नींद पर रोक लगा दी। आंखें बंद होते ही चंद्रिका का चेहरा मन में उभर आता। दोनों गालों पर आंसू बहाती खड़ी चंद्रिका। फिर उन्हें नींद आती ही नहीं।

"सोती क्यों नहीं ?"

भरतन ने पूछा। उसे पता है कि वे सोती क्यों नहीं। फिर भी पूछ रहा था।

"चंद्री मानेगी नहीं। मुझे पक्का भरोसा है।"

"न मानने पर मैं उसकी सहमति के बिना ही कर डालूंगा। अब उसे इस तरह छोड़ना ठीक नहीं।"

"अपनी बिटिया के आंसू देखते-देखते मैं ऊब गई।"

"वह थोड़ा और रो ले। फिर कभी रोएगी ही नहीं। मुझे यकीन है, लीला !"

भरतन ने पत्नी को तसल्ली देने की कोशिश की।

चंद्रिका के आंसू उसे भी शिथिल कर देते हैं। फिर भी वह एक निश्चय पर पहुंच चुका है। आंसू बह सकते हैं। ये आंसू कुछ दिन तक ही रहेंगे। भरतन को विश्वास है। फिर किसी को भी रोना नहीं पड़ेगा। उसके घर में उठने वाला तूफान सदा-सर्वदा के लिए शांत हो जाएगा।

मां-बाप के जगे रहने की बात चंद्रिका को मालूम नहीं थी। वह अपने नए बंगले के मनोहर कमरे में काली कीमती सुगंधित लकड़ी की बनी चारपाई पर पड़ी सो रही थी। दुःख के मारे वह बैठी-बैठी ऊंघ रही थी। उसे कुछ भी पता नहीं चला। सवेरे उसे देखने के लिए तलश्शेरी से एक नवयुवक आ रहा है या मां-बाप उसे हमेशा के लिए दासन से अलग करने का षड्यंत्र कर रहे हैं, यह सब उसे पता नहीं था। गालों पर आंसुओं के निशान लिए वह शांति से सो रही थी।

भरतन को नए घर में रहना शुरू किए एक महीना हो गया था। इस बीच एक बार भी चंद्रिका कहीं बाहर नहीं निकली। बंगले में ऊपर वाले अपने कमरे में बेल-बूटे लगी गद्दीदार कुर्सी पर मूर्तिवत् बैठी दिन काटती रही।

उसकी मनोदशा ने लीला को डरा दिया।

"बिटिया, तुम जरा नहा क्यों नहीं लेती ?"

मजबूर न किया जाए तो वह नहाती ही नहीं। वे ही उसे स्नानघर में ले गईं। जांघों तक बढ़े लंबे बाल तेल न लगाने से सनई जैसे हो गए थे। उन्होंने बाल खोलकर बिखरेते हुए नारियल का तेल लगा दिया।

"बिटिया, तुम मुझे इस तरह परेशान क्यों कर रही हो ?"

चंद्रिका स्नानघर में खड़ी संगमरमर बिछे फर्श पर देखती रही।

पानी भरकर रखा गया था। लीला ने साबुन और शैम्पू लाकर दे दिया।

"नहाओ, बिटिया।"

"मैं नहीं नहाती।"

"तुमसे मैं तंग आ गई, चंद्री !"

उसे नहाना शुरू करने में बहुत देर लगी। उन्होंने बाहर आकर दरवाजा बंद कर दिया। कपड़े बदलने के लिए साड़ी, पेटीकोट वगैरह लाकर दे दिया।

थोड़ी देर बाद खाना परोसने पर वे ऊपर गईं। चंद्रिका रोज की तरह कुर्सी पर बैठी थी। शरीर न पोंछने से काले फूलों वाली साड़ी और सफेद ब्लाउज बारिश में भीगने जैसे गीले चिपके पड़े थे। बालों से तब भी पानी टपक रहा था।

"तुमसे मैं परेशान हो गई।"

लीला रुआंसी हो गई। ताने देते हुए उन्होंने तौलिया लाकर सिर पोंछ दिया। बाल काढ़कर माथे पर टिकुली लगा दी। लेकिन आंख पर लगाया गया काजल सारा का सारा आंसुओं में धुलकर नीचे बह गया।

ऐसी हो गई चंद्रिका की जिंदगी।

दिन बीतते-बीतते लीला की बेबसी बढ़ती गई। भरतन अपने पर काबू रखता। फिर भी कभी-कभी काबू से बाहर हो जाता।

"बैठे-बैठे आंसू बहा रही है, उसका बाप मर गया है क्या?"

उसका चेहरा खून की तरह लाल हो जाता। फूले गाल थरथराने लगते।

"यह पता होता तो मैं समुद्र पर ही दिन काट लेता। बुढ़ापे में चैन से कहीं रहने के विचार से यहां आया हूं, तेरे आंसू देखने के लिए नहीं।"

उसने दोनों हाथ मसल लिए।

नींद न आने से रात को पोर्टिको में बैठे-बैठे भरतन द्वारा पी जाने वाली सिगरेटों का कोई हिसाब नहीं। सिगरेट के खाली डब्बों का ढेर लगता जा रहा था।

दूसरे दिन सवेरे तलश्शेरी वाले आए। उनकी बड़ी कार धूल उड़ाती हुई भरतन के बंगले के सामने आकर खड़ी हो गई।

भरतन को तसल्ली हुई।

"पूरी बस्ती में बात फैल गई थी न ? तलश्शेरी वालों के कानों में कहीं भनक पड़ जाए तो—"

भरतन ने सवेरे अपने आप से कहा था। दासन और चंद्रिका की कहानी मय्यषी के सारे लोग जानते थे। प्रलय वाले दिन दासन को भरतन के घर से निकाले जाने की बात भी बस्ती में फैल चुकी थी।

तलश्शेरी वालों के आ पहुंचने पर उसे कोई मामूली तसल्ली नहीं हुई थी।

लीला ने सवेरे ही चंद्रिका को नहलाया-धुलाया। नई साड़ी-ब्लाउज पहनाया। उन्होंने ही उसके माथे पर काली टिकुली लगा दी।

"सुधाकरन को तुम जानती नहीं, बिटिया ? डाक्टर लक्ष्मणन के बेटे सुधाकरन को ?"

उसने निषेधात्मक ढंग से सिर हिलाया।

"तुम्हारे कालेज में पढ़ा था। अब मद्रास में है। तुम नहीं जानती ?"

वह किसी और चिंता में डूबी रही। उसने मां की बात सुनी ही नहीं। उन्होंने उसकी आंखों में काजल लगा दिया। उंगलियों में बाकी बचे काजल से उसकी भौंहें सजा दीं। शीशे में उसका प्रतिबिंब देखकर उनका मन हरा हो गया। उस समय उनके ओठों पर एक ही प्रार्थना थी—वह रोए नहीं। रोने से बहे काजल के साथ आंसुओं के निशान पड़ा चेहरा लिए वह सुधाकरन का स्वागत न करे। बस इतना ही।

सीढ़ियां चढ़ते आने वाले जूतों की आवाज हुई। लीला का दिल धड़कने लगा। उन्होंने अचानक उसके सामने घुटने टेककर उसके हाथ जोड़कर पकड़ लिए, "बिटिया, तुम मुझे दुःखी मत करना।"

कुछ भी समझे बिना चंद्रिका भौंचक्की-सी रह गई।

साड़ी के छोर से आंखें पोंछकर लीला परदा हटाकर बाहर चली गईं। तब तक जूतों की आवाज देहरी तक आ पहुंची थी।

"मे आई कम इन ?"

जवाब का इंतजार किए बिना ही वह अंदर आ पहुंचा। गोद में गिरी पड़ी साड़ी उठाकर छाती ढंकते हुए वह उसे अचरज से देखने लगी।

"चंद्री, तुम्हें मेरी याद है ? कालेज के एस. एफ. के नेता सुधन की ?"

चंद्रिका ने उसे पहचान लिया। उसका भाषण देना, नारे लगाना, जुलूस निकालना, वगैरह उसने देखा तो था ही।

"डरो मत। राजनीति मैंने छोड़ दी है। अब मद्रास में रबड़ का व्यापार करता हूं।"

उसने एक कुर्सी खींच ली। पैंट की तह को पकड़े हुए उसके सामने बैठ गया। फिर उसके चेहरे पर देखते हुए वह जरा मुस्कराया।

"यू हैव ग्रोन प्रेटियर।"

सुधन दुबारा हंस दिया। उसके चेहरे से 'आफ्टर शेव लोशन' की सुगंध निकल रही थी।

"विद्यार्थी नेता से रबर के व्यापारी बनने की 'मेटामोर्फोसिस' कैसी रही ?"

वह हंस नहीं सकी। दुःख की तीक्ष्णता में होश खोए हुए है चंद्रिका ?

"रबर का व्यापार ही नहीं, चलचित्र-निर्माण भी है। तुम्हें सिनेमा पसंद है

चंद्रिका ? मैं तुम्हें अपने सिनेमा में नायिका बना दूं ?"

उसने अपनी कुर्सी आगे सरकाकर और भी पास कर ली। 'आफ्टर शेव लोशन' की सुगंध एक जाल जैसी उसके ऊपर छा गई।

"तुम कुछ बोलती क्यों नहीं, चंद्रिका ? मुझसे डर है क्या ?"

सुधन बोलता ही रहा। चंद्रिका ने उसकी आवाज सुनी ही नहीं। वह कह क्या रहा है, यह उसकी समझ में नहीं आया। उसका मन कहीं और था। उसकी चिंता किसी और के बारे में थी।

दस मिनट तक स्वयं बोलते रहने के बाद सुधाकरन चला गया।

सीढ़ियों पर उसके पैरों की आवाज खत्म होने के बाद वह अपनी नींद से जागी। उसकी समझ में सब कुछ आ गया।

सुधाकरन की कार धूल उड़ाती हुई वहां से चली गई।

कुछ देर तक मां-बाप उसके कमरे में नहीं आए। कार में चढ़ते समय सुधाकरन खिलखिलाकर हंस रहा था। उसकी खुशी ने उनको तसल्ली दी। फिर भी चंद्रिका के सामने जाने की हिम्मत की उनमें कमी थी।

अंत में लीला जान-बूझकर चंद्रिका के कमरे में गई।

"अच्छा नवयुवक है न, बिटिया ?"

कुर्सी पर मूर्तिवत बैठी चंद्रिका ने मानो वह सुना ही नहीं।

"तुम्हारी भलाई के लिए ही हम दोनों ये सब कर रहे हैं बिटिया !"

कुर्सी के बाजू पर बैठी लीला ने चंद्रिका के बालों पर हाथ फेरा। दरवाजे की ओट में छिपा खड़ा भरतन भी अंदर घुस आया :

"तुम्हें मुझसे स्नेह हो तो इसके लिए राजी हो जाओ।"

"मर जाने पर भी राजी नहीं होऊंगी।"

उसने अचानक अपनी अंगुलियों से चेहरा ढक लिया। लीला चौंक पड़ी। उन्होंने भयावने स्वप्नों में जो स्वर और शब्द सुने थे, ठीक वे ही शब्द थे।

"दूसरे के मन की शांति भंग करने के लिए ही पैदा हुई संतान हो तुम। चुड़ैल कहीं की।"

भरतन आगे बढ़ा। उसका चेहरा और भी लाल हो गया। शरीर थरथराने लगा।

"जिंदगी भर समुद्र में मुसीबतें झेलता रहा। बुढ़ापे में चैन की वंशी बजाने की सोची। वह भी तू करने नहीं देगी, उल्लू की पट्ठी !"

दरवाजा जोर से बंद करके भरतन नीचे उतर गया। लीला स्तब्ध रह गई। जिंदगी में कभी भी इतना गुस्सा करते उसे देखा ही नहीं था लीला ने। इस तरह बेढंगे तौर पर उसे बातें करते उन्होंने कभी सुना ही नहीं था।

उस पूरे दिन और पूरी रात भरतन पोर्टिको में सिगरेट पीता चहलकदमी करता

रहा। सिगरेट पीते-पीते उसके ओंठ झुलस गए।

"चंद्री के राजी न होने पर भी मैं यह करके ही रहूंगा। नहीं तो मेरा नाम भरतन नहीं।"

जगी पड़ी पत्नी के पास मुंह अंधेरे जाकर लेटते हुए उसने सूचित किया। मर्द की जिद्द उस पर अचानक सवार हो गई। आगे बढ़ाया पैर अब वह पीछे हटा नहीं सकता।

भरतन शादी की तैयारियां करने लगा।

लगन धरने के बाद वाला दिन भरतन पोर्टिको में बैठा सिगरेट पी रहा था। एक रस्म पूरी हो जाने की तसल्ली और आगे आने वाले दिनों का संघर्ष उसके चेहरे पर अदल-बदलकर झलक रहे थे।

अहाते में आहट सुनने पर उसने सिर उठाकर देखा—दासन।

मेज के ऊपर पसारे पैर नीचे रखकर वह कुर्सी पर सीधा बैठ गया। दासन आ सकता है, ऐसा उसने अंदाज लगाया था। चंद्रिका को उससे काटकर अलग करने के इस मौके पर दासन चुपचाप नहीं बैठेगा, ऐसा भी उसने अंदाज लगाया था।

"आओ बैठो, दासन !"

दासन ने मानो यह सुना ही नहीं। वह अहाते में ही खड़ा रहा। काला पड़ा चेहरा पसीने से तर हो गया था। कमीज के आगे वाले बटन गलत काजों में लगे थे। वह हांफ रहा था।

"गुस्सा आने पर उस दिन मैं न जाने क्या-क्या बक गया। तुम वह सब भूल जाओ..."

भरतन ने आवाज धीमी करके कहा। ऊपर बैठी चंद्रिका कहीं सुन न ले, यही उसे डर था। उनको आपस में मिले महीनों बीत गए थे। यह उसे पता है। इस आखिरी दौर पर उन्हें आपस में मिलने नहीं देना है।

भरतन अचानक अंदर गया। जल्दी-जल्दी सीढ़ियां चढ़कर चंद्रिका का कमरा बाहर से बंद करने के बाद वह तसल्ली से वापस आया।

"मैंने जो सुना, वह सच है ?"

"क्या, दासन ?"

"चंद्रिका की शादी ?"

"हां। तुम्हें बताना चाहता था। लेकिन उसके लिए तुम मिलो तब न ?"

भरतन अचानक खामोश हो गया। दासन के चेहरे का हाव-भाव देखकर वह डर गया...

"चंद्री राजी हो गई ?"

"हां।"

भरतन ने दासन के चेहरे पर नहीं देखा।

"तुम झूठ बोल रहे हो भरतन दादा ! मैं उससे जरा मिलना चाहता हूं।"

"तुम अब आपस में मत मिलो। तुम दोनों की भलाई के लिए ही मैं यह कह रहा हूं।"

"आप जानते नहीं, भरतन दादा, चंद्री मेरी कौन है ?"

"जानता हूं। लेकिन मैं क्या देखकर उसे तुम्हें सौंप दूं। रहने के लिए तुम्हारे पास कोई घर है ? एक बार खाने का पैसा तक तुम्हारे पास है क्या ?"

"भरतन दादा..."

"दासन, तुम जाओ। हम लोगों के बात करने से कोई फायदा नहीं।"

भरतन फिर कुर्सी पर जाकर बैठ गया। वह अपने हाथों से मुंह ढंके झुका बैठा रहा। फिर उसने न तो कुछ कहा और न सिर ही उठाया।

"भरतन दादा, भगवान तुम्हें माफ नहीं करेगा..."

दासन का गला रुंध गया। किसी को खोजने जैसे उसने बंगले के ऊपर की ओर देखा...।

कुछ देर बाद दासन की दूर हटती चली जाने वाली पैरों की आहट भरतन ने सुनी। तभी उसने सिर उठाया। लीला पास खड़ी थी।

फागुन की कड़ी धूप में सूखे पड़े खेतों के बीच से होकर जाते हुए दासन को वे देखते रहे। चलते समय पियक्कड़ों जैसे वह लड़खड़ाकर चल रहा था।

इकतालीस

कमरे में हमेशा टर्पेण्टाइन की बू रहती। सुंघनी के नशे में आंखें आधी बंद किए लाल कंबल के नीचे दिन-भर कुरम्बी अम्मा पड़ी रहतीं। हल्के अंधेरे वाला, खामोशी से भरा कमरा ही उसकी दुनिया बन गया। छाती में दासन का दुःख और काल के प्रवाह में मर-मिटे कोट-पतलून और टोपी वाले वीर पुरुषों की यादगारें संजोए पड़ी रहती। वापस आने वाले गोरों के जहाज पर कान दिए कुरम्बी अम्मा दिन काट रही थीं।

चारपाई के नीचे रखा पीकदान भर जाने पर उसे उठाने के लिए आने वाली गिरिजा पूछती, "आपको कुछ चाहिए, दादी ?"

वे सिर हिलाकर बता देतीं 'नहीं चाहिए' ।

एक दिन आधी रात को चौंककर जाग पड़ीं। उन्होंने गिरिजा को बुलाया। टूटी नींद से हाथ में दीया लिए आई गिरिजा ने उन्हें चारपाई पर बैठे देखा।

"वे आ गए, बिटिया ?..."

"कौन, दादी ?"

"गोरे लोग।"

"कोई नहीं आया। आप सो जाइए।"

गिरिजा ने जम्हाई ली।

"वो जहाज की आवाज ही तो सुनाई पड़ रही है।"

"आपको यों ही लगता है दादी !"

कुरम्बी अम्मा ने कानों को खड़ा किया। वे तब भी सुन रही थीं—जहाज की सीटी।

गिरिजा बच्चों के पास जाकर लेट गई।

फिर वह एक रोजमर्रे की बात बन गई। कुरम्बी अम्मा रोज रात को जागकर चारपाई पर बैठकर गिरिजा को बुलातीं। कान खड़े किए बैठी रहतीं। उनसे गिरिजा रोज कहती, "जहाज अब नहीं आएगा दादी !"

"गोरे कभी भी नहीं आएंगे ?"

"नहीं।"

गोरों की अंतिम यात्रा के बाद बंदरगाह सूना पड़ा है। फिर कभी भी किसी जहाज पर वहां लंगर नहीं पड़ा। लेकिन कुरम्बी अम्मा को विश्वास है कि एक दिन अधिक बड़े जहाज पर अधिक फौज के साथ बड़े फ्रांसीसी साहब वापस आएंगे। उण्णिनायर, कुञ्ञाणन, कप्पोरल किट्टु वगैरह सब यही कह रहे हैं। गोरों से रहित मय्यषी देवों से रहित स्वर्गलोक के समान ही है न ?

गोरे लोग आगे कभी वापस आएंगे ही नहीं, और अब बंदरगाह पर किसी जहाज का लंगर पड़ेगा ही नहीं, ऐसा गिरिजा के कहने पर कुरम्बी अम्मा अचानक खामोश हो जातीं। किसी तीव्र दुःख की लहरों जैसी उनके अंदर से गहरी सांसें उठने लगतीं...

कौसू अम्मा कितने ही अरसे से चारपाई पर पड़ी हैं। कुरम्बी अम्मा के भी बीमार हो जाने पर गिरिजा को घर आना पड़ा। अच्चू का वहां रहने का मन नहीं था। इस घर में बिना बुलाए आ धमकने वाला था वह। वह जमाना बीत गया। अब वह एक नया आदमी है। अच्चू की आज की मंशा यही है कि वह अपने ही पैरों पर खड़ा रह सके।

गिरिजा के बच्चे खेलते-कूदते और शोर मचाते रहे। बहुत अरसे के बाद मुंशी दामू के घर में वैसी रौनक आई। वहां चहल-पहल हो गई। अच्चू के दफ्तर चले जाने और गिरिजा के रसोई में लग जाने पर मुंशीजी उसके छोटे बेटे को गोद में बैठाकर आरामकुर्सी पर लेट जाते। बच्चे के दोनों हाथों से तालियां बजवाते हुए गाते :

"अब आया अच्छा इतवार।
इतवार की टोकरी में धरा क्या है ?
बच्चे को देने को पूड़ियां हैं।
किसके साथ खाएंगे पूड़ियां वे ?
साथ खाने को चिड़िया की चोंच है।"

गाने के अंत में वह बच्चे को गुदगुदाता। उसके दूध के दांत दिखाने वाली हंसी में वह आनंदित हो अपने आपको भूल बैठता।

रोज शाम को मुंशीजी को दो घूंट ठर्रा पीना है। नहीं तो रात को नींद नहीं आएगी। उसके लिए रोज शाम को वे ठेके पर जाते। कभी-कभी अच्चू भी साथ रहता। वह पीता नहीं। सिर्फ मुंशीजी के साथ चलता, इतना ही।

दासन की बदनामी सारी बस्ती में फैले जाने और ठेके पर वह एक चर्चा का विषय बन जाने पर कुछ दिनों तक वे वहां गए ही नहीं।

"बस्ती में सिर उठाकर चलने लायक नहीं रहे। अब और बाकी बचा क्या था!"

दासन के बारे में मय्यषी के लोगों ने कल या आज तो बातें करनी शुरू नहीं की। जो भी हो, अभी तक उसके बारे में कोई बदनामी की बात तो कही नहीं गई थी। अब उन्होंने यह भी कहना शुरू कर दिया।

भरतन द्वारा दासन को आधी रात को घर से बाहर निकाला जाना बहुत दिनों तक ठेके पर एक चर्चा का विषय बन गया था। अब भी वह ठंडा नहीं पड़ा।

ठेके पर ही मुंशीजी ने चंद्रिका की शादी तय करने की बात सुनी, "चैत की चौदहवीं तारीख को है भरतन की बेटी की शादी।"

उण्णिनायर ने ही वह खबर दी थी।

"वह राजी हो गई ?"

"क्या देखकर राजी नहीं होती ? उसको कोई नौकरी-वौकरी नहीं, सो तो छोड़ो। पागलों जैसा घूमता-फिरता है न, आजकल ?"

उस समय मुंशीजी ठेके पर पहुंचे। अंदर रखा पैर पीछे खींच लिया। ऐसे लौट पड़े जैसे कुछ सुना ही न हो।

दासन के बारे में कोई कुछ भी कहे, मुंशीजी जवाब नहीं देते। चुप्पी साधे रहते। नहीं तो चल देते।

मुंशीजी ने ठेके पर जाना फिर से छोड़ दिया। रोज शाम को थोड़ा-सा ठर्रा घर में मंगवा लेता। वहीं बैठकर पीता।

बाहर निकलते समय उन रास्तों से वे चला नहीं करते जिन पर दासन से मिलने की गुंजाइश होती। देखने पर दूर से ही रास्ता बदलकर चले जाते।

एक दिन दासन की आवाज सड़क पर से सुनाई पड़ी। वह मां को बुला रहा था। बैठक में आरामकुर्सी पर पड़े मुंशीजी उठकर अंदर चले गए। गिरिजा कौसू अम्मा को थामे बैठक में ले आई। खून की कमी से उनका चेहरा पीला पड़ गया था। लेटे रहने से हाथ-पैरों पर सूजन आ गई थी। पीछे-पीछे लड़खड़ाती हुई कुरम्बी अम्मा भी आ पहुंचीं।

"मां की तबीयत अच्छी है, गिरिजा ?"

"पिछली अमावस्या को ज्यादा बिगड़ गई थी।"

कौसू अम्मा को दासन को देखने या उसकी आवाज सुनने जैसा लगा ही नहीं। गिरिजा अधिक देर तक उनको थामे खड़ी नहीं रह सकी। मां को अंदर ले जाकर उसने लिटा दिया।

कुरम्बी अम्मा चौखट पकड़े खड़ी खामोश हो दासन को देखती रहीं। आंख की रोशनी कम हो जाने पर भी दासन की बिगड़ी तस्वीर मानो कुरम्बी अम्मा देख रही थीं। उनकी बूढ़ी आंखें भर आईं। कोट-पतलून पहने और टोपी लगाए घोड़ागाड़ी से उतरने वाले जिस दासन का वह स्वप्न देखती थी, वही दासन है यह।...

"अंदर आओ भैया !"

अहाते में जाकर गिरिजा गिड़गिड़ाई। उसने नहीं माना। वह चल चुका था।

"दासन आएगा।"

बात जानने पर अच्चू ने कहा, "आज सड़क तक आया है न ? कल अंदर आएगा।"

लेकिन उसने गलत समझा। दासन नहीं आया।

बहुत दिनों तक लगातार लेटी-लेटी कुरम्बी अम्मा ऊब गईं।

"बिटिया, मुझे जरा थाम लो।"

गिरिजा के पीकदान उठाने के लिए आते समय वे चारपाई पर उठकर बैठ गई थीं।

गिरिजा ने उन्हें सहारा देकर बैठक में ले जाकर बिठा दिया, तकिये के नीचे से सुंघनी की डिबिया निकालकर दे दी। बहुत दिनों के बाद उस दिन फिर से कुरम्बी अम्मा ने बैठक में पैर पसारकर बैठे हुए सुंघनी सूंघी।

सड़क से जाने वाले मय्यषी के लोगों से कुरम्बी अम्मा ने राजी-खुशी नहीं पूछी। उनके लिए खामोश बैठने का समय था वह।

"कुरम्बी अम्मा !"

सड़क से जाने वाले कुञ्ञाणन ने पुकारा। पहले उधर से निकलते समय वह कुरम्बी अम्मा को देखा करता था। उनसे कुछ-न-कुछ पूछे या कहे बिना वह कभी भी उधर से नहीं गुजरा। आजकल वे दिखाई ही नहीं पड़ती थीं। कुञ्ञाणन के उस रास्ते से न आने के कारण नहीं, कुरम्बी अम्मा बैठक से गायब हो गई थीं।

"कुरम्बी अम्मा, आजकल तो दिखाई ही नहीं पड़तीं।"

कुञ्ञाणन का सवाल सुनकर वे जरा मुस्करा भर दीं।

"कुञ्चक्कन कहां है ? वह भी मुझे भूल बैठा ?"

यह सुनकर कुञ्ञाणन के चेहरे का भाव बदल गया। कुञ्चक्कन को मरे दो महीने बीत गए थे।

"वह चला गया, है न ?"

कुरम्बी अम्मा ने धीरे-धीरे याद किया। उन्होंने डिबिया से चुटकी भर सुंघनी लेकर सूंघ ली।

"लेस्ली साहब चले गए, चेक्कु मूप्पन चल बसे। सेक्रत्तेर चला गया। कुञ्चक्कन भी चला गया। सब के सब जा रहे हैं..."

कुरम्बी अम्मा कुञ्ञाणन को देखकर मुस्कराईं। कुञ्ञाणन हंस नहीं सका। बहादुर और मय्यषी के दूसरे लोग एक-एक करके काल-यवनिका के पीछे छिपते जा रहे हैं। कुञ्ञाणन के सिर के सारे बाल सफेद हो चुके थे। अन्य सभी जीवों

की तरह वह भी मौत के डर से मुक्त नहीं हुआ था।

कुञ्चक्कन के मरने के बाद उसकी यादगार की तरह कुञ्आणन चलता-फिरता रहा। उसके घर में कुञ्चक्कन की सीढ़ी और तेल का पीपा अनाथ पड़े हैं। दो पीढ़ियों तक उसके द्वारा जलाई गई बत्तियों ने ही मय्यषी के लोगों को रोशनी दी थी। कुञ्चक्कन का अंत एक पुराण का ही अंत था। कुञ्चक्कन के लंगड़ा लंगड़ाकर चलने में शूरवीर और सत्य तथा न्याय के रक्षक गुलिकन के अस्तित्व का साक्षात्कार मय्यषी के लोग किया करते थे। आगे आने वाली पीढ़ियों के बच्चों को गोद में बैठाकर दादियों के गुलिकन के गुणगान करते समय सबूत के रूप में दिखाने के लिए एक लंगड़ा कुञ्चक्कन अब नहीं रहा।

कुरम्बी अम्मा अधमुंदी आंखों से बैठक में ही बैठी रहीं। दोपहर की धूप कड़ी थी। शरीर चूर-चूर हो रहा था। फिर भी वे लेटने नहीं गईं।

उधर से जाने वाले कप्पोरल किट्टु ने भी सड़क पर ही खड़े-खड़े उनसे राजी-खुशी पूछी।

किट्टु के बाद वासूट्टी की मां आई। वे बैठक में आकर बेंच पर बैठ गईं। वे नई धोती पहने थीं। बढ़े हुए कान के छेदों के कोपलों के कनफूल गायब थे, उनकी जगह सोने के कनफूलों ने ले ली थी।

"कल्लू अम्मा, तुम डाकघर से आ रही हो ?"

गीले हाथ साड़ी में पोंछती हुई गिरिजा देहरी पर आकर खड़ी हो गई।

"कुछ-न-कुछ बचाकर रखना है न ? सयानी लड़कियां हैं ?"

हर महीने वे डाकघर जातीं। वासूट्टी के पैसा आने के दिन।

"कल्लू अम्मा, तुम भाग्यशालिनी हो।" साड़ी पकड़े लटके बेटे को हाथ से उठाते हुए गिरिजा ने कहा, "तुम्हारी मुसीबतें तो दूर हो गईं।"

"मैंने बहुत सारे कष्ट झेले हैं। मेरे और मेरे बच्चों के फाका करने का कोई हिसाब है !"

कल्लू अम्मा की मुसीबतों की कहानी का पता किसको नहीं ?

"एक बात याद आने पर मेरी छाती फटने लगती है। अच्छा समय आने पर मेरा मर्द सुख-भोग के लिए नहीं रहा।"

वासूट्टी फ्रांस में पैसा बटोरने में लगा है, ऐसा सुना जाता है। कल्लू अम्मा और उसके बच्चों की तकलीफों की वैसे इतिश्री हो गई। उनके अच्छे समय का श्रीगणेश हो गया। लेकिन उसके देखने के लिए बोझा ढोने वाला पोक्कनच्चन नहीं रहा।

"कुरम्बी अम्मा, तुम कुछ बोलती क्यों नहीं ?"

कुरम्बी अम्मा उनके सवाल को सुनकर चौंककर जाग उठीं और मुस्कराईं। गिरिजा चाय बनाने अंदर चली गई। पानदान से पान का एक टुकड़ा लेकर कल्लू

अम्मा ने उस पर चूना लगाया।

"कुरम्बी अम्मा, तुमने सुना नहीं, उस भरतन की बेटी की शादी अगली चौदहवीं तारीख को है।"

कुरम्बी अम्मा को सब पता था। भरतन ने आकर मुंशीजी को बताया था।

"यहां दासन के बारे में लोग तरह-तरह की बातें करते हैं। वह लड़की तो बिना खाए-पिए बैठी-बैठी रो रही है।"

कुरम्बी अम्मा कुछ भी कहे बिना आंखें मींचे दीवाल के सहारे बैठी रहीं। उनके चेहरे की मुस्कान धीरे-धीरे मिट गई।

गिरिजा द्वारा लाई गई चाय पीकर एक बार और पान लगाकर खाने के बाद कल्लू अम्मा जाने लगीं। नई धोती की सरसराहट और सोने के कनफूलों की चमचमाहट के साथ वासूट्टी की मां चली गईं।

"बिटिया, मैं जरा लेट जाऊं।"

गिरिजा ने उन्हें पकड़कर उठाया। फिर टर्पेण्टाइन की बू वाला अंधेरा कमरा। दोपहर की धूप की शिथिलता में कुरम्बी अम्मा की आंखें धीरे-धीरे मिचने लगीं।

बयालीस

समुद्र में बहुत दूर पर सफेद चट्टान चमक रही थी। नींद के मारे दासन का सिर चकरा रहा था। तीन दिन हो गए उसको पलक झपकाए। नींद को जलाकर भस्म कर देने वाली थी उसकी मनोवेदना। चंद्रिका के हाथ से निकल जाने के इस क्षण में सूरज के टुकड़े-टुकड़े होना और जमीन का फटना उसे देखने की इच्छा हुई।

चंद्री कभी राजी नहीं हुई होगी। दासन यह जानता है। पेटी भर सोना देने की बात कहने पर भी दासन को छोड़कर वह किसी के साथ जाएगी ही नहीं। उसके आंसू कभी सूखेंगे ही नहीं। दासन के पंख होते तो किसी गंधर्व की तरह वह उड़कर चंद्रिका को उठाकर मनुष्यों की आंखों की पहुंच के उस पार वाले किसी पहाड़ की चोटी पर ले नहीं जाता क्या ?

'आओ,' ऐसा कहते ही वह निकलकर आ जाती। इतने समय तक सिर्फ उसके लिए ही जिंदा रहने वाली वह आगे भी उसी के लिए जिंदगी बिताएगी। लेकिन वह उसे एक निगाह देख तक नहीं सका। भरतन ने चंद्रिका को कैद कर रखा था।

कुछ महीने तक उसके साथ गलबाहें डाले चलने वाली ! कितने ही समय उसे चाय बनाकर पिलाने वाली और उसके साथ हंसी-मजाक करने वाली लीला दीदी ! उनके लिए आज दासन कोई भी नहीं रहा।

अब कुछ भी किया नहीं जा सकता। याद करना। चंद्रिका की याद ताजा करना। किसी आदमी को छिपा लेने लायक उसके बाल। नारियल के फूल जैसी उसकी कमर। पैरों की पायलों की रुनझुन। 'दासन दादा' ऐसी उसकी पुकार।—सारा कुछ सिर्फ याद बनकर रह गए...।

सफेद चट्टान पर आंखें गड़ाए वह बैठा रहा। उत्ताल तरंगों में पलभर के लिए वह आंखों से ओझल हो जाती। फिर से साफ-साफ दीखने लगती। वहां पर कबूतरों के समान विहरने वाली मनुष्यात्माएं वह देख रहा था।

पास में पैरों की आहट और बातचीत। दासन चौंककर जाग पड़ा। भरतन दादा और पड़ोसी शंकु मास्टरजी पास खड़े हैं। दासन का मन खौल उठा। भरतन दादा किसलिए आए हैं ? इस अंतिम वेला में उनका मन बदल गया क्या ?

दासन उठ खड़ा हुआ।

"चंद्री कहां...?"

भरतन ने पूछा। उसका चेहरा किसी पागल का-सा था।

"कहां है...?"

भरतन ने दुबारा पूछा। कुछ भी समझे बिना दासन ने भरतन और शंकु मास्टरजी के चेहरे पर अदल-बदलकर देखा।

"तुम्हारे पास वह नहीं आई ?" मास्टरजी ने दासन को पकड़कर झकझोरा, "तुमने उस लड़की को कहां छिपाकर रखा है ?"

दासन ने कुछ भी नहीं सुना। उसके कान ठप से बंद हो गए थे। समुद्री हवा के झोंके में वह गिरा जा रहा था, ऐसा लगा।

"दासन, तुम कसम खाकर सच-सच बताओ, तुमने चंद्रिका को देखा नहीं क्या ?"

"नहीं।"

भरतन बेबस हो गया। उसकी कमीज पसीने में सराबोर हो गई। उसने दासन के चेहरे पर घूरकर देखा। हांफने की गति प्रतिपल बढ़ती जा रही थी।

"अब कहां जाकर खोजें ?" शंकु मास्टरजी ने अपने आपसे पूछा। चंद्रिका के आने का ठिकाना दासन है। उसके अलावा और कहां जा सकती है वह ?

अब जाएं तो जाएं कहां ?

भरतन के बंगले पर भीड़ जमा थी। बरामदे में और अहाते पर सब कहीं लोग। सबकी आंखें दासन पर आ टिकीं। फिर खामोशी ! अंदर से लीला का रोदन सुनाई पड़ रहा था। सारे मंदिरों में वे मनौती मना रही थीं।

"क्या हुआ उत्तमन ?"

कोई फाटक से अंदर आया।

"गिरजाघर वाले तालाब में भी डुबकी लगाकर देख लिया।"

"अब कौन-सा कुआं और तालाब बाकी बचा है डुबकी मारकर देखने को, हे मेरे भगवान —!"

"हस्सनार का कुआं भी देख लें।"

उत्तमन ने भीगी धोती का छोर पकड़कर निचोड़ा। लोग आ-जा रहे थे। दोपहरी ढलने लगी। दासन अहाते में ज्यों का त्यों खड़ा था। कितने ही घंटे बीत गए उसे ऐसे खड़े हुए।

"पहने कपड़ों के साथ वह निकल गई। सोना या और कुछ भी नहीं लिया। इसका मतलब क्या है ?"

कोई कह रहा था।

शाम होते-होते खोज में निकले लोग एक-एक करके सिर झुकाए लौटने लगे।

अहाते में परछाइयां घनी होती गईं। भरतन का बंगला ऐसा लग रहा था मानो वहां कोई मौत हो गई हो...।

बंद पड़े कानों में सफेद चट्टान से आने वाली हवा में चंद्रिका की आवाज, पायल की रुनझुन—गूंज रही थी।

"बड़े हो जाने पर आप मुझसे शादी करेंगे, दासन दादा ?"

दासन के पैर हिले। पौधे की बढ़ी डालियों की तरह दोनों तरफ आदमी खड़े थे। सीपियों से भरी सड़क से वह आगे बढ़ा। पीछे भरतन का बंगला अँधेरे में ओझल हो गया।

दासन को पता चल गया कि चंद्रिका कहां है ! खोजने से कोई फायदा नहीं। कोई भी उसे नहीं खोज सकता। दासन को ही ज्ञात और उसकी निगाह में ही पड़ सकने वाली एक दुनिया में है वह। आत्माओं के तितली जैसे उड़कर विहरने वाली सफेद चट्टान पर...

चंद्री, तुम कहां हो, यह मैं जानता हूं।...

मय्यषी के तमाम लोगों ने चंद्रिका के लिए प्रार्थना की।

लेकिन फिर किसी ने चंद्रिका को नहीं देखा।

कुहरे से भरे प्रभात में पश्चिम से आने वाली मंद-मंद हवा में केवल दासन ही उसकी पायलों की रुनझुन सुना करता था...।

समय बीतता गया। चंद्रिका के लिए बनाए गए बंगले में उसके बिना दो अनाथ प्रेतों की तरह भरतन और लीला जी रहे थे। अंत में लीला ने एक दिन हमेशा के लिए आंखें मूंद लीं।

अपने बड़े बंगले में मोक्ष न पाने वाले किसी दुर्देवता के समान भरतन अब भी जीता जा रहा है।

तैंतालीस

कप्पोरल किट्टु पेंशन लेने के लिए बीच-बीच में पांडुचेरी जाया करता था। एक दिन पांडुचेरी से वापस आते समय वह मय्यषी के लोगों में घबराहट पैदा करने वाली एक खबर लाया। मय्यषी में 'प्रोहिबिशन' आने वाला है।

"उसका मतलब क्या है, किट्टु ?"

उण्णिनायर ने पूछा।

"इसका मतलब यह कि मय्यषी में ताड़ी का एक भी ठेका नहीं रहेगा। यहां आइंदा किसी को पीने नहीं दिया जाएगा।"

किट्टु पैसा देकर अपनी टोपी सिर पर लगाकर चला गया। कोट-पतलून और टोपी पहनने वाला आखिरी वर्णसंकरेतर था वह। मेयर चेक्कु मूप्पन, सरषाम आम रेत्रेद कुञ्जिकण्णेन, सेक्रत्तेर करुणन वगैरह तो न जाने कब के चल बसे थे।

"उसका कहना सही है क्या ?"

खड़िया से हिसाब लगाई मेज के सामने उण्णिनायर सुन्न-सा बैठा रहा।

"सही हुए बिना रह नहीं सकता।"

कुञ्आणन भी काठ मारा-सा बैठा था।

दूसरे दिन मय्यषी के एम. एल. ए. शंकरन मालिक ने खबर को सही बताया। तब बिजली गिरने जैसे उण्णिनायर बैठा रह गया। वह हिल भी न सका। कुञ्आणन का चेहरा तो कागज की तरह पीला पड़ गया।

"नाश हो गया। सत्यानाश हो गया।"

उण्णिनायर ने माथा ठोंक लिया।

जब से याद पड़ती है, कुञ्आणन पीता आ रहा है। चाहे बरसात हो या तूफान आए, शाम होते-होते वह ठेके पर आ पहुंचता। सिर्फ वही नहीं, उसके जैसे दूसरे कितने ही मय्यषी के लोग।

"महापापियो, तुम लोगों ने गोरों को तो भगा ही दिया, अब गला सींचना भी क्या खतम किए दे रहे हो ?"

ठेके के सामने से जाने वाले एक खद्दरधारी के ऊपर कुञ्आणन ने शाप के शब्द उछाले, "खुदा तुम्हें माफी नहीं देगा, देख लेना..."

"जमाना बदल रहा है।" एक कोने में बैठे धीरे-धीरे पीने वाले केलु मास्टरजी ने अपने आपसे कहा।

मद्यनिरोध की खबर दावाग्नि जैसी फैल गई। सुनने वाले सबके सब भौंचक्के रह गए। शराबरहित मय्यषी। न पीने वाले मय्यषी के लोग। वह एक विरोधाभास था न ? मय्यषी में मद्य-निरोध का आना कोई मामूली बात नहीं है। उसमें एक ऐतिहासिक प्राधान्य भी था। मय्यषी की विशेषताओं में से एक थी, वहां पर बहने वाली शराब। शराब की कहानी क्लेमां साहब की पीढ़ी से काफी पहले से ही पहले शुरू होती है। सर्प का रूप धारण करने वाले वैश्रवणन चेट्टियार, सेठ लोग, जादू-टोना करने वाले कोंकिणी लोग, मय्यषी के गिरिजाघर के मेले में आने वाले तीर्थयात्री ...ये सबके सब विविध उद्देश्यों से मय्यषी में आया करते थे। लेकिन उन सबका आम उद्देश्य होता था—मय्यषी में बहने वाली शराब।

वैसे भूतकाल की जंजीरें एक-एक करके मय्यषी को तोड़-तोड़कर फेंक रही है।

मद्यनिरोध लागू होने वाला दिन ग्रहण के दिन के समान म्लान था। सड़कों पर रोज की तरह लोगों की चहल-पहल नहीं हुई। नटयिन्मेल टाकीज में दूसरा 'शो' नहीं चला। दुकानें समय से पहले ही बंद कर दी गई थीं। शाम बीतते-बीतते मय्यषी खामोश हो गई।

अपने बंद पड़े ठेके के सामने उण्णिनायर बहुत देर तक खड़ा रहा। उस दिन उसको चलने के लिए छड़ी का सहारा लेना पड़ा...।

फिर वह हर दिन जहाज के आने का इंतजार करता रहा। कुरम्बी अम्मा की तरह वह भी जहाज की सीटी सुनने के लिए कान लगाए रहा।

"उण्णिनायर, तुम्हारा जहाज आ गया ?"

बस्ती वाले पूछते। अपने मन के विकारों को दबाए आत्मविश्वास के साथ वह कहता, "जहाज आएगा और मैं चला भी जाऊंगा।"

पहले तो दया दिखाते हुए मय्यषी के लोग वैसा पूछा करते थे। फिर वे खिल्ली उड़ाने लगे, "उण्णिनायर, जहाज आ गया है।"

स्कूल जाने वाले बच्चे चिढ़ाते। तब बूढ़ा उण्णिनायर बच्चों पर छड़ी तानता। बच्चे भाग जाते।

फिर भी जहाज आएगा, ऐसा ही विश्वास था उसका। बड़े फ्रांसीसी साहब जिस मिट्टी पर जी रहे हैं, उसी मिट्टी में मिल जाने की उसकी आखिरी तमन्ना थी।

जहाज की सीटी सुनने के लिए कान खड़े रखने वाले और भी लोग थे। कुञ्ञिचिरुता, नाणी, देवी, कुञ्ञाणन, रामन बढ़ई...जैसे कितने ही लोग। एक दिन वे अपनी पितृभूमि में बुला लिए जाएंगे, ऐसा उनका विश्वास था। कुरम्बी अम्मा जैसे कुछ लोग मोक्ष के लिए गोरों के लौट आने का इंतजार कर रहे थे। ईसामसीह

के लौट आने का इंतजार करने वाले ईसाइयों के जैसे थे वे लोग।

फ्रांस से छुट्टी पर आए वासूट्टी को मय्यषी के लोगों में से अधिकतर लोग पहचान ही नहीं पाए। किसी जमाने में पुलिस वालों और गुंडों की मारपीट सहने और अधभूखा रहने वाला वासूट्टी नहीं था वह। वह मोटा-ताजा और लाल हो गया था। कलाई पर सोने की जंजीर वाली घड़ी। सफेद रेशमी पतलून और बुश्शर्ट। हाथ में हमेशा 'नेवीकट' सिगरेट का डब्बा।

जिस दिन आया, उसी दिन वासूट्टी 'विज्ञानपोषिणी' वाचनालय गया।

"दासन नहीं है यहां ?"

"नहीं।" जयरमन ने उत्तर दिया था।

"वह कहां रहता है ?"

"पता नहीं।"

वासूट्टी जयरामन के चेहरे पर देखकर जरा हंसते हुए चल दिया। उसके चलते समय लोगों ने उसे रास्ता दे दिया। बहुत सारे लोग अदब से खड़े रहे। वैसे खड़े लोगों के हाथों में एक, दो या पांच के नोट पड़ते रहे। समुद्र-तट पर सफेद चट्टान को देखते बैठे दासन के पास वह जा खड़ा हुआ।

"दासन, तुमने मुझे पहचाना ?"

"तुम कब आए ?"

"आज।"

दासन को वासूट्टी ने सिर से पैर तक देखा। फिर वह ठंडे होने वाले रेत पर दासन से सटकर बैठ गया।

"मैं सब कुछ जान रहा था। चंद्रिका की कहानी सुनकर मैं फ्रांस में बैठा-बैठा रोया।"

दासन की आंखें तब भी सफेद चट्टान पर ही थीं।

"मैं तुम्हें देखते बैठ नहीं पाता, दासन। मेरे साथ आओ। पहनने के लिए कपड़े न हों तो मैं धोती और कमीज खरीद दूंगा। घर न जाना चाहते हो तो मेरे साथ रहो।"

"वासूट्टी, तुम जाओ।"

"दासन तुम्हें लिए बिना मैं नहीं जाऊंगा।"

"मैं कहां चलूं ? यही है मेरी दुनिया।"

"यह समुद्र-तट ?"

"वासूट्टी, तुमने सफेद चट्टान के बारे में सुना है न ? पैदा होने से पहले हमारी आत्माएं वहीं थीं। चांदी की बनी वह चट्टान जन्म और मृत्यु के बीच विश्राम करने का स्थान है। वहां आत्माओं पर बोझ नहीं होता। तितलियों की तरह हम वहां

विहर सकते हैं। वासूट्टी, सफेद चट्टान मुझे बुला रही है...''

"दासन !"

"जीते-जीते मैं थक गया हूं। सफेद चट्टान पर बिना बोझ के मैं जरा विश्राम करूं।"

फिर दासन बोला ही नहीं। सफेद चट्टान पर टिकी आंखों के साथ वह निश्चल बैठा रहा। उसके कानों में सिर्फ सफेद चट्टान की पुकार ही थी।

समय फिर भी बीतता गया। आजादी के बाद मय्यषी के चेहरे-मोहरे दिन-ब-दिन बदलते ही रहे। इन बदलावों के बीच मय्यषी के लोगों की तकदीर बदलकर लिखी जा रही थी। कुञ्चिरुता आज दावीद साहब का इंतजार नहीं करती। मय्यषी में नई खुली कपड़े की मिल में काम करके उसने अपनी जिंदगी को नया रूप दे दिया। ब्रिगादी चेट्टियप्पा का इंतजार करते-करते नाणी ने आंखें मूंद लीं। देवी ने घरों में काम करते हुए चेट्टियप्पा के बच्चों का पालन-पोषण किया। उण्णिनायर और कुञ्ञाणन काल-यवनिका के पीछे ओझल हो गए।

किसी समय ऊबड़-खाबड़ पड़ी कच्ची सड़कें पक्की बन गईं। कुञ्चक्कन द्वारा जलाई गई तेल की बत्तियां नहीं। बिजली की बत्तियां मय्यषी के लोगों को रोशनी दे रही थीं। बड़े फ्रांसीसी साहब के बंगले में दावत और शराब के दौर नहीं चलते। आधी रात के बाद पीकर नशे में चूर बहादुर लोगों को लादे घोड़ागाड़ियों की पंक्तियां रियूद रसिदाम्स से होकर नहीं गुजरतीं। पीकर मदोन्मत्त होने वाले फौजी सिपाहियों की मय्यषी, शराब बहाने वाली मय्यषी, पतलून और टोपी वालों की मय्यषी—अब दूर की बात हो गई।

लेस्ली साहब का खाली पड़ा बंगला काल के सैनिकों की तरह समुद्र से आई हवा में धराशाई हो गया। बरसात आने पर महान लेस्ली साहब का बंगला निरा खंडहर रह गया।

कुरम्बी अम्मा के समकालीन लेस्ली साहब, चेक्कु मूप्पन, सरषाम आम रेत्रेद कुञ्ञिकण्णेन वगैरह को परलोक सिधारे बरसों बीत गए। इतना ही नहीं, कुञ्चक्कन, कुञ्ञाणन, उण्णिनायर वगैरह कितने ही मय्यषी के लोग भी चल बसे...।

मय्यषी नदी के किनारों पर काल के द्वारा अभिनीत महानाटक का अंत हो रहा था। उस महानाटक की दृक्साक्षी कुरम्बी अम्मा जर्जर हो अपने अंतिम दिन की प्रतीक्षा में पड़ी थीं। कान को छोड़कर उनकी और सभी इंद्रियां बेकाम हो गईं।

आखिर कुरम्बी अम्मा का दिन भी आ पहुंचा। कौसू अम्मा और गिरिजा ने उन्हें पानी पिलाया। दृष्टिहीन आंखें धीरे-धीरे खुलीं। दुर्बल स्वर में उन्होंने पूछा, "जहाज आया !"

"नहीं।"

उनके पैरों के पास बैठी गिरिजा की आंखें डबडबा आईं।

"जहाज अब नहीं आएगा।"

अपनी सुंघनी की डिबिया को कसकर पकड़ने वाला कुरम्बी अम्मा का हाथ ढीला पड़ गया। हाथी-दांत की बनी अनगिनत किस्सों और इतिहासों की गगरी जैसी डिबिया नीचे गिरकर टूट-फूट गई। कीचड़भरी आंखें धीरे-धीरे मुंद गईं। तब दो बूंद आंसू वहां प्रकटे।

पुनीत कन्या मरियम के गिरिजाघर के दुःखसूचक घंटे बज उठे।

मय्यषी नदी के ऊपर सूरज निकलकर ऊपर चढ़ गया। पूरब से बलि खाने वाले कौए मय्यषी की ओर उड़ आए। गिरजाघर सवेरे की घंटियां बज रही थीं।

तब मुंशी दामू ने आंखें खोलीं। दो दिन से वह बेहोश पड़ा था। आंखें खोलकर उसने चारों ओर देखा। आसपास खड़े लोगों को पहचानने में उसे दिक्कत हुई।

"पानी...।"

मुंशीजी के नीले पड़े ओठ हिले। पैरों के पास बैठी कौसू अम्मा ने कप हाथ में लिया। गिरिजा ने पिता का सिर उठाकर थाम लिया। कौसू अम्मा ने चम्मच से पानी लेकर उसका गला तर कर दिया।

मुंशीजी के पैर बर्फ की तरह ठंडे पड़ते जा रहे थे। उसकी आंखें फिर एक बार चारों ओर घूमीं, मानो वे किसी की खोज में हों। आखिर मुंशीजी की निगाह अच्चू पर जा टिकी।

"दासन ...!"

हाथ की अंगुलियों से शीत ऊपर चढ़ती जा रही थी।

"दासन को बुलाओ। बोलो कि मैं हार गया...।"

फिर कुछ भी कहे बिना वे आंखें मींचे लेटे रहे। अच्चू बाहर निकला। रास्ते में सामने आए किसी पर भी ध्यान दिए बिना वह जल्दी-जल्दी चला। उसके ओठों पर सिर्फ एक ही प्रार्थना थी—दासन के आने से पहले मुंशीजी आंखें नहीं मूँदें ...!

अच्चू को दासन का ठिकाना मालूम था। दौड़ता-हांफता वह समुद्र-तट पर पहुंचा। अचानक उसके पैर निश्चल हो खड़े हो गए।

जहां दासन रोज बैठा करता था, वह जगह खाली पड़ी है।

अनंत विशालता में फैले समुद्र में बहुत दूर तक आंसू की एक बड़ी बूंद जैसी सफेद चट्टान दीख रही थी। वहां तब भी आत्माएं तितलियों की तरह विहर रही थीं। उन तितलियों में एक था दासन।

मुद्रक : ब्यूटी प्रिंट, 10/8020 मुलतानी ढांडा, पहाड़गंज, नई दिल्ली-55